इकाई 2 अनुसंधान में नैतिकता
(Ethics in Research)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

2.2 उद्देश्य (Objectives)

2.3 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण: अर्थ एवं परिभाषाएँ(Clarification of the concept of ethics: meaning and definitions)

2.4 सामजिक शोध में नैतिक मुद्दे (Ethical issues in social research)

2.5 शोध में नैतिक मुद्दे की दृष्टि से रखी जाने वाली सावधानियाँ (Precautions to be taken in view of ethical issues in research)

2.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

2.7 सारांश (Summary)

2.8 शब्दावली (Glossary)

2.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर (Answer to Practice Questions)

2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

2.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

2.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध नीतिशास्त्र (Ethics) से है। इसे परम शुद्ध विज्ञान माना जाता है। इसमें मनुष्य के कर्त्तव्यों एवं अकर्त्तव्यों पर विचार किया जाता है। इसे 'चरित्र का विज्ञान' भी कहा जाता है क्योंकि यह उचित और अनुचित में भेद दिखलाता है। नीतिशास्त्र नैतिक निष्कर्षों की सत्यता से सम्बन्धित है। नैतिक निर्णयों में मनुष्य के सामने अनेक विकल्प होते हैं। इन विकल्पों में तर्क के द्वारा स्पष्टीकरण करने की आवश्यकता होती है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिक निर्णयों पर पहुँचने के लिए तर्कशास्त्र का ज्ञान भी आवश्यक है। वास्तव में, तर्कशास्त्र एवं नीतिशास्त्र दोनों ही दर्शनशास्त्र की प्रमुख शाखाएँ हैं। सभी समूहों, पेशों (Professions) एवं व्यक्तियों को व्यवहार की एक ऐसी सामाजिक, धार्मिक तथा नागरिक संहिता को अपनाना होता है, जो सही (उचित) समझी जाती है। इसी दृष्टि से यह कहा जाता है कि सभी व्यक्तियों अथवा संगठनों को ऐसे विकल्पों का चयन करना होता है जिनका सही (नैतिक) अथवा गलत (अनैतिक) रूप में मूल्यांकन किया जा सके। शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया इसमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसके प्रत्येक सोपान (चरण) में नैतिकता या अनैतिक मुद्दे सामने आते हैं। शोधकर्ता से यह आशा की जाती है कि वह केवल नैतिक मुद्दों को ही महत्त्व प्रदान करे तथा जहाँ तक सम्भव हो सके किसी भी अनैतिक निर्णय या कार्य से बचें।

2.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों को समझाने का प्रयास किया गया है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप-

- ✓ नैतिकता की अवधारणा को समझ पाएँगे।
- ✓ सामाजिक शोध में पाए जाने वाले प्रमुख नैतिक मुद्दों की व्याख्या कर पाएँगे।
- ✓ सामाजिक शोध में नैतिकता बनाए रखने के उपायों अथवा सावधानियों को स्पष्टतया समझ पाएँगे।

2.3 नैतिकता की अवधारणा का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ (Clarification of The Concept of Ethics: Meaning and Definitions)

मानव को सामाजिक प्राणी होने के नाते कुछ सामाजिक मर्यादाओं का पालन करना पड़ता है। समाज की इन मर्यादाओं में सत्य, अहिंसा, परोपकार, विनम्रता एवं सचरित्र आदि अनेक गुण सम्मिलित होते हैं। इन गुणों को यदि हम सामूहिक रूप से एक नाम देना चाहे तो ये सब नैतिकता के अन्तर्गत आ जाते है। नैतिकता एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसमें समाज की लगभग सभी मर्यादाओं का पालन हो जाता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के लिए नैतिकता का सर्वाधिक महत्त्व है। नैतिकता ज्ञान की वह शाखा है जो नैतिक नियमों या संहिताओं से सम्बन्धित होती है। यही नैतिक नियम व्यक्ति के व्यवहार अथवा किसी क्रिया (जिसमें शोध भी सम्मिलित है) का संचालन करते हैं। इसे हम मानव व्यवहार के नैतिक मूल्यों अथवा व्यवहार को संचालित करने वाले नियमों का दर्शनशास्त्रीय अध्ययन भी कह सकते हैं।

प्रत्येक समाज में मनुष्य द्वारा कुछ ऐसे कार्य किए जाते हैं, जिनकी प्रशंसा होती है और कुछ कार्य ऐसे होते हैं, जिनके करने पर वह समाज में घृणा का पात्र बन जाता है। हमारे सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ आदर्श और कुछ निषेध होते हैं। इनका निर्धारण व्यक्ति और समाज के हित को ध्यान में रखकर किया जाता है। उदाहरण के लिए-सत्य बोलना चाहिए, बड़ों का आदर करना चाहिए, असहायों की सहायता करनी चाहिए, चोरी नहीं करनी चाहिए, किसी को सताना नहीं चाहिए आदि-आदि। इन आदर्शों और निषेधों का मूल उद्देश्य व्यक्ति के चरित्र और आचरण का इस प्रकार निर्माण करना है, जिससे कि समाज में शान्ति और व्यवस्था की स्थापना उचित ढंग से हो सके। नैतिकता मानव-जीवन का मार्गदर्शन करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नैतिकता (नैतिक आदर्श) या नैतिक संहिता (Moral Code) किसी बाह्य शक्ति द्वारा नहीं किया जाता, वरन इसके पीछे समाज की शक्ति का हाथ रहता है, जो समाज में कुरीतियों का दमन करती है। सामान्यतया वे नियम ही नैतिक आदर्श कहलाते हैं, जो हमारे चरित्र व आचरणों से सम्बन्धित होते हैं और जिनके पीछे व्यक्तियों

के अन्त:करण व सामाजिक शक्तियों की अभिमति होती है अर्थात् इनके साथ समाज का अनुमोदन जुड़ा होता है। नैतिकता शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा की 'नी' धातु से हुई है जिसका तात्पर्य मार्गदर्शन करना होता है। समाज की मान्यताओं के अनुकूल कार्य करना नैतिक माना जाता है, जबकि उनके विपरीत कार्य करना अनैतिक माना जाता है। ऐसा भी माना जाता है कि नैतिकता शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के "Moralis" शब्द से हुई है जिसका अर्थ 'तौर-तरीका' या 'चाल-चलन', 'चरित्र' अथवा 'उचित व्यवहार' (Proper behaviour) है।

नैतिक आदर्शों अथवा कर्त्तव्यों के रूप में नैतिकता को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है- **मैकाइवर और पेज (MacIver and Page) के अनुसार- "नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा व्यक्ति का अन्तःकरण उसे उचित और अनुचित का बोध कराता है।"** इन विद्वानों के मतानुसार धर्म एवं नैतिकता घनिष्ठ रूप में एक-दूसरे में गुँथे हुए हैं तथा इन दोनों में केवल निर्देशों की सत्ता एवं अनुमोदन के आधार पर ही भेद किया जा सकता है। धर्म नैतिक शिक्षा का उपदेश देता है तथा धर्म द्वारा अनुमोदित नियम नैतिक संहिताएँ कहे जाते हैं। इसीलिए कोई संहिता धार्मिक एवं नैतिक दोनों रूपों में स्वीकृत हो सकती है।

गिस्बर्ट (Gisbert) के अनुसार- "नैतिक नियम, नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है।" उन्होंने जटिल मानवीय क्रियाओं में सामाजिक एवं नैतिक मुद्दों को परस्पर घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित माना है। जिसबर्ट ने नीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र में पारस्परिक सहयोग को महत्त्व प्रदान करने की वकालत की है।

डेविस (Davis) ने लिखा है- "नैतिकता कर्त्तव्य की वह आन्तरिक भावना है जिसमें उचित-अनुचित का विचार सन्निहित हो।" उचित-अनुचित का निर्धारण सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर होता है। इसीलिए प्रत्येक समाज की मूल्य व्यवस्था नैतिकता, धर्म, प्रथाओं, परम्पराओं, विश्वासों जैसे अन्य पहलुओं से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित होती है।

उपर्युक्त विचारों से स्पष्ट है कि नैतिकता द्वारा हमारे आचरण का मूल्यांकन होता है। जो आचरण नैतिक नियमों के अनुसार होते हैं, उसे नैतिक आचरण कहा जाता है और जो इन नियमों के विरुद्ध होता है उन्हें अनैतिक आचरण कहा जाता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर नैतिकता की निम्नलिखित प्रमुख विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं-

1. नैतिक नियम सम्पूर्ण समुदाय द्वारा स्वीकृत होते हैं अर्थात् नैतिकता की प्रकृति सामुदायिक होती है।
2. सामान्य रूप से नैतिकता में तर्कों की प्रधानता पायी जाती है अर्थात् नैतिकता का तार्किकता से गहरा सम्बन्ध होता है।
3. नैतिकता का सम्बन्ध स्वयं समाज से होता है। जिसे समाज अनुचित मानता है, वही अनैतिक भी माना जाता है।
4. नैतिकता एक परिवर्तनशील संकल्पना है, क्योंकि समय एवं स्थान के अनुसार इसमें परिवर्तन होता रहता है।
5. नैतिकता का पालन व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से किया जाता है।
6. नैतिकता का सम्बन्ध व्यक्तियों के चरित्र से होता है।
7. नैतिकता का सम्बन्ध समाज में पाये जाने वाले मान्य सामाजिक मूल्यों से भी होता है। इसीलिए यह माना जाता है कि नैतिकता के पीछे समाज की शक्ति निहित होती है।
8. नैतिकता मुख्य रूप से सत्यता, ईमानदारी और पवित्रता की भावना जैसे मूल्यों पर आधारित होती है।

धर्म और नैतिकता में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि इनमें बहुधा अन्तर करना भी कठिन हो जाता है। **डेविस बेंजामिन और लुईस (Davis, Benjamin and Lewis)** के अनुसार धर्म की सहायता के अभाव में नैतिक आदर्श न तो पूर्ण हो सकते हैं और न ही सफल। **हक्सले, हर्बर्ट स्पेंसर (Huxley, Herbert Spencer)** का भी यही विचार है। उनके अनुसार नैतिक आदर्श तब तक अपनी पूर्णता को नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि उन्हें धर्म की विशेष अभिसमितियों द्वारा अलग नहीं कर लिया जाए।

यह सत्य है कि धर्म और नैतिकता एक-दूसरे के परस्पर निकट प्रतीत होते हैं परन्तु अनेक अवसरों पर धर्म

और नैतिकता में परस्पर संघर्ष भी होता आया है और आज भी हो रहा है। धर्म का स्वरूप रूढ़िवादी है, जबकि नैतिकता की प्रकृति प्रगतिशील होती है। जब समाज में परिवर्तन आता है तो नैतिकता में भी परिवर्तन आने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप धर्म और नैतिकता में संघर्ष छिड़ जाता है। वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप धर्म की अपेक्षा नैतिकता को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा है। अन्य शब्दों में, नैतिकता धर्म को पीछे धकेलती जा रही है। शोषण और दुख के विषय में धर्म का विचार है कि यह ईश्वरीय देन है, परन्तु नैतिकता के अनुसार किसी का शोषण करना और उसे दुःख पहुँचाना अनुचित है। हमारे देश में धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष के अनेक उदाहरण मिलते हैं। विवाह-विच्छेद, सन्तति-निरोध, विधवा-पुनर्विवाह आदि के विरुद्ध धर्म ने अनेक बाधाएँ खड़ी की हुई हैं। एक समय था जबकि स्त्रियों का सती होना हिन्दू धर्म के अनुसार अनिवार्य था, परन्तु नैतिकता की दृष्टि से यह गलत था। इस कारण ही अनेक समाज सुधारकों ने इस धार्मिक कृत्य के विरुद्ध आवाज उठाई। इसी प्रकार अस्पृश्यता को भी धर्म उचित मानता रहा है और उसके बनाए रखने पर बल देता आया है, परन्तु वर्तमान नैतिक दृष्टिकोण इसे पूर्णतया अनुचित ठहरा चुका है।

संक्षेप में, धर्म और नैतिकता के मध्य संघर्ष का मूल कारण धर्म का अन्धविश्वासी और रूढ़ियुक्त होना है। इसके विपरीत, नैतिकता तर्क और विवेक से युक्त है। यह सत्य है कि शिक्षा और सभ्यता के प्रसार के साथ धर्म ने अपने स्वरूप को पर्याप्त सुधारने का प्रयास किया है, परन्तु अभी भी यह पूर्णतया विवेक पर आधारित नहीं हो पाया है।

2.4 सामजिक शोध में नैतिक मुद्दे (Ethical Issues in Social Research)

सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों का सम्बन्ध शोधकर्ता के नैतिक कर्त्तव्यों से है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि इन मुद्दों का सम्बन्ध इस प्रश्न से है कि सामाजिक शोध करते समय शोधकर्ता के लिए क्या उचित है अथवा ऐसी कौन-सी बातें हैं जिनसे उसे बचने की आवश्यकता है। उसे इस बात का ध्यान रखना है कि उसने जिन सूचनादाताओं पर शोध किया है, उनके प्रति उसके कुछ नैतिक कर्त्तव्य हैं। इन नैतिक कर्त्तव्यों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। चूँकि शोध का सम्बन्ध व्यक्तियों से है, अतः इसमें कुछ नैतिक मानकों (Ethical Standards) का पालन करना अनिवार्य है ताकि अध्ययन हेतु चयनित व्यक्तियों (सूचनादाताओं) को कोई नुकसान न हो। चिकित्सा विज्ञान सम्बन्धी शोध मे यह नुकसान अत्यन्त गम्भीर परिणामों वाला हो सकता है क्योंकि यह किसी सूचनादाता या रोगी की मृत्यु तक में प्रतिफलित हो सकता है। इसीलिए सभी देशों में चिकित्सा विज्ञान के व्यावसायिक संगठन (Professional Organization) चिकित्सकों के व्यवहार हेतु नैतिक नियम निर्धारित करते हैं। चिकित्सक को इन नियमों का पालन ना करने पर इस संगठन द्वारा उसकी व्यावसायिक सेवाओं पर प्रतिबन्ध भी लगाया जा सकता है।

अमेरिका जैसे देशों में चिकित्सा विज्ञान के समानन्तर समाजशास्त्र जैसे विषय में भी अमेरिकी समाजशास्त्रीय संघ (American Sociological Association) द्वारा सामाजिक शोध हेतु आचार संहिता (Code of Ethics) निर्धारित की गई है। इस आचार संहिता में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नैतिक दिशा-निर्देश शोध की गोपनीयता और विश्वसनीयता (Privacy and confidentiality) से सम्बन्धित है। शोधकर्ता को अपने सूचनादाताओं के सन्दर्भ में इसे बनाए रखना आवश्यक है। क्षेत्राधारित सर्वेक्षणों में सूचनादाताओं के बारे में गुमनामी (Oblivion) इसी सन्दर्भ में रखी जाती है।

शोधकर्ता द्वारा गोपनीयता एवं विश्वसनीयता कितनी महत्त्वपूर्ण होती है, इसके लिए (Mario Brajuha) नामक शोधकर्ता का उदाहरण दिया जा सकता है। ब्राजुहा सहभागी अवलोकन द्वारा एक रेस्तरां **वेटर (Restaurant waiter)** के रूप में न्यूयॉर्क के लॉंग उपद्वीप में अपना शोध कर रहा था। दुर्भाग्यवश उस रेस्तरां में आग लग गई। पुलिस को आगजनी एवं लूटपाट का शक हुआ तथा उसने दो गवाहों के कानूनी बचाव हेतु ब्राजुहा से उसके फील्ड नोट्स की मांग की। जब उसने इन्हें देने से मना कर दिया तो पुलिस ने उसे जेल में भेज देने तक की धमकी दी। ब्राजुहा ने तब भी इनकार कर दिया तथा अन्ततः दो वर्ष बाद शिकायतकर्ता की मृत्यु पर यह मामला

अदालत द्वारा बन्द कर दिया गया (Brajuha and Hallowell, 1986)

एक अन्य उदाहरण में **रिक स्कार्स (Rik Scarce)** नामक ग्रेजुएट छात्र, जो कि कटरपंथी पर्यावरणविदों का अध्ययन कर रहा था, उसने विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला में दिया। स्कार्स को इसके लिए न्यायालय की अवमानना के दोष में छह महीने के लिए जेल में रहना पड़ा (Monaghan, 1993)

तीसरा उदाहरण समाजशास्त्रियों में अन्यन्त वाद-विवाद का विषय रहा है। **लाउड हम्फ्रीज़ (Laud Humphreys)** ने सार्वजनिक शौचालयों में पुरुष समलैंगिक सेक्स का अध्ययन किया। उसने अपने इस शोध में दो पुरुषों द्वारा सेक्स के कृत्य को करते हुए बाहर से देखा। उसने इन दोनों के लाइसेंस प्लेट पर लिखे नामों के आधार पर उनके घर का पता प्राप्त कर लिया। एक वर्ष पश्चात् उसने छद्मवेश (Disguised) अर्थात् अपने को शोधकर्ता ना बताकर उन दोनों का उनके घर पर जाकर साक्षात्कार किया। अनेक समाजशास्त्रियों एवं अन्य पर्यवेक्षकों ने हमफ्रेज की अपने सूचनादाताओं की गोपनीयता भंग करने के लिए आलोचना की। हमफ्रेज ने यह तर्क दिया कि उसने दोनों के वास्तविक नाम उजागर नहीं किए हैं तथा उनका शौचालय में किया गया यह कृत्य गोपनीय नहीं था क्योंकि यह सार्वजनिक स्थान पर किया गया था (Humphreys, 1975)

सामाजिक शोध में एक अन्य मुद्दा सहमति (Consent) से सम्बन्धित है। अमेरिका में यह परम्परा है कि शोध हेतु चयनित सूचनादाता को सूचित स्वीकृति हेतु एक फॉर्म पर हस्ताक्षर करने होते हैं। इस फॉर्म पर शोध के उद्देश्य तथा सूचनादाता होने के नाते उसके सम्भावित खतरों का वर्णन होता है। यदि शोधकर्ता नाबालिगों पर अध्ययन कर रहा होता है, तो उसे उनके संरक्षकों से सहमति लेनी अनिवार्य है।

यद्यपि सूचित सहमति वास्तविक शोध हेतु एक आवश्यकता है, तथापि इस सहमति से सम्बन्धित अनेक नैतिक मुद्दे हैं। एक बार सहमति पर हस्ताक्षर कर देने के पश्चात् सूचनादाता उत्तर देने हेतु विवश हो जाते हैं तथा न चाहते हुए भी वे इससे इनकार नहीं कर सकते। कई बार सूचनादाताओं को शोध में सम्मिलित होने हेतु पुरस्कार के रूप में 5 से 20 डॉलर भी दिए जाते हैं। यह अनैतिक एवं सूचनादाताओं पर शोध में सहयोग देने हेतु अनुचित दबाव नहीं तो और क्या है बन्दियों के अनेक अध्ययनों में ऐसे नैतिक मुद्दे सामने आए हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी शोध को नैतिकता की दृष्टि से न्यायोचित मानना सदैव इतना सरल नहीं है। इसलिए अमेरिका जैसे देशों में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में ऐसी समितियों का निर्माण किया गया है जो शोध प्ररचनाओं एवं प्रस्तावों का मूल्यांकन कर यह सुनिश्चित करती हैं कि संघीय दिशा निर्देशों (Federal guidelines) का पालन हो रहा है कि नहीं। यह सुनिश्चित करने के बाद ही उस प्ररचना या प्रस्ताव को स्वीकृत किया जाता है। खेद का विषय यह है कि भारत जैसे देश में शोध में नैतिकता बनाए रखने सम्बन्धी न तो राष्ट्रीय स्तर पर और ना ही स्थानीय स्तर पर कोई विशेष ध्यान दिया जाता है। इसीलिए भारतीय विश्वविद्यालयों में हो रहे शोध की गुणवत्ता पर समय-समय पर प्रश्नचिह्न लगाए जाते रहे हैं।

नान लिन (Nan Lin) ने प्रतिवेदन लिखते समय शोधकर्ता के जिन दायित्वों का उल्लेख किया है उनमें नैतिक उत्तरदायित्व को प्रमुख स्थान दिया है। उनका कहना है कि शोधकर्ता को प्रतिवेदन तैयार करते समय अपने नैतिक उत्तरदायित्व को ध्यान में रखना चाहिए जिसमें दो बातें प्रमुख हैं- सूचनादाताओं एवं सहयोगियों का संरक्षण तथा वास्तविक एवं पूर्ण सूचना।

2.5 शोध में नैतिक मुद्दे की दृष्टि से रखी जाने वाली सावधानियाँ (Precautions To Be Taken In View of Ethical Issues In Research)

मुख्य रूप से सामाजिक शोध में निम्नलिखित मुद्दों को प्रमुख माना जाता है-

1. शोधकर्ता का सर्वप्रथम यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराए। उसे सूचनादाता को सूचित करना होता है कि इस शोध के क्या उद्देश्य हैं, उत्तरदाताओं को क्या लाभ हो सकता है तथा सूचना देने में उन्हें किस प्रकार के खतरों का सामना करना पड़ सकता है। अधिकांश विद्वान् इस

सूचित स्वीकृति (Informed consent) को नैतिक मुद्दा मानते हैं। यदि सामग्री (आँकड़ों) का संकलन प्रश्नावली से किया जा रहा है, तो सहगामी पत्र में इन सबका उल्लेख होना अत्यन्त अनिवार्य है। यदि सूचनादाता के मन में शोध के बारे में किसी प्रकार का सन्देह होगा तो वह निश्चित रूप से सूचना देने में आनाकानी करेगा अथवा भ्रमित करने वाली सूचना देगा।

2. शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि किसी भी सूचनादाता द्वारा दी गई व्यक्तिगत सूचना को उसके नाम से सार्वजनिक न करे। शोधकर्ता को इस विश्वसनीयता (Confidentiality) के बारे में अति सचेत रहना चाहिए। सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त कर दिया जाना चाहिए कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसको किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा।
3. सामाजिक शोध में एक प्रमुख नैतिक मुद्दा गोपनीयता (Privacy) से सम्बन्धित है। वास्तव में, यह मुद्दा विश्वसनीयता से जुड़ा हुआ है। सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखना शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है। इन्हें सार्वजनिक करने में सूचनादाताओं का नुकसान हो सकता है। उदाहरणार्थ-यदि कोई शोधकर्ता समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं पर शोध कर रहा है, तो सूचनादाता की पहचान बताना अनैतिकता माना जाएगा। कोई भी समलिंगी यह नहीं चाहेगा कि किसी अन्य को यह पता चले कि वह समलिंगी है। इसी भाँति, कोई भी महिला यह नहीं चाहेगी कि उसके पड़ोसियों अथवा मौहल्ले के अन्य लोगों या रिश्ते-नातेदारों को इसका पता चले। यदि शोधकर्ता वैयक्तिक अध्ययन में जनकलद्ध द्वारा अपनी समस्या को स्पष्ट करने का प्रयास कर रहा है, तो उसे समलिंगियों अथवा घरेलू हिंसा से ग्रसित महिलाओं का उल्लेख काल्पनिक नाम से करना होता है। उनके वास्तविक नाम उजागर करना उनकी बदनामी का कारण हो सकते हैं।
4. शोधकर्ता को सूचनादाताओं को शारीरिक या मानसिक कष्ट (Physical or mental distress) देने से बचना चाहिए। यह उसका नैतिक कर्त्तव्य है कि उसके द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों से सूचनादाताओं को किसी प्रकार का मानसिक कष्ट न हो। इसीलिए यह कहा जाता है कि साक्षात्कार के समय अथवा साक्षात्कार अनुसूची में सम्मिलित प्रश्नों को पूछते समय शोधकर्ता को बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। उसका यह निरन्तर प्रयास होना चाहिए कि सूचनादाता में किसी प्रकार की हीन भावना विकसित न हो। यह शोधकर्ता का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह सूचनादाताओं से स्वयं सम्पर्क करे। कई बार ऐसा भी होता है कि अनेक बार जाने पर सूचनादाता गन्तव्य स्थान पर नहीं मिलता है। शोधकर्ता को सदैव यह सोचना चाहिए कि सूचनादाता उसके अधीन कार्य करने वाले कर्मचारी नहीं हैं। अतः उनसे समय लेकर उनसे मिलने में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए।
5. यदि शोध प्रायोजित (Sponsored) है तो इसका प्रायोजक शोध के निष्कर्षों को अपने हितों की पूर्ति हेतु तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करता है। इसीलिए शोधकर्ता को प्रायोजक से इस सम्बन्ध में अनुबन्ध करना चाहिए तथा यदि सम्भव हो तो सूचनादाताओं को शोध के प्रायोजक का पता नहीं चलना चाहिए। चुनावों के समय परिणाम आने से पहले जो सर्वेक्षण टेलीविजन पर अनेक चैनलों द्वारा दर्शाए जाते हैं, उन पर बहुधा प्रायोजित होने का आरोप लगाया जाता है। जिस दल को वे आगे दिखाते हैं उसके विरोधी दल यह कहने में संकोच नहीं करते कि यह कार्य किसी विशेष राजनीतिक दल ने पैसे देकर करवाया है। 2017 के प्रारम्भ में उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में भारतीय जनता पार्टी की जीत के बारे में जितने भी ओपिनियन पोल आए थे, उन पर समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पार्टी तथा कांग्रेस ने प्रायोजित होने का आरोप लगाया था। चुनाव के परिणाम आने पर भारतीय जनता पार्टी की जीत का सभी को पता चल गया, चाहे उन्हें सीटें अनुमान से कहीं अधिक मिली थी।
6. शोधकर्ता का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वह संकलित सामग्री को किसी प्रकार से तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत ना करे। ना तो उसे इस मामले में किसी प्रकार की लापरवाही करनी चाहिए और ना ही पक्षपातपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे बचने हेतु अध्ययन के निष्कर्षों की जाँच हेतु शोध की पुनरावृत्ति एवं सहयोगियों की राय लिया जाना अनिवार्य है। वैज्ञानिक कदाचार एवं धोखा (Scientific Misconduct an Fraud) एक ऐसी अनैतिकता है जिससे शोधकर्ता को सदैव बचना चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो अन्य लोगों द्वारा किए गए शोधों के आधार पर कदाचार एवं धोखे से सम्बन्धित वास्तविकता सामने आ सकती है।

7. शोधकर्ता को शोध करते समय एवं प्रतिवेदन तैयार करते समय मूल्य-निरपेक्ष होना चाहिए। जैसे समाजशास्त्रियों ने अपने पद्धतिशास्त्र में मूल्य-निरपेक्षता को प्रमुख स्थान दिया है। उन्होंने ज्ञान के निर्माण पर बल दिया न कि उसे व्यवहार में लागू करने पर। इसके विपरीत, का कहना है कि शोधकर्ता को दलितों एवं गरीबों के विजेता (Champion) के रूप में अपना कार्य करना चाहिए। शोध से इन वंचित वर्गों को किसी प्रकार का नुकसान नहीं होना चाहिए। इसी सन्दर्भ में ने रचनात्मक शोध की बात कही है। वस्तुतः आधुनिक युग में वैज्ञानिक समर्थन (Scientific Advocacy) का होना किसी भी शोध के लिए अनिवार्य माना जाता है।शोधकर्ता को अतिसंवेदनशील वर्गों का ध्यान रखना चाहिए। शोध से सम्बन्धित किसी भी कार्य में उन पर कोई दबाव या जोर-जबरदस्ती नहीं की जानी चाहिए। अतिसंवेदनशील वर्गों (Protecting Vulnerable Clients) में इसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। जितने भी अध्ययन मद्यपान तथा मादक द्रव्य व्यसन के प्रयोग पर हुए हैं, उनमें शोधकर्ता का यह प्रयास रहा है कि अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचे।
8. ऐसे ही युवा वर्ग को अतिसंवेदनशील माना जाता है। इसलिए इस वर्ग से सम्बन्धित किए जाने वाले शोध में सावधानी रखी जानी आवश्यक है। युवा वर्ग में एड्स जैसे रोगों की जानकारी हेतु जब शोध के निष्कर्ष बताए जाते हैं, तो इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि एड्स के कारण उनमें सेक्स के बारे में उत्सुकता पैदा ना हो। एड्स के कारणों की जानकारी हेतु भी शब्दों का चयन बड़ी सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए।
9. शोध के निष्कर्षों को किसी भीउपचार हेतु प्रयोग में लाने से पहले इस बारे में आश्वस्त होना अनिवार्य है कि निष्कर्ष विश्वसनीय हैं। यदि निष्कर्षों के बारे में थोड़ा-बहुत भी सन्देह है तो इन्हें उपचार हेतु स्थगित रखा जाना चाहिए। चिकित्सा सम्बन्धी विज्ञान में होने वाले शोध में थोड़ा-सा भी सन्देह होने पर शोध के उद्देश्यों हेतु उपचार को स्थगित रखना (Withholding treatment for research purposes) एक परम नैतिक कर्तव्य माना जाता है। चिकित्सा विज्ञान में कोई भी अविश्वसनीय कार्य रोगियों के जीवन के लिए खतरा पैदा कर सकता है। सामाजिक शोध में नैतिकता को बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से प्रत्येक शोध में निम्नलिखित सावधानियाँ रखी जानी आवश्यक मानी जाती हैं-

A. वैज्ञानिक शोध में ईमानदारी (Honesty) बनाए रखने का प्रयास करना चाहिए। सामग्री, परिणामों, पद्धतियों, कार्य-प्रणालियों एवं प्रकाशन स्थिति का ईमानदारी से उल्लेख किया जाना चाहिए। सामग्री का जाली एवं असत्य निर्माण नहीं करना चाहिए और न ही इसे मिथ्या अर्थ में प्रस्तुत करना चाहिए। अपने सहयोगियों, शोध प्रायोजकों एवं जनता को धोखा देने से बचना चाहिए।

B. शोध में सामग्री के विश्लेषण, व्याख्या (निर्वचन), मूल्यांकन, वैयक्तिक निर्णयों सम्बन्धी पक्षपात से बचना चाहिए। आत्मप्रतारणा (Self-deception) से बचना चाहिए अथवा इसे कम से कम रखने का प्रयास करना चाहिए। शोध को प्रभावित करने वाले व्यक्तिगत एवं वित्तीय हितों की स्पष्ट रूप में घोषणा करनी चाहिए। ऐसा करने से शोध में वस्तुनिष्ठता (Objectivity) आती है।

C. शोध से सम्बन्धित किए गए अपने वादों एवं अनुबन्धों का पालन करना चाहिए। ईमानदारी के साथ शोध कार्य करना चाहिए तथा विचारों एवं कार्यों की स्थिरता हेतु सदैव प्रयासरत रहना चाहिए। इससे शोध की अखण्डता (Integrity) सुनिश्चित होती है।

D. शोध में की जाने वाली लापरवाह त्रुटियों एवं असावधानियों से बचना चाहिए, अपने एवं अपने सहयोगियों के कार्यों का समीक्षात्मक परीक्षण करना चाहिए, सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया का ठीक प्रकार से रिकॉर्ड रखना चाहिए अर्थात् सामग्री संकलन, शोध प्ररचना तथा एजेंसियों या जर्नलों से पत्राचार सुरक्षित रखना चाहिए। इससे शोध में सतर्कता (Carefulness) बनी रहती है।

E. सामग्री, परिणामों, विचारों, यन्त्रों (प्रविधियों), संसाधनों को अन्य लोगो के साथ साझा करके शोध में खुलापन बनाए रखना चाहिए। साथ ही शोधकर्ता को अपनी आलोचनाएवं नवीन विचारों हेतु तैयार रहना चाहिए।

F. शोधकर्ता को लाइसेंस (पेटेण्ट) एवं सर्वाधिकार (कॉपीराइट) का आदर करना चाहिए। बिना अनुमति के अप्रकाशित

सामग्री पद्धतियों अथवा परिणामों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अन्य विद्वानों की शोध में प्रयुक्त सामग्री को सदैव आदर सहित अभिस्वीकृति दी जानी चाहिए तथा सामग्री को दूसरों के ग्रन्थों से चोरी नहीं करना चाहिए।

G. शोधकर्ता को प्रकाशित कराने अथवा ग्राण्ट प्राप्ति हेतु भेजे गए शोधपत्रों, व्यक्तिगत रिकॉर्ड, व्यापार एवं सैन्य राज (Militar secrets) तथा सूचनादाताओं के रिकॉडों की गोपनीयता (Confidentiality) को बनाए रखना चाहिए।

H. शोध का प्रकाशन केवल अपने स्वयं के कैरियर को आगे बढ़ाने के साथ-साथ ज्ञान के प्रचार-प्रसार हेतु भी किय जाना चाहिए। शोध को व्यर्थ तथा किसी रूप में बार-बार एक ही बात कहने हेतु प्रकाशित करने से बचना चाहिए। अन्य शब्दों में उत्तरदायी प्रकाशन (Responsible Publication) को ही प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

I. शोध का प्रशिक्षण देने वाले अध्यापकों एवं विशेषज्ञों को छात्रों को शोध की बारीकियाँ समझाते समय अनुभवी परामर्शदाता (Responsible mentoring) के रूप में कार्य करना चाहिए। उनकी भलाई का ध्यान रखना तथा उन्हें सही निर्णय लेने का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। साथ ही अपने छात्रों एवं सहयोगियों के प्रति गैर-भेदभाव (Non-discrimination) की भावना होनी चाहिए।

J. शोध द्वारा सामाजिक अच्छाई का प्रचार-प्रसार तथा सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का प्रयास करना चाहिए। शोधकर्ता में अपने विषय तथा समाज के मानकों के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व होना आवश्यक है।

ग्रेट ब्रिटेन में आर्थिक एवं सामाजिक शोध परिषद् (Economic and Social Research Council) ने 2015 में शोध नैतिकता के लिए फ्रेमवर्क (Framework for Research Ethics) प्रकाशित किया है।

यह परिषद् शोध हेतु एक अग्रणी एवं महत्त्वपूर्ण संस्थान है। इस फ्रेमवर्क में निम्नलिखित छह दिशानिर्देशों को सम्मिलित किया गया है-

1. शोध का आयोजन, मूल्यांकन एवं प्रारम्भ अखण्डता, गुणवत्ता तथा पारदर्शिता सुनिश्चित करने हेतु होना चाहिए।
2. शोध में सम्मिलित कर्मचारियों एवं प्रतिभागियों को सामान्यतः शोध के उद्देश्यों, पद्धतियों एवं इसके सम्भावित प्रयोग के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। इसमें प्रतिभागिता के खतरों के बारे में भी उन्हें पता होना चाहिए।
3. शोध प्रतिभागियों द्वारा दी गई सूचनाओं की गोपनीयता तथा प्रतिभागियों की गुमनामी (नाम को गुप्त रखना) को सुनिश्चित रखा जाना चाहिए।
4. शोध प्रतिभागियों (सूचनादाताओं) को शोध में बिना किसी दबाव एवं लालच के स्वेच्छा से भाग लेना चाहिए।
5. सदैव शोध प्रतिभागियों के हितों की रक्षा की जानी चाहिए तथा यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि उन्हें किसी भी रूप में नुकसान ना हो।
6. शोध की स्वायत्तता सुस्पष्ट होनी चाहिए तथा यदि हितों में किसी प्रकार टकराव है तो वह स्पष्ट होना चाहिए।

इस परिषद् के अनुसार शोध में नैतिकता बनाए रखना शोधकर्ता तथा उसके संस्थान का उत्तरदायित्व है। शोध संस्थान / संगठन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उपर्युक्त दिशानिर्देशों का पालन हो रहा है या नहीं। दिशानिर्देशों का पालन होने की स्थिति में ही शोध प्ररचना अथवा प्रस्ताव का अनुमोदन किया जाना चाहिए। भारत में भी अनेक कृषि विश्वविद्यालयों ने शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता को बनाए रखने को शोध समितियों का गठन किया है। इन समितियों के माध्यम से ही सभी शोध एवं शोध पत्र अन्तिम रूप से अनुमोदित होते हैं। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि कृषि विश्वविद्यालयों का गठन अमेरिकी पद्धति पर आधारित है तथा इनमें शिक्षण के साथ-साथ विस्तार एवं शोध को अत्यधिक महत्त्व दिया जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि सभी विश्वविद्यालयों को शोध की गुणवत्ता एवं नैतिकता हेतु ऐसी शोध समितियों का गठन करना चाहिए।शोध की सम्पूर्ण प्रक्रिया ऊपर से जितनी सरल दिखाई देती है, वास्तव में यह उतनी ही जटिल है। इसके प्रत्येक सोपान (चरण) मे वस्तुनिष्ठता-व्यक्तिनिष्ठता, नैतिकता-अनैतिकता, वैज्ञानिकता-अवैज्ञानिकता, स्वहित-समाज के हित सम्बन्धी अनेक मुद्दों का सामना करना पड़ता है। आधुनिक युग में चिकित्सा विज्ञान में हो रहे शोध की भाँति समाजशास्त्र सहित अन्य सामाजिक विज्ञानों में भी इन मुद्दों की ओर काफी ध्यान दिया जाने लगा है। समाजशास्त्र में शोध में नैतिकता का सम्बन्ध शोध की आचार संहिता को अपनाने से है। शोध में गोपनीयता, विश्वसनीयता,

सूचित सहमति आदि को लेकर कुछ निर्णय लेने आवश्यक हैं जिससे शोध के प्रतिभागियों के हितों को किसी प्रकार का नुकसान न हो। अनेक देशों में प्रत्येक विषय में उससे सम्बन्धित व्यावसायिक संगठनों द्वारा शोध में नैतिकता बनाए रखने हेतु दिशानिर्देश प्रतिपादित किए गए हैं। इससे ना केवल शोध की गुणवत्ता बनी रहती है अपितु अनैतिकता भी कम-से-कम होती है। आशा है कि पाठ्य-सामग्री के अध्ययन के पश्चात आप शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली सावधानियों को समझ गए होंगे।

नैतिकता (नैतिक आदर्श) नियमों की वह व्यवस्था है जो अच्छे और बुरे से सम्बद्ध है तथा जिसका अनुभव अन्तरात्मा द्वारा होता है। सूचनादाताओं को शोध से सम्बन्धित पूरी जानकारी उपलब्ध कराकर उनकी शोध में सहभागिता सुनिश्चित करने को सूचित स्वीकृति कहा जाता है।

इससे अभिप्राय सूचनादाता को पूरी तरह से यह विश्वस्त करने से है कि उसके द्वारा दी गई सूचना केवल शोध कार्य हेतु ही प्रयोग में लायी जाएगी तथा इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए सूचनादाता के नाम से प्रयोग में नहीं लाया जाएगा। नैतिकता की दृष्टि से इससे अभिप्राय शोधकर्ता द्वारा सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचनाओं को गोपनीय रखने से है।

2.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. सामाजिक शोध में नैतिकता के मुद्दे का उद्देश्य शोधकर्ता द्वारा ..... का पालन करना होता है। (नैतिक कर्तव्य / अनैतिक)
2. अनुसंधान में प्रतिभागियों की ..... का सम्मान करना शोधकर्ता की जिम्मेदारी है। (गोपनीयता / सामाजिकता)
3. यदि कोई शोधकर्ता प्रतिभागियों को मानसिक या शारीरिक कष्ट पहुँचाता है, तो यह ..... माना जाएगा। (अनैतिक / सामान्य)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. सामाजिक शोध में नैतिकता का पालन केवल शोधकर्ता के व्यक्तिगत कर्तव्य से संबंधित होता है।
2. सूचित सहमति का मतलब है कि शोधकर्ता को प्रतिभागियों को पूरी जानकारी देना और उनका सहमति प्राप्त करना।

2.7 सारांश (Summary)

इस अध्याय में सामाजिक अनुसंधान में नैतिकता के महत्व और उसके विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है। नैतिकता अनुसंधान में समाज के स्वीकार्य मूल्यों और आदर्शों के अनुसार कार्य करने का मार्गदर्शन देती है, और यह सुनिश्चित करती है कि शोधकर्ता अपने कर्तव्यों को सही ढंग से निभाएं। प्रमुख नैतिक सिद्धांतों में सूचित सहमति, गोपनीयता और निजता, हानि से बचाव, धोखाधड़ी से बचाव, और ईमानदारी शामिल हैं। शोधकर्ताओं का यह कर्तव्य है कि वे प्रतिभागियों को अध्ययन के उद्देश्यों और संभावित खतरों के बारे में पूरी जानकारी दें, उनकी पहचान और जानकारी को गोपनीय रखें, और उन्हें मानसिक या शारीरिक कष्ट से बचाएं। इसके अलावा, कमजोर वर्गों जैसे बच्चों और मानसिक रूप से अस्वस्थ लोगों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि उनका शोषण न हो। अध्याय में यह भी बताया गया है कि विभिन्न अनुसंधान संस्थाएँ जैसे अमेरिकी समाजशास्त्र संघ और आर्थिक और सामाजिक अनुसंधान परिषद (ESRC) नैतिक दिशा-निर्देश जारी करती हैं, ताकि अनुसंधान निष्पक्ष, पारदर्शी और प्रतिभागियों के अधिकारों का सम्मान करने वाला हो। कुल मिलाकर, यह अध्याय यह स्पष्ट करता है कि अनुसंधान में नैतिकता का पालन केवल कानूनी जिम्मेदारी नहीं, बल्कि एक सामाजिक जिम्मेदारी भी है, जो शोधकर्ताओं को अपने कार्य में ईमानदारी और सामाजिक जागरूकता बनाए रखने की आवश्यकता का एहसास कराता है।

2.8 शब्दावली (Glossary)

- **सामाजिक शोध (Social Research) :** जब यह शोध सामाजिक क्षेत्र में किया जाता है तो उसे सामाजिक शोध कहते हैं। यह सामाजिक शोध या अनुसंधान सामाजिक जीवन, समाज से जुड़ी घटनाओं और सामाजिक संरचना तथा सामाजिक जटिलताओं से संबंधित हो सकता है। सामाजिक शोध एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज में घटित होने वाली किसी भी घटना के कारण की खोज की जाती है तथा उसके परिणामों का ज्ञान प्राप्त किया जाता है।
- **नैतिकता (Ethics) :** नैतिकता शब्द की उत्पत्ति संस्कृत शब्द 'नी' हुई है जिसका अर्थ है मार्गदर्शन करना। समाज की मान्यताओं के अनुरूप कार्य करना नैतिक तथा उसके विपरीत कार्य करना अनैतिक माना जाता है। यह भी माना जाता है कि नैतिकता शब्द लैटिन शब्द "Moralis" से लिया गया है जिसका अर्थ है 'तौर-तरीका' या 'चाल-चलन', 'चरित्र' या 'उचित व्यवहार'।
- **शोधकर्ता (Researcher)-** शोधकर्ता को अध्ययन के किसी विशेष क्षेत्र में व्यवस्थित और वैज्ञानिक जांच करने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। शोधकर्ता शोध प्रश्नों का उत्तर देने या परिकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए डेटा एकत्र करने और उसका विश्लेषण करने के लिए विभिन्न तकनीकों का उपयोग करते हैं। वे अध्ययन डिजाइन करने, डेटा एकत्र करने, डेटा का विश्लेषण करने और परिणामों की व्याख्या करने के लिए जिम्मेदार होते हैं।

2.9 अभ्यास प्रश्नों का उत्तर (Answer to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. नैतिक कर्तव्य 2. गोपनीयता 3.अनैतिक

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. असत्य 2. सत्य

2.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. J. H. Jones (1981), Bad Blood : The Tuskegee Syphilis Experiment, Free Press, New York.
2. Kingsley Davis (1949), Human Society, The Macmillan Company, New York.
3. L. Humphreys (1975), Teamroom Trade : Impersonal Sex in Public Places, Aldine, Chicago,
4. IL. M. Brajuha and L. Hallowell (1986), Legal Intrusion and the Politics of Fieldwork : The Impact of the Brajuha Case, Urban Life, Vol. 14, pp. 454–478.
5. P. Gisbert (1989), Fundamentals of Sociology, Orient Longman, Bombay.
6. P. Monaghan (1993), Sociologist is jailed for refusing to testify about research subject, Chronicle of Higher Education, Vol. 39, P. 10.
7. R. M. MacIver and C. H. Page (1962), Society : An Introductory Analysis, Holt, Rinehart and Winston, New York.

2.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

2.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. नैतिकता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों की विवेचना कीजिए।
2. नैतिकता को परिभाषित कीजिए तथा सामाजिक शोध में गोपनीयता और विश्वसनीयता सम्बन्धी नैतिक मुद्दों को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक शोध के प्रमुख नैतिक मुद्दों पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
4. सामाजिक शोध में नैतिक मुद्दों की दृष्टि से रखी जाने वाली प्रमुख सावधानियों का उल्लेख कीजिए।
5. नैतिकता की अवधारणा पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
6. सामाजिक शोध में नैतिकता की क्या आवश्यकता है? इसे बनाए रखने के प्रमुख उपायों की संक्षिप्त विवेचना कीजिए।

इकाई 3 अनुसन्धान में वस्तुनिष्ठाता और व्यक्तिनिष्ठता
(Objectivity & Subjectivity in Research)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

3.2 उद्देश्य (Objectives)

3.3 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ (Clarification of The Concepts of Objectivity and Subjectivity: Meaning and Definitions)

3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार (Weber's Views On The Problem of Objectivity and Subjectivity)

3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठाता की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Objectivity in Social Research)

3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय (Measures to Maintain Objectivity in Social Research)

3.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

3.8 सारांश (Summary)

3.9 शब्दावली (Glossary)

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

3.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक विज्ञान दो तरह के होते है- **प्रथम**, प्राकृतिक विज्ञान तथा **द्वितीय,** सामाजिक विज्ञान। प्राकृतिक विज्ञान प्रकृति अथवा प्राकृतिक घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं, जबकि सामाजिक विज्ञान समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करते हैं। समाजशास्त्र ही एकमात्र सामाजिक विज्ञान नहीं है अपितु अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान, समाज-कार्य, मानवशास्त्र तथा इतिहास इत्यादि भी सामाजिक विज्ञान हैं। अतः समाजशास्त्र सामाजिक विज्ञानों में से एक विज्ञान है। सामाजिक विज्ञानों में प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति प्रामाणिकता लाना कठिन है। समाज विज्ञानों के नियम प्राकृतिक विज्ञानों के नियमों की भाँति अटल नहीं होते, वे तो सामाजिक व्यवहार के सम्बन्ध में सम्भावित प्रवृत्ति को प्रकट करते हैं। ऐसी स्थिति के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं, जैसे- सामाजिक प्रघटना का स्वभाव, ठोस मापदण्डों का विकसित न होना आदि। इन्हीं कारणों में एक प्रमुख समस्या वस्तुनिष्ठता की भी है। किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन एवं अनुसन्धान की सफलता की पूर्वपेक्षित शर्त वस्तुनिष्ठता है। इसके अभाव में शोध के द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता सन्दिग्ध हो जाती है। यही कारण है कि समाजशास्त्र सहित सभी समाज विज्ञानों में प्रारम्भ से ही इस समस्या पर विचार किया जाता रहा है।

सामाजिक शोध का उद्देश्य किसी घटना का वैज्ञानिक विधि द्वारा अध्ययन करके उसे यथार्थ रूप से समझना है। यह उद्देश्य तभी सम्भव हो सकता है यदि शोधकर्ता घटना के अध्ययन को अपने विचारों से प्रभावित ना होने दे। अन्य शब्दों में, घटना के वस्तुनिष्ठ अध्ययन द्वारा ही उसे यथार्थ रूप से समझा जा सकता है। यदि विभिन्न शोधकर्ता एक घटना का अध्ययन कर एक समान निष्कर्ष निकालते हैं, तो हम उस अध्ययन को वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं। यदि उनके निष्कर्षों में काफी अन्तर है, तो इसका अर्थ यह है कि शोधकर्ताओं के विचारों ने अध्ययन को प्रभावित किया है, क्योंकि जब घटना एक है तो उसके अध्ययन के बारे में एक समान निष्कर्ष होने चाहिए।

3.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई में वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही वस्तुनिष्ठता की समस्याओं, इसकी आवश्यकता तथा इसे बनाए रखने के उपायों को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप-

- ✓ वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं को समझ पाएँगे।
- ✓ वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित समस्याओं की व्याख्या कर पाएँगे।
- ✓ वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचारों को समझ पाएँगे।
- ✓ सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता एवं महत्त्व को स्पष्टतया समझ पाएँगे।
- ✓ सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों को समझ पाएँगे।

3.3 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ (Clarification of The Concepts of Objectivity and Subjectivity: Meaning and Definitions)

क्या सामाजिक शोध पूर्णतः वस्तुनिष्ठ हो सकता है या नहीं? यह प्रारम्भ से ही सामाजिक विज्ञानों में एक वाद-विवाद एवं मार्मिक चर्चा का विषय रहा है और आज भी इसके बारे में मतैक्य का अभाव पाया जाता है। कुछ विद्वानों का कहना है कि सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाओं क प्रकृति ही ऐसी है कि इनका पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अध्ययन किया ही नहीं जा सकता, जबकि अनेक अन्य विद्वानों का विचार है कि समाजशास्त्रीय अध्ययनों में वस्तुनिष्ठता रखना सम्भव है। दुर्खीम ने इस बात का दावा ही नहीं किया अपितु धर्म, श्रम-विभाजन एवं आत्महत्या जैसे सामाजिक तथ्यों का वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने में सफलता भी प्राप्त की। परन्तु फिर भी अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति प्राकृतिक घटनाओं की प्रकृति से भिन्न है जिसके कारण इनका पूर्ण वस्तुनिष्ठ अध्ययन सम्भव नहीं है। हाँ, शोधकर्ता अनेक सावधानियों का प्रयोग कर अपने विचारों के प्रभावों अर्थात् व्यक्तिनिष्ठता या व्यक्तिपरकता (Subjectivity) को कम-से-कम करने का प्रयास कर सकता हैं ।

वस्तुनिष्ठता का अभिप्राय घटना का यथार्थ या वास्तविक रूप में अर्थात् उसी रूप में, जिसमें वे हैं, वर्णन करना है। यह एक तरह से वैज्ञानिक भावना है जो शोधकर्ता को उसके पूर्व दृष्टिकोणों से उसके अध्ययन को प्रभावित करने से रोकती है। यदि कोई शोधकर्ता किसी घटना का वर्णन उसी रूप से करता है जिसमें कि वह विद्यमान है, चाहे उसके बारे में शोधकर्ता के विचार कुछ भी क्यों ना हों, तो हम इसे वस्तुनिष्ठ अध्ययन कह सकते हैं।

दैनिक जीवन की भाषा में वस्तुनिष्ठ शब्द का आशय पूर्वाग्रह-रहित, तटस्थ या केवल तथ्यों पर आधारित होता है। किसी भी वस्तु के बारे में वस्तुनिष्ठ होने के लिए हमें वस्तु के बारे में अपनी भावनाओं या मनोवृत्तियों को अवश्य अनदेखा करना चाहिए। इसीलिए वस्तुनिष्ठता तथ्यों को वैसे ही प्रस्तुत करने में सहायक है जैसे कि वे हैं। जब एक भू-वैज्ञानिक चट्टानों का अध्ययन करता है अथवा एक वनस्पतिशास्त्री पौधों का अध्ययन करता है तो उनके व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या मान्यताएँ उनके अध्ययन को प्रभावित नहीं करती हैं। वे स्वयं उस संसार का हिस्सा नहीं होते जिनका वे अध्ययन करते हैं। इसके विपरीत, समाजशास्त्री एवं अन्य समाज वैज्ञानिक उस संसार का अध्ययन करते हैं जिनमें वे स्वयं रहते हैं। इसलिए उनके द्वारा किया जाने वाला अध्ययन 'व्यक्तिनिष्ठ' होता है। उदाहरणार्थ, पारिवारिक सम्बन्धों का अध्ययन करने वाला समाजशास्त्री भी स्वयं एक परिवार का सदस्य होता है तथा उसके अनुभवों का उसके अध्ययन पर प्रभाव पड़ सकता है। हो सकता है कि वह पारिवारिक सम्बन्धों के बारे में अपने कुछ मूल्य अथवा पूर्वाग्रह रखता हो। इसीलिए सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक प्रमुख समस्या है। प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्नलिखित प्रकार से दी हैं-

कैर (Carr) के अनुसार- "सत्य की वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय है कि दृष्टि विषयक जगत किसी व्यक्ति के प्रयासों, आशाओं या भय से स्वतन्त्र एक वास्तविकता है, जिसे हम सहज ज्ञान एवं कल्पना से नहीं बल्कि वास्तविक अवलोकन के द्वारा प्राप्त करते हैं।"

ग्रीन (Green) के अनुसार- "वस्तुनिष्ठता प्रमाण का निष्पक्षता से परीक्षण करने की इच्छा एवं योग्यता है।"

फेयरचाइल्ड (Fairchild) "वस्तुनिष्ठता का अर्थ तथ्यों को पक्षपात तथा उद्देश्य के आधार पर नहीं, बल्कि प्रमाण एवं तर्क के आधार पर बिना किसी सुझाव या पूर्व-धारणाओं के, सही पृष्ठभूमि में देखने की योग्यता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि वस्तुनिष्ठता किसी घटना का निष्पक्ष एवं तटस्थ रूप से अध्ययन करने की भावना एवं क्षमता है जो शोधकर्ता को अध्ययन करते समय उसके अपने विश्वासों, आशाओं एवं भय से दूर रखती है। वस्तुनिष्ठता शोध में वैयक्तिक पक्षपात का विरोध करता है। यह शोध के प्रति वह दृष्टिकोण है जिसके अनुसार किसी घटना से सम्बन्धित तथ्यों को समझने हेतु शोधकर्ता अपने पूर्वाग्रहों, मूल्यों, मनोवृत्तियों आदि की अपेक्षा साक्ष्य एवं तर्क के आधार पर निष्पक्ष विष्लेशण करने का प्रयास करता है। सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना इन्हें विज्ञान की श्रेणी में जाने के लिए अत्यन्त अनिवार्य है।

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता एवं वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग के विरोधी विद्वान यह तर्क देते हैं कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति ही ऐसी है कि उन्हें वस्तुनिष्ठ रूप में समझना ज्यादा उचित है। जैसे विद्वानों ने इस तथ्य पर बल दिया है कि किसी भी घटना को समझने हेतु उसके अन्तर्निहित अर्थ को समझना अनिवार्य है। इस अर्थ को केवल व्यक्तिनिष्ठ दृष्टि से ही समझा जा सकता है। व्यक्तिनिष्ठता (जिसे आत्मपरकता अथवा व्यक्तिपरकता भी कहा जाता है) वह सिद्धान्त है जो सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु उसे मूल्यों से पृथक् करना असम्भव मानता है। कोई भी शोधकर्ता अपने आन्तरिक विचारों एवं मूल्यों को कहीं दूसरी जगह छोड़कर अन्वेषण नहीं कर सकता है। उसके मूल्य, विश्वास एवं मनोवृत्तियाँ सदैव उसके साथ रहती हैं तथा इसी से वह सामाजिक यथार्थता को देखने का प्रयास करता है। अन्य शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जब कोई शोध घटनाओं का अध्ययन शोधकर्ता के दृष्टिकोण या परिप्रेक्ष्य से किया जाता है, तो उसे व्यक्तिनिष्ठ अध्ययन कहा जाता है। प्रत्यक्षवादी विद्वान् ऐसे अध्ययनों का विरोध करते हैं। 'सहानुभूतिमूलक समझ' तथा मनोविश्लेषण वादियों ने 'आत्म-स्पष्टीकरण' की जिस पद्धति का उल्लेख किया है, वह वास्तव में व्यक्तिनिष्ठता से ही सम्बन्धित है। इस पद्धति के समर्थक समाजशास्त्र की वस्तुनिष्ठ प्रकृति को पूर्णतः अस्वीकार करते हैं। प्रत्येक विज्ञान अपनी विषय-वस्तु का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से करने का प्रयास करता है, परन्तु सामाजिक घटनाओं की प्रकृति के कारण सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता रख पाना एक कठिन
कार्य है। इसमें आने वाली प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं-

1. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता ना बनाए रख पाने का पहला कारण शोध समस्या का चयन है जो शोधकर्ता के मूल्यों एवं रुचियों से प्रभावित होता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से संबंधित होता है, इसलिए सामाजिक-सांस्कृतिक घटनाओं का सम्पूर्ण विश्लेषण संभव नहीं हो पाता। सामाजिक शोध में जब हम व्यक्तियों वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है।
2. समूहों का अध्ययन करते हैं तो स्वयं एक सामाजिक प्राणी होने के कारण हम अध्ययन से अपने आपको तटस्थ अथवा पृथक् नहीं रख पाते। प्राकृतिक विज्ञानों में ऐसा इसलिए सम्भव हो जाता है क्योंकि उनमें जड़ निर्जीव वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है। स्वयं सामाजिक समूह, विशेष जाति एवं सम्प्रदाय का सदस्य होने के कारण शोधकर्ता का पक्षपात या किसी विशेष बात की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक ही है। अतः सामाजिक विज्ञानों में निष्कर्षों के शोधकर्ता की मनोवृत्तियों या मूल्यों द्वारा प्रभावित होने की सम्भावना अधिक होती है।
3. सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता से सम्बन्धित एक बाधा शोधकर्ता के बाह्य हित हैं। जब वह अपने समूह का अध्ययन करता है तो बहुत-सी बातों, जिन्हें वह अनुचित मानता है, की उपेक्षा कर देता है। दूसरी ओर, जब वह किसी दूसरे समूह का अध्ययन करता है तो वह ऐसी बातों की ओर अधिक ध्यान देता है। इससे अध्ययन की वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है।
4. सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भी सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठ अध्ययनों में एक बाधा है। चूँकि इनकी प्रकृति गुणात्मक होती है और कई बार शोधकर्ता को समूह के सदस्यों की मनोवृत्तियों, मूल्यों एवं आदर्शों आदि का अध्ययन करना पड़ता है, इसीलिए उसके लिए परिशुद्ध एवं यथार्थ रूप में घटनाओं का निष्पक्ष अध्ययन करना सम्भव नहीं रह पाता।
5. शोधकर्ता स्वयं एक सामाजिक प्राणी है तथा वह किसी विशेष जाति, प्रजाति, वर्ग, लिंग, समूह का सदस्य होने के नाते विभिन्न मानवीय क्रियाओं एवं सामाजिक पहलुओं के बारे में अपने विचार एवं मूल्य रखता है। उसके ये विचार एवं मूल्य उसके अध्ययन को प्रभावित करते हैं। **लुंडबर्ग (Lundberg)** के अनुसार शोधकर्ता के नैतिक मूल्य का उसके अध्ययन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है।

उपर्युक्त बाधाओं के अतिरिक्त अनेक अन्य ऐसे कारण भी हैं जो सामाजिक विज्ञानों में होने वाले अध्ययनों में पक्षपात या अभिनति **(Bias)** लाते हैं। अभिनति के ऐसे कुछ प्रमुख स्रोत निम्नांकित हैं-

1. शोधकर्ता की अपनी मूल्यों से सम्बन्धित अभिनति।
2. सूचनादाता की झूठ बोलने अथवा सही उत्तर देने में कतराने के कारण होने वाली अभिनति।
3. सूचनादाता की तथ्यों को बढ़ा-चढ़ाकर कहने अर्थात् डींग मारने की आदत।
4. सूचनादाता द्वारा शोधकर्ता पर विश्वास ना होने के कारण सही उत्तर देने में असमर्थता।
5. निदर्शन के चुनाव में अभिनति (बहुधा निदर्शन का चयन पक्षपातपूर्ण रूप में किया जाता है तथा यदि दैव निदर्शन का प्रयोग किया गया है तो भी अनेक सूचनादाता सूचना देने हेतु उपलब्ध नहीं हो पाते जिससे निदर्शन प्रभावित होता है)।
6. सामग्री संकलन करने की दोषपूर्ण प्रविधियाँ (सामान्यतः प्रश्नावली एवं अनुसूची इत्यादि प्रविधियों में ऐसे प्रश्न सम्मिलित कर लिए जाते हैं जो यथार्थता के बारे में सूचना संकलन करने में सहायक नहीं होते हैं अथवा इन प्रविधियों में पूर्व-परीक्षण किए बिना प्रयोग में लाने से इनकी वस्तुनिष्ठता प्रभावित होती है।
7. सामग्री के विश्लेषण एवं निर्वचन में अभिनति (सामान्यतः विश्लेषण एवं निष्कर्ष के स्तर पर भी शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित करते हैं जिससे वह वही निष्कर्ष निकालता है जो उसके मूल्यों के अनुरूप होता है। बहुधा शोधकर्ता के निजी स्वार्थ भी विष्लेशणएवं निर्वचन को प्रभावित करते हैं)।

3.4 वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की समस्या के बारे में वेबर के विचार (Weber's Views on The Problem of Objectivity and Subjectivity)

मैक्स वेबर (Max Weber) के अनुसार प्राकृतिक तथा सामाजिक विज्ञानों में अन्तर अन्वेषणकर्ता के अनुभव सम्बन्धी आशयों (Cognitive intentions) का परिणाम है, ना कि मानव-क्रिया की विषय-वस्तु के अध्ययन में वैज्ञानिक तथा सामान्यीकरण विधियों के प्रयोग करने की कठिनाई। अन्वेषण की विधियों से अधिक, वैज्ञानिक की रुचियाँ तथा उद्देश्य महत्त्वपूर्ण होते हैं। दोनों ही तरह के विज्ञानों में अमूर्तता (Abstraction) का सहारा लिया जाता है, अमूर्तता के लिए दोनों ही तरह के विज्ञानों में वास्तविकता के विभिन्न पहलुओं में से कुछ पहलुओं का चयन करना पड़ता है। वेबर के विचारों को निम्नलिखित दो शीर्षकों के अन्तर्गत विभाजित किया जा सकता है-
कौन-सी विशेष समस्या तथा उसकी किस प्रकार की व्याख्या विद्वान का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित करती है, यह अन्वेषणकर्ता के मूल्यों तथा रुचियों पर निर्भर करता है। समस्या का चयन सदैव मूल्यों से सम्बन्धित (Value relevant) है। संस्कृति अथवा समाज का पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ अथवा वैज्ञानिक अध्ययन सम्भव नहीं है क्योंकि इनके अध्ययन का दृष्टिकोण एक-तरफा है जिसका चयन तथा व्याख्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष, चेतन अथवा अचेतन रूप से की जाती है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक अथवा सामाजिक प्रघटना को बिना इसके महत्त्व को ध्यान में रखे नहीं समझा जा सकता। प्रत्येक सामाजिक प्रघटना अपने आप में विशिष्ट होती है तथा कोई भी सांस्कृतिक घटना अपने आपको दोहराती नहीं है। सामाजिक वास्तविकता के बारे में ज्ञान सार्वभौमिक नहीं है क्योंकि यह ज्ञान किसी विशेष दृष्टिकोण के अनुसार प्राप्त किया गया है। यह चेतना सम्बन्धी ज्ञान है। इसलिए प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या सामाजिक प्रघटनाओं का अध्ययन वस्तुनिष्ठ रूप से किया जा सकता है? वस्तुनिष्ठ अध्ययन का अभिप्राय है कि वह अध्ययन चेतना सम्बन्धी नहीं है अर्थात् हमारे अपने विचारों द्वारा प्रभावित नहीं है। वस्तुनिष्ठ अध्ययन निष्पक्ष होता है जिस पर शोधकर्ता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सामाजिक वास्तविकता का अध्ययन केवल एक-तरफा है क्योंकि वैज्ञानिक केवल अपनी रुचि व मूल्यों के आधार पर समस्या व प्रघटना का चयन ही नहीं करता अपितु इसका अध्ययन भी अपने दृष्टिकोण से करता है अर्थात् केवल उसी पक्ष की ओर अधिक ध्यान देता है जिसे वह महत्त्वपूर्ण मानता है।

वेबर ने इस बात पर बल दिया है कि मूल्य अन्वेषणकर्ता द्वारा समस्या के चयन को प्रभावित करता है क्योंकि समस्या के चयन के लिए कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है तथा इससे सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता का उल्लंघन होता है। यह प्रश्न कि कोई प्रस्तावना सही है अथवा गलत है, तार्किक दृष्टि से इससे भिन्न है कि मूल्यों से इसका क्या सम्बन्ध है। मूल्य सम्बन्ध समस्या के चयन को प्रभावित करते हैं, ना कि उस समस्या की व्याख्या को। इसलिए वेबर का कहना है कि सामाजिक विज्ञानों में समस्या के चयन के मूल्यों के प्रभाव को नहीं रोका जा सकता परन्तु समस्या का चयन कर लेने के बाद वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है।

समस्या का चयन कर लेने के बाद जो कि मूल्यों से प्रभावित होती है, समाज वैज्ञानिक को अपने अथवा अन्य व्यक्तियों के मूल्यों को दूर रखकर सामग्री द्वारा प्रकट रूपरेखा का अनुसरण करना चाहिए। वह अपने विचारों को सामग्री पर थोप नहीं सकता तथा इसलिए जरूरी नहीं है कि निष्कर्ष उसकी अपनी मान्यता अथवा मूल्यों के अनुरूप ही हों। इसे नैतिक निष्पक्षता कहते हैं। उनका कहना है किए मूल्य निर्णयों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अपेक्षित साध्यों अथवा आदर्शों को समझाने तथा आनुभविक विश्लेषण में सहायता ही नहीं करता अपितु उनका आलोचनात्मक मूल्यांकन भी कर सकता है। यह आलोचना द्वन्द्ववादी प्रकृति की है अर्थात् यह ऐतिहासिक मूल्य निर्णयों तथा विचारों से सम्बन्धित औपचारिक तार्किक मूल्यांकन है। इसके द्वारा समाज वैज्ञानिक मूल्यों के प्रति जागरूक हो जाता है तथा इनसे अपने अध्ययन को प्रभावित नहीं होने देता।

कोई भी आनुभविक विज्ञान यह नहीं बताता है कि किसी व्यक्ति को क्या करना चाहिए अपितु यह बताता है कि वह क्या कर सकता है। यह सत्य है कि सामाजिक विज्ञानों में व्यक्तिगत मूल्यनिर्णय हमारे वैज्ञानिक तर्कों को प्रभावित करते हैं परन्तु फिर भी हम समस्या के चयन के पश्चात् वस्तुनिष्ठ अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार वेबर कहते हैं कि अनुसन्धान की प्रारम्भिक अवस्थाओं विशेषकर समस्या के चयन तक हमारे मूल्य हमारे अध्ययन को प्रभावित करते हैं परन्तु उसके बाद वस्तुनिष्ठता रखी जा सकती है। वास्तव में प्रारम्भिक अवस्था में सामाजिक विद्वानों का एकतरफा दृष्टिकोण होने के कारण वस्तुनिष्ठता नहीं रखी जा सकती। वेबर की यह मान्यता थी कि सामाजिक विज्ञान जिसके विषय में हमारी रुचि है यथार्थ वास्तविकता से सम्बन्धित आनुभविक विज्ञान है। एक

ओर हम व्यक्तिगत प्रघटनाओं में सम्बन्धों तथा उनके सांस्कृतिक महत्त्व का अध्ययन करना चाहते हैं, जबकि दूसरी ओर उनके ऐतिहासिक होने के कारणों का अध्ययन करना चाहते हैं। अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने तथा तुलनात्मक अध्ययनों में सहायता करने के लिए उन्होंने आदर्श प्रारूप की अवधारणा का निर्माण किया जो हमें मूर्तता से आमूर्तता की ओर ले जाती है तथा इस अमूर्त अवधारणात्मक निर्माण से हम फिर यथार्थ वास्तविकता को समझने का प्रयास करते हैं। वेबर इस बात को मानते हैं कि सार्वभौमिक नियमों का निर्माण सामाजिक विज्ञानों में नहीं किया जा सकता तथा इनकी यह मान्यता है कि इन नियमों की खोज करना सामाजिक विज्ञानों के लिए महत्त्वपूर्ण भी नहीं है।

3.5 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठाता की आवश्यकता एवं महत्व (Need and Importance of Objectivity in Social Research)

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अत्यन्त अनिवार्य है क्योंकि यदि ऐसा नहीं किया जाता तो हम कभी यथार्थता का अध्ययन नहीं कर पाएँगे। वस्तुनिष्ठता की आवश्यकता निम्नांकित बातों से स्पष्ट की जा सकती है-

1. वैज्ञानिक पद्धति के सफल प्रयोग हेतु सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना अनिवार्य है।
2. घटनाओं को यथार्थ एवं वास्तविक रूप में समझने तथा मौलिक लक तथ्यों के संकलन के लिए वस्तुनिष्ठता अनिवार्य है।
3. पक्षपातरहित निष्कर्षों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। यदि शोधकर्ता के अपने मूल्य एवं विचार अध्ययन के निष्कर्षों को प्रभावित करते हैं तो वे निष्कर्ष भ्रामक हो सकते हैं।
4. प्रतिनिधि तथ्यों की प्राप्ति के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है तथा तथ्यों एवं सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा एवं सत्यापन के लिए वस्तुनिष्ठता आवश्यक है। यदि शोध में वस्तुनिष्ठता नहीं है तो एक ही सामाजिक घटना का विभिन्न विद्वानों द्वारा अध्ययन भिन्न-भिन्न निष्कर्षों की ओर ले जा सकता है जिससे यह समस्या उत्पन्न हो सकती है कि किसे सही माना जाए और किसे गलत। ऐसी स्थिति में तथ्यों एवं सिद्धान्तों का सत्यापन नहीं हो सकता।

3.6 सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपाय (Measures to Maintain Objectivity in Social Research)

सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को निम्नांकित उपायों द्वारा बनाए रखा जा सकता है-

1. अगर शोधकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर घटनाओं का उसी रूप में अध्ययन करे जिस रूप में वे विद्यमान हैं तो उसका अध्ययन वस्तुनिष्ठ हो सकता है। उसे घटनाओं को अपने विचारों एवं मूल्यों के सन्दर्भ में न देखकर एक तटस्थ शोधकर्ता के दृष्टिकोण से देखना चाहिए। इसके लिए उसे आनुभविक प्रविधियों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि गणनात्मक सामग्री संकलित की जा सके। यदि प्रश्नावली एवं अनुसूची का प्रयोग किया जा रहा है तो इसका पूर्व-परीक्षण किया जाना आवश्यक है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि सभी सूचनादाता प्रश्नों का अर्थ एक समान रूप से समझेंगे। पूर्व संरचित एवं प्रश्न व उत्तर के विभिन्न विकल्प सुव्यवस्थित ढंग से लिखे होने के कारण सामग्री के संकलन में अभिनति की सम्भावना काफी कम हो जाती है।
2. भाषा की भिन्नता के कारण शब्दों एवं अवधारणाओं में भी भिन्नता आ जाती है। शोधकर्ता अपने अध्ययन में स्पष्ट रूप से परिभाषित शब्दों एवं अवधारणाओं का प्रयोग करके वस्तुनिष्ठता बनाए रख सकता है क्योंकि ऐसी स्थिति में लोग इनका अर्थ वही समझेंगे जिसमें किसी शोधकर्ता ने इनका प्रयोग किया है। अवधारणाओं को उनके मानक अर्थ में ही प्रयोग करना चाहिए ताकि अन्य लोग उनका अर्थ वही समझें जो शोधकर्ता का है।
3. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता के भाव एवं अभिनति का एक प्रमुख स्रोत निदर्शन का समग्र का प्रतिनिधि नहीं होना है। इसका समाधान दैव निदर्शन विधि का प्रयोग करके किया जा सकता है। यह ही निदर्शन का केवल एक ऐसा प्रकार है जिसमें प्रतिनिधि इकाइयों का चयन सम्भव हो जाता है और पक्षपात की सम्भावना

भी नहीं रहती।

4. सामग्री एकत्रित करने के यन्त्र के रूप में, प्रत्येक प्रविधि के अपने कुछ दोष हैं जो कि शोध की वस्तुनिष्ठता को प्रभावित करते हैं। इसका समाधान काफी सीमा तक एक से अधिक प्रविधियों का प्रयोग करके किया जा सकता है क्योंकि इससे एकत्रित सामग्री की प्रामाणिकता की जाँच हो जाएगी।
5. सामाजिक शोध में अभिनति कम करने एवं वस्तुनिष्ठता बनाए रखने का एक अन्य साधन समूह शोध है जिसमें शोधकर्ताओं की एक टीम सामूहिक रूप से घटनाओं का अवलोकन करती है। इसमें व्यक्तिगत पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है। ऐसे अध्ययन के पीछे मान्यता यह है कि एक शोधकर्ता के विचार एवं मूल्य उसे विशिष्ट निष्कर्षों की ओर मोड़ सकते हैं, परन्तु अधिक शोधकर्ता होने के कारण यह सम्भव नहीं है। अन्तःविषयक शोधों (Interdisciplinary Research) में विभिन्न विज्ञानों के शोधकर्ता सामूहिक रूप से अध्ययन करते हैं जिससे पक्षपात की सम्भावना न्यूनतम हो जाती है।
6. यान्त्रिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा भी सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है। टेपरेकार्डर एवं कैमरे का प्रयोग आज अनेक अध्ययनों में इसीलिए किया जाने लगा है क्योंकि इन पर आधारित अध्ययनों में पक्षपात की सम्भावना कम हो जाती है।

सच तो यह है कि वस्तुनिष्ठता की समस्या जितनी विस्तृत और गहन बताई जाती है, उतनी है नहीं। वस्तुनिष्ठता एक मानसिक गुण अथवा दृष्टिकोण है। यह कुछ सीमा तक व्यक्ति-विशेष के रुझान और कुछ सीमा तक उसके प्रशिक्षण पर आधारित होता है। शोधकर्ता का प्रशिक्षण और क्षेत्रीय अनुभव जितना अधिक बढ़ता जाता है उतना ही वह वस्तुनिष्ठता का गुण अर्जित करता जाता है। वास्तव में, यह अभ्यास, अनुभव और प्रशिक्षण का विषय है। समाज विज्ञानों में यह कोई असाध्य समस्या नहीं है। इसका समाधान सम्भव है और अनेक समाजशास्त्रियों एवं अन्य समाज वैज्ञानिकों ने वस्तुनिष्ठता के पालन की सम्भावना को साकार कर दिखाया है।

वस्तुनिष्ठता से अभिप्राय यथार्थता को तटस्थ एवं तर्क के आधार पर समझने का प्रयास है। ऐसे अध्ययनों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययन को प्रभावित नहीं करते हैं।

व्यक्तिनिष्ठता से अभिप्राय पक्षपातपूर्वक किए गए अध्ययनों से है। जिन शोधों में शोधकर्ता के मूल्य अध्ययनरत समस्या को प्रभावित करते हैं, उस शोध को व्यक्तिनिष्ठ शोध कहा जाता है।

आनुभविक शोध ऐसा शोध है जो शोधकर्ता को प्राथमिक सामग्री के संकलन हेतु अध्ययन-क्षेत्र में जाने हेतु आवश्यक मानता है। अध्ययन-क्षेत्र में जो सामग्री संकलित की जाती है उसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं तथा वह अधिक विश्वसनीय होती है।

वैज्ञानिक पद्धति से अभिप्राय अध्ययन की उस पद्धति से है जिसमें परीक्षण, सत्यापन, वर्गीकरण, पूर्वानुमान आदि पर बल दिया जाता है। विज्ञान की परिभाषा वैज्ञानिक पद्धति के रूप में ही दी जाती है जो विज्ञानों में एक-समान है।

3.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. वस्तुनिष्ठता बनाए रखना सामाजिक विज्ञानों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे ..... के आधार पर निष्कर्ष निकलते हैं। (प्रमाण और तर्क **या** व्याख्या)
2. सामाजिक विज्ञानों में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने की सबसे बड़ी समस्या शोधकर्ता के ..... और मूल्यों का प्रभाव है। (व्यक्तिगत विश्वास **या** प्रमाण)
3. ..... में शोधकर्ता को एक निष्कलंक दृष्टिकोण अपनाना होता है, ताकि निष्कर्ष पक्षपाती न हों। (सामाजिक शोध **या** आनुभविक शोध)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता का मतलब है शोधकर्ता के व्यक्तिगत मूल्यों को अध्ययन से प्रभावित करना।

2. वस्तुनिष्ठता बनाए रखने के लिए शोधकर्ता को अपने मूल्यों से प्रभावित नहीं होना चाहिए और तथ्यों का विश्लेषण प्रमाण एवं तर्क के आधार पर करना चाहिए।

3.8 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हम सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता (**Objectivity**) और व्यक्तिनिष्ठता (**Subjectivity**) के सिद्धांतों को समझते हैं। वस्तुनिष्ठता का मतलब है तथ्यों को निष्पक्ष और तटस्थ तरीके से प्रस्तुत करना, बिना किसी व्यक्तिगत पूर्वाग्रह या भावनाओं के प्रभाव के। उदाहरण के तौर पर, जब एक भू-वैज्ञानिक चट्टानों का अध्ययन करता है या वनस्पति वैज्ञानिक पौधों का, तो उसका अध्ययन वस्तुनिष्ठ होता है क्योंकि वह अपने व्यक्तिगत विचारों या मान्यताओं से स्वतंत्र रहता है। इसके विपरीत, समाजशास्त्री अपने अध्ययन में खुद एक समाज का हिस्सा होते हैं, जिससे उनके व्यक्तिगत अनुभव, मान्यताएँ और विश्वास उनके अध्ययन को प्रभावित कर सकते हैं। यही कारण है कि सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना एक चुनौती है।

अध्याय में विभिन्न विद्वानों के विचारों को प्रस्तुत किया गया है। कैर, ग्रीन और फेयरचाइल्ड ने वस्तुनिष्ठता की परिभाषा दी है, जिसमें कहा गया कि शोधकर्ता को अपने अध्ययन के दौरान अपनी व्यक्तिगत भावनाओं और विश्वासों से दूर रहकर तथ्यों का निष्पक्ष तरीके से अध्ययन करना चाहिए। वेबर ने इस समस्या पर विचार करते हुए कहा कि जबकि सामाजिक शोध में शोधकर्ता के मूल्य और विश्वास समस्या के चयन को प्रभावित करते हैं, लेकिन एक बार समस्या का चयन कर लेने के बाद, निष्कर्षों के लिए वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। वेबर के अनुसार, सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करते वक्त शोधकर्ता को अपने व्यक्तिगत मूल्यों से अलग रहते हुए तथ्यों का विश्लेषण करना चाहिए।

इस अध्याय में सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखने में आने वाली मुख्य समस्याओं का भी उल्लेख किया गया है, जैसे कि शोधकर्ता की अपनी सामाजिक पहचान, रुचियाँ और मूल्यों का प्रभाव, और डेटा संग्रहण की प्रक्रियाओं में पक्षपाती दृष्टिकोण। इसके बावजूद, वस्तुनिष्ठता बनाए रखने के उपाय भी दिए गए हैं। इनमें शामिल हैं- घटनाओं का सीधे अवलोकन, सुस्पष्ट परिभाषाएँ, विभिन्न शोध विधियों का उपयोग, और समूह अनुसंधान। इन उपायों के माध्यम से हम पक्षपाती दृष्टिकोण को कम कर सकते हैं और निष्कलंक तरीके से तथ्यों का अध्ययन कर सकते हैं।

इस अध्याय से हम यह समझते हैं कि सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखना क्यों आवश्यक है। यदि शोधकर्ता अपने व्यक्तिगत मूल्यों और विश्वासों को अपने अध्ययन से अलग रखते हुए निष्पक्ष तरीके से तथ्यों का अध्ययन करते हैं, तो वे अधिक विश्वसनीय और सही निष्कर्षों तक पहुँच सकते हैं। वस्तुनिष्ठता के माध्यम से शोधकर्ता समाज के वास्तविक तथ्यों को सही ढंग से प्रस्तुत कर सकते हैं, जो समाजशास्त्र और अन्य सामाजिक विज्ञानों की प्रामाणिकता को सुनिश्चित करता है।

3.9 शब्दावली (Glossary)

- **वस्तुनिष्ठता (Objectivity)-** जब शोधकर्ता सामाजिक तथ्यों और घटनाओं को उसी तरह देखता है जैसे वे वास्तव में हैं और ऐसा करते समय वह अपने विचारों और दृष्टिकोणों को अलग रखता है। इस प्रकार के अध्ययन को वास्तविक वस्तुनिष्ठ अध्ययन कहा जाता है।
- **व्यक्तिनिष्ठता (Subjectivity)**- व्यक्तिपरकता पूर्वाग्रह का एक रूप है और वैयक्तिकता भी। व्यक्तिपरकता वस्तुनिष्ठता के विपरीत है।
- **सामाजिक शोध (Social Research)-** किसी भी क्षेत्र में नए ज्ञान की खोज या पुराने ज्ञान का पुनः परीक्षण या उसका अलग तरीके से विश्लेषण करके नए तथ्यों की खोज करना शोध कहलाता है। यह एक सतत प्रक्रिया है जिसमें तर्क, योजना और क्रमबद्धता पाई जाती है। जब यह शोध सामाजिक क्षेत्र में किया जाता है तो इसे सामाजिक शोध कहते हैं।
- **सामाजिक विज्ञान (Social Sciences)-** सामाजिक विज्ञान अकादमिक अध्ययन या विज्ञान की शाखा है जो मानव व्यवहार के सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं से संबंधित है। सामाजिक विज्ञान

में आमतौर पर सांस्कृतिक (या सामाजिक) नृविज्ञान, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान और अर्थशास्त्र शामिल होते हैं।

- **वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)-** ज्ञानिक विधि, विज्ञान में प्रयुक्त गणितीय और प्रयोगात्मक तकनीक। अधिक विशेष रूप से, यह एक वैज्ञानिक परिकल्पना के निर्माण और परीक्षण में उपयोग की जाने वाली तकनीक है।
- **तुलनात्मक अध्ययन (Comparative Study)-** तुलनात्मक शोध सामाजिक विज्ञान में एक शोध पद्धति है जिसका उदाहरण क्रॉस-कल्चरल या तुलनात्मक अध्ययनों में दिया जाता है जिसका उद्देश्य विभिन्न देशों या संस्कृतियों में तुलना करना होता है। तुलनात्मक शोध में एक बड़ी समस्या यह है कि विभिन्न देशों में डेटा सेट श्रेणियों को अलग-अलग तरीके से परिभाषित कर सकते हैं (उदाहरण के लिए गरीबी की अलग-अलग परिभाषाओं का उपयोग करना) या समान श्रेणियों का उपयोग नहीं कर सकते हैं।

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. प्रमाण और तर्क 2. व्यक्तिगत विश्वास 3. सामाजिक शोध

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. असत्य 2. सत्य

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. W. Green (1964), Sociology : An Analysis of Life in Modern Society, *McGraw-Hill* Book Company, New York.
2. Emile Durkheim (1982), The Rules of Sociological Method, The Free Press, New York.
3. G. A. Lundberg (1947), Sociology, Oxford University Press, New York.
4. H. P. Fairchild (1944), Dictionary of Sociology (ed.), Philosophical Library, New York.
5. Lowell J. Carr (1955), Analytical Sociology : Social Situations and SocialProblems, Harper and Brothers, New York.

3.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. वस्तुनिष्ठता एवं व्यक्तिनिष्ठता की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए।
2. वस्तुनिष्ठता किसे कहते हैं? सामाजिक शोध में इसकी आवश्यकता की विवेचना कीजिए।
3. वस्तुनिष्ठता को परिभाषित कीजिए। सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता को बनाए रखने के उपायों की विवेचना कीजिए।
4. क्या सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता बनाए रखी जा सकती है? तर्क दीजिए।
5. सामाजिक शोध में वस्तुनिष्ठता की समस्या पर एक लेख लिखिए।

इकाई-4 विशुद्ध, व्यवहारिक तथा क्रियात्मक अनुसंधान
(Basic, Applied and Action Research)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

4.2 उद्देश्य (Objectives)

4.3 अन्वेषणात्मक अनुसंधान (Exploratory social research)

4.4 वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive research)

4.5 परीक्षणात्मक अनुसंधान (Experimental research)

4.6 विशुद्ध अनुसंधान (Pure research)

4.7 व्यवहारिक अनुसंधान (Behavioural research)

4.8 क्रियात्मक अनुसंधान (Action research)

4.9 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान (Evaluative research)

4.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

4.11 सारांश (Summary)

4.12 शब्दावली (Glossary)

4.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

4.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

4.15 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

4.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

आज जिन आधारों पर सामाजिक अनुसंधान को विकसित किया जा रहा है उनमें अवलोकन और सत्यापन पर आधारित अनुभवसिद्ध ज्ञान का महत्व अधिक है। सभी सामाजिक अनुसंधान समान प्रकृति के नहीं होते है। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति विविधता पूर्ण होने के कारण विभिन्न अध्ययन के उददेष्य के अनुसार सामाजिक अनुसंधान की रूपरेखा भी भिन्न भिन्न प्रकार की होती है। विभिन्न अनुसंधान कार्यो में प्रयुक्त पद्धतियों की प्रकृति भी एक दूसरे से भिन्न हेाती है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक अनुसंधान के उन विभिन्न प्रकारों को समझना जरूरी है। जिनकी प्रकृति और उददेष्य एक दूसरे से भिन्न हेा सकती है।

4.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ✓ आप विभिन्न अनुसंधानो. के विषय में को जान पाएंगे जैसे- अन्वेश्नात्मक, वर्णनात्मक, परीक्षणात्मक विशुद्ध, व्यवहारिक, क्रियात्मक एवं मूल्यांकनात्मक अनुसंधानों को जान पाएंगे।
- ✓ आप विभिन्न अनुसंधानों के महत्त्व को समझ सकेंगे।
- ✓ आप विभिन्न अनुसंधानों के चरणों को जान सकेंगे।

4.3 अन्वेषणात्मक अनुसंधान (Exploratory social research)

जब किसी समस्या के सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष की पर्याप्त जानकारी नहीं होती तथा अनुसन्धानकर्ता का उददेष्य किसी विषेष सामाजिक घटना के लिए उत्तरदायी कारणों को खोज निकालना होता है। तब अध्ययन के लिए जिस अनुसंधान का सम्बन्ध प्राथकमिक अनुसन्धान से है। जिसके अर्न्तगत समस्या के विषय में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करके भावी अध्ययन की आधार षिला तैयार की जाती है। इस प्रकार के शोध का सहारा तब लिया जाता है, जब विषय से सम्बन्धित कोई सूचना अथवा साहित्य उपलब्ध न हो और विषय के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष के सम्बन्ध में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करना हो, जिससे कि उपकल्पना का निर्माण किया जा सके।

इस प्रकार के शोध के लिये अनुसंधानकर्त्ता को निम्न चरणों को अपनाना आवश्यक होता है:-

1. साहित्य का सर्वेक्षण
2. अनुभव सर्वेक्षण
3. सूचनादाताओं का चयन
4. उपर्युक्त प्रश्न पूछना

अन्वेषणात्मक अनुसंधान का महत्व

1. अनुसंधान समस्या के महत्व पर प्रकाष डालना तथा सम्बन्धित विषय पर अनुसंधानकर्ताओं के ध्यान को आकर्षित करना

2. पूर्व निर्धारित परिकल्पनाओं का तात्कालिक दशाओं में परीक्षण करना

3. विभिन्न अनुसंधान पद्धतियों की उपयुक्तता की सम्भावना को स्पष्ट करना

4. किसी विषय समस्या के व्यापक और गहन अध्ययन के लिए एक व्यवहारिक आधारशिला तैयार करना

4.4 वर्णनात्मक अनुसंधान (Descriptive Research)

वर्णनात्मक अनुसंधान का उददेष्य किसी अध्ययन विषयक के बारे में यर्थात तथा तथ्य एकत्रित करके उन्हें एक विवरण के रूप में प्रस्तुत करना हेाता है। सामाजिक जीवन के अध्ययन से सम्बन्धित अनेक विषय इस तरह के होते है जिनका अतीत में कोई गहन अध्ययन प्राप्त नहीं होता ऐसी दशा में यह आवश्यक होता है कि अध्ययन से सम्बन्धित समूह समूदाय अथवा विषय के बारे में अधिक से अधिक सूचनायें एकत्रिक करके उन्हें जनसामान्य के समक्ष्य प्रस्तुत की जाये ऐसे अध्ययनों के लिए जो अनुसंधान किया जाता है। उसे वर्णनात्मक अनुसंधान कहते है।

इस प्रकार के अनुसंधान में किसी पूर्व निर्धारित सामाजिक घटना, सामाजिक परिस्थिति अथवा सामाजिक संरचना का विस्तृत विवरण देना होता है। अनुसंधान हेतु चयनित सामाजिक घटना या सामाजिक समस्या के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित तथ्यों को एकत्रित करके उनका तार्किक विश्लेषण किया जाता है, एवं निष्कर्ष निकाले जाते हैं। तथ्यों को एकत्रित करने के लिये, प्रश्नावली, साक्षात्कार अथवा अवलोकन आदि किसी भी प्रविधि का प्रयोग किया जा सकता है। ऐसे अनुसंधान को स्पष्ट करने के लिये जन

गणना उपक्रम का उदाहरण लिया जा सकता। जन गणना में भारत के विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न विशेषताओं से युक्त समूहों का संख्यात्मक तथा, आंशिक तौर पर, गुणात्मक विवरण दिया जाता है।

वर्णनात्मक अनुसंधान के चरण (Steps of Descriptive Research)

1. अध्ययन विषय का चुनाव
2. अनुसंधान के उददेष्यों का निर्धारण
3. तथ्य संकलन की प्रविधियों का निर्धारण
4. निदर्शन का चुनाव
5. तथ्यों का संकलन
6. तथ्यों का विश्लेष्ण
7. प्रतिवेदन को प्रस्तुत करना

4.5 परीक्षणात्मक अनुसंधान (experimental research)

समाजशास्त्रीय अनुसंधान की वैज्ञानिकता के विरूद्ध यह आरोप लगाया जाता है कि इसमें प्रयोगी करण का अभाव होने का कारण इसे वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों में अध्ययन विषय को नियन्त्रित करके घटनाओं का अध्ययन किया जाता है, उसी प्रकार नियन्त्रित परिस्थितियों में सामाजिक घटनाओं का निरीक्षण एवं परीक्षण परीक्षणात्मक अनुसंधान कहलाता है।

इस प्रकार के अनुसंधान द्वारा यह जानने का प्रयास किया जाता है कि किसी नवीन परिस्थिति अथवा परिवर्तन का समाज के विभिन्न समूहों, संस्थाओं अथवा संरचनाओं पर क्या एवं कितना प्रभाव पड़ा है। इसके लिये सामाजिक समस्या या घटना के उत्तरदायी कुछ चरों (Attributes) को नियन्त्रित करके, शेष चरों के प्रभाव को नवीन परिस्थितियों में देखा जाता है, और कार्य कारण सम्बन्धों की व्याख्या की जाती है।

परीक्षणात्मक अनुसंधान के प्रकार

1. पश्चात् परीक्षण 2. पूर्व पश्चात् परीक्षण 3. कार्यान्तर परीक्षण

(1) पश्चात् परीक्षण (After only experiment)-

पश्चात परीक्षण वह प्रविधि है जिसके अर्न्तगत पहले स्तर पर लगभग समान विषेषता वाले दो समूहो का चयन कर लिया जाता है। जिनमें से एक समूह को नियन्त्रित समूह (controlled group) कहा जाता है क्योंकि उसमें कोई परिवर्तन नहीं लाया जाता है। दूसरा समूह परीक्षणात्मक समूह (experimental group) होता हैय इसमें चर के प्रभाव में परिवर्तन करने का प्रयास किया जाता है। कुछ समय पश्चात् दोनों समूहों का अध्ययन किया जाता है। यदि परीक्षणात्मक समूह में नियन्त्रित समूह की तुलना में अधिक परिवर्तन आता है, तो इसका अर्थ यह माना जाता है कि इस परिवर्तन का कारण वह चर है जिसे परिक्षणात्मक समूह में लागू किया गया था। उदाहरणस्वरूप, दो समान समूहों या गाँवों को लिया गया- जो कुपोषण की समस्या से ग्रस्त हैं। इनमें से एक समूह, में जिसे परीक्षणात्मक समूह माना गया है, कुपोषण के विरुद्ध प्रचार-प्रसार किया जाता है एवं जागरूकता पैदा की जाती है। एक निश्चित अवधि के पश्चात् परीक्षणात्मक समूह की तुलना नियन्त्रित समूह से की जाती है जिसे ज्यों का त्यों रहने दिया गया। यदि परीक्षणात्मक समूह में कुपोषण को लेकर नियन्त्रित समूह की तुलना में काफी अन्तर पाया

जाता है तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रचार-प्रसार एवं जागरूकता से कुपोषण को कम किया जा सकता है।

(2) पूर्व पश्चात् परीक्षण (Before after experiment)-

इस विधि के अर्न्तगत अध्ययन के लिए केवल एक ही समूह का चयन किया जाता है। ऐसे अनुसंधान के लिए चयनित समूह का दो विभिन्न अवधियों में अध्ययन करके पूर्व और पश्चात के अन्तर को देखा जाता है। इसी अन्तर को परीक्षण अथवा उपचार का परिणाम मान लिया जाता है।

(3) कार्यान्तर तथ्य परीक्षण (Ex-post facto experiment)-

यह वह विधि है जिसमें हम विभिन्न आधारों पर प्राचीन अभिलेखों के विभिन्न पक्षों की तुलना करके एक उपयोगी निष्कर्ष पर पहुँच सकते है। ऐसे अनुसंधान के लिए चयनित समूह का दो विभिन्न अवधियों में अध्ययन करके पूर्व और पश्चात के अन्तर को देखा जाता है। इस विधि का प्रयोग भूतकाल में घटी अथवा ऐतिहासिक घटना का अध्ययन करने के लिये किया जाता है। भूतकाल में घटी ह ुई घटना को दुबारा दोहराया नहीं जा सकता है। ऐसी स्थिति में उत्तरदायी कारणों को जानने के लिये इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि द्वारा अध्ययन हेतु दो ऐसे समूहों को चुना जाता है जिनमें से एक समूह ऐसा है जिसमें कोई ऐतिहासिक घटना घटित हो चुकी है। एवं दूसरा ऐसा समूह ऐसा है जिसमें वैसी कोई घटना घटित नहीं हुई है।

4.6 विशुद्ध अनुसंधान (Pure Research):

समाजिक अनुसंधान का उददेष्य जब किसी समस्या का समाधान ढूढना नहीं होता है। बल्कि सामाजिक घटनाओं के बीच पाये जाने वाले कार्य कारण के सम्बन्धों समझकर विषय से सम्बन्धित वर्तमान ज्ञान में वृद्धि करना होता है तब इसे हम विषुद्ध अनुसंधान कहते है। विशुद्ध सामाजिक अनुसंधान का कार्य, नवीन ज्ञान की प्राप्ति कर, ज्ञान के भण्डार में वृद्धि करना है। साथ ही, पूर्व के अनुसंधानों से प्राप्त ज्ञान, पूर्व में बनाये गये सिद्धान्तों एवं नियमों को परिवर्तित परिस्थितियों में पुनःपरीक्षण करके परिमार्जन, परिष्करण एवं परिवर्द्धन करना है। इस प्रकार विशुद्ध सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्यों को निम्नांकित रूप से व्यक्त किया जा सकता है।

शुद्ध सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य नए ज्ञान की नई अवधारणाओं, उपलब्ध शोध पद्धति, पूर्व ज्ञान प्राप्त करने के तरीकों की जांच और परीक्षण करना तथा उनका पुनः परीक्षण करना है।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि विशुद्ध सामाजिक अनुसंधान विज्ञान की प्रगति एवं विकास में अत्यन्त उपयोगी है।

4.7 व्यावहारिक अनुसंधान (Applied Research)

एक अनुसंधान कर्ता जब स्वीकृत सिद्धान्तों के आधार पर किसी समस्या का इस दृष्टिकोण से अध्ययन करता है कि वह एक व्यवहारिक समाधान खो सके ऐसे अनुसंधान को हम व्यवहारिक अनुसंधान कहते है। विशुद्ध सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है, वरन् सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों जैसे जनसंख्या, धर्म, शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन करना एवं इनके कार्य-कारण सम्बन्धों की तर्कसंगत व्याख्या करना भी है।

अतः व्यावहारिक अनुसंधान का सम्बन्ध हमारे व्यावहारिक जीवन से है। इस संदर्भ में **श्रीमती यंग (Mrs. Young)** ने लिखा है, **"ज्ञान की खोज का एक निश्चित सम्बन्ध लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं व कल्याण से होता है। वैज्ञानिकों की यह मान्यता है कि समस्त ज्ञान सारभूत रूप से इस अर्थ में उपयोगी है कि वह सिद्धान्तों के निर्माण में या एक कला को व्यवहार में लाने में सहायक होता है। सिद्धान्त तथा व्यवहार आगे चलकर प्रायः एक दूसरे से मिल जाते हैं।"**

4.8 क्रियात्मक शोध (Action Research)

क्रियात्मक अनुसंधान के सम्बन्ध में **गुड एव हाट (good and Hat)** ने लिखा है- **"क्रियात्मक अनुसंधान उस योजनाबद्ध कार्यक्रम का भाग है जिसका लक्ष्य विद्यमान अवस्थाओं को परिवर्तित करना होता है, चाहे वे गन्दी बस्ती की अवस्थायें हो या प्रजातीय तनाव पूर्वाग्रह व पक्षपात हो या किसी संगठन की प्रभावशीलता हो।"** स्पष्ट है कि क्रियात्मक अनुसंधान से प्राप्त जानकारियों एवं निष्कर्षों का उपयोग मौजूदा स्थितियों में परिवर्तन लाने वाली किसी भावी योजना में किया जाता है। वास्तव में, व्यावहारिक अनुसंधान व क्रियात्मक अनुसंधान कुछ अर्थों में एक-दूसरे से समानता रखते हैंय क्योंकि दोनों में ही सामाजिक घटनाओं अथवा समस्याओं का सूक्ष्म अध्ययन करने के पश्चात् ऐसे निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं जो व्यावहारिक एवं क्रियात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं। उदाहरणस्वरूप, देश की शिक्षा व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन व सुधार लाने के लिये 1964 में डॉ. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता में कोठारी आयोग की नियुक्ति की गई थी। उन्होंने देश की शिक्षा व्यवस्था के प्रत्येक पक्ष से सम्बन्धित ठोस प्रमाणों एवं तथ्यों को एकत्रित कर आवश्यक सुधार एवं परिवर्तन लाने के सम्बन्ध में सुझाव प्रस्तुत किये। आयोग ने शिक्षा से जुड़े देश-विदेश के सभी वर्गों के व्यक्तियों से लिखित एवं मौखिक विचारों एवं सुझावों, माँगों को अध्ययन में शामिल कियाय साथ ही मौजूदा शिक्षा प्रणाली में उपस्थित दशाओं का विश्लेषण कर, भावी शिक्षा प्रणाली की संरचना तथा क्रियान्वियन हेतु व्यावहारिक सुझाव भी प्रस्तुत किये। उन सुझावों में से कई सुझाव भावी योजनाओं में सम्मिलित भी किये गये। तात्पर्य यह है, इस आयोग की रिपोर्ट भी क्रियान्वयन शोध का उदाहरण प्रस्तुत करती है।

4.9 मूल्यांकनात्मक अनुसंधान (Evaluative research)

आज सभी देश नियोजित परिवर्तन की दिशा में विकास कार्यक्रमों को प्रोत्साहन दे रहे हैं। लाखों, करोड़ों रूपये, अनेक विकास कार्यक्रमों, जैसे स्वास्थ्य सुधार, गरीबी उन्मूलन, आवास-विकास सम्बन्धी योजनाओं, परिवार नियोजन, मद्य निषेध, रोजगार योजनाओं एवं समन्वित ग्रामीण विकास आदि पर व्यय किये जा रहे हैं। तथापि, इन कार्यक्रमों एवं योजनाओं का लाभ वास्तव में लोगों को मिल भी रहा है या नहीं, यह जानना ही मूल्यांकनात्मक अनुसंधान का उद्देश्य है। मूल्यांकनात्मक अनुसंधान द्वारा इन कार्यक्रमों के लक्ष्यों एवं उपलब्धियों का मूल्यांकन किया जाता है कि लक्ष्य एवं उपलब्धियों में कितना अन्तर रहाय और अन्तर के कारण क्या रहे। जिससे कि भविष्य में बनाये जाने वाले कार्यक्रमों और योजनाओं में इस अन्तर को कम किया जा सकेय अर्थात् योजनाओं को और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके। अनेक सरकारी, अर्द्ध-सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा समय-समय पर ऐसे मूल्यांकन करवाये जाते है कि उनके द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों की सफलता कितनी रही? असफलता के कारण क्या रहे आदि। उदाहरणस्वरूप, सामुदायिक विकास कार्यक्रम के मूल्यांकन के लिये भारत सरकार ने 'कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन' की स्थापना की है।

A. गणनात्मक अनुसंधान (Computational Research)

सामाजिक जीवन में बहुत सी घटनाएँ और तथ्य इस तरह के होते है जिनका प्रत्यक्ष रूप सं अवलोकन करके उनकी गणना की जा सकती है। शाब्दिक रूप से फनंदजपजल अथवा परिमाण का अर्थ है मात्रा इस प्रकार के अनुसंधान में गणनात्मक मापन एवं सांख्यकीय विश्लेषण को अपनाया जाता है। तथ्यों के विश्लेषण में विभिन्न प्रकार की सांख्यकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है जिससे अध्ययन में परिदर्शिता की मात्रा बढ़ जाती है।

उदाहरणस्वरूप, छठे वेतन आयोग के लागू हो जाने से विभिन्न वर्गों के वेतन में बढ़ोतरी का प्रतिशत क्या रहा? इस प्रकार के अनुसंधान में निर्दशन एवं अनुसंधान प्ररचना पर विशेष बल दिया जाता है।

B. गुणात्मक अनुसंधान (Qualitative Research)- सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के लिए अनेक ऐसी पद्धतियों का भी उपयोग किया जाता है जो गुणात्मक विशेषताओं जैसे लोगों की मनोवृत्तियों तथा मानव व्यवहार पर विभिन्न संस्थाओं और विश्वासों के प्रभाव की व्याख्या कर सकेंगे। जब अनुसंधान का उद्देश्य व्यक्तियों के गुणों का विश्लेषण करना हो, तो गुणात्मक अनुसंधान को अपनाया जाता है।

C. तुलनात्मक अनुसंधान (Comparative Research)- इस प्रकार के अनुसंधान में विभिन्न इकाइयों एवं समूहों के बीच पायी जाने वाली समानताओं एवं विभिन्नताओं का अध्ययन किया जाता है। भारतीय समाज एवं जापानी समाज का तुलनात्मक अध्ययन, भारत की ग्रामीण महिलाओं तथा इंग्लैण्ड अथवा अमरीका की ग्रामीण महिलाओं की तुलना किया जाना। अथवा, विभिन्न महानगरों में महिला अपराधियों का तुलनात्मक अध्ययन, आदि।

4.10 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. अन्वेषणात्मक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य ..... होता है। (नए विचारों की पहचान करना **या** किसी समस्या का समाधान खोजना)
2. वर्णनात्मक अनुसंधान में ..... के माध्यम से किसी सामाजिक घटना का विवरण प्रस्तुत किया जाता है। (तथ्य एकत्रित करना या प्रयोग करना)
3. परीक्षणात्मक अनुसंधान में सामाजिक घटनाओं का अध्ययन _____ (नियंत्रित परिस्थितियों में या वास्तविक स्थितियों में) किया जाता है।

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. क्रियात्मक अनुसंधान का उद्देश्य मौजूदा स्थितियों में सुधार लाना होता है।
2. विशुद्ध अनुसंधान में समाजिक समस्याओं का समाधान ढूंढने का प्रयास किया जाता है।

4.11 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हम विभिन्न प्रकार के अनुसंधान विधियों के बारे में सीखते हैं जो सामाजिक जीवन और समाजिक समस्याओं के अध्ययन में उपयोगी होती हैं।

हमने पहले *अन्वेषणात्मक अनुसंधान* के बारे में जाना, जिसका उद्देश्य नए विचारों और समस्याओं की पहचान करना है। इसके तहत साहित्य सर्वेक्षण, अनुभव सर्वेक्षण, सूचनादाताओं का चयन और उपयुक्त प्रश्नों का चयन किया जाता है, ताकि किसी सामाजिक समस्या या घटना पर गहन अध्ययन किया जा सके।

इसके बाद, हमने *वर्णनात्मक अनुसंधान* के बारे में समझा, जिसमें किसी सामाजिक घटना या समस्या का विस्तृत और तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत किया जाता है। यह विधि उन स्थितियों में उपयोगी होती है जहां अतीत में गहन अध्ययन नहीं किया गया हो, और ज्यादा जानकारी एकत्रित करनी होती है। उदाहरण के तौर पर, जनगणना के आंकड़ों को लिया जा सकता है।

हमने *परीक्षणात्मक अनुसंधान* के बारे में भी सीखा, जो नियंत्रित परिस्थितियों में सामाजिक घटनाओं का निरीक्षण करता है। इसमें किसी सामाजिक समस्या या घटना के प्रभाव को जानने के लिए विभिन्न चर (attributes) पर प्रयोग किए जाते हैं। इसके तीन प्रमुख प्रकार होते हैं: पश्चात् परीक्षण, पूर्व-पश्चात् परीक्षण, और कार्यान्तर परीक्षण, जिन्हें हम विशेष परिस्थितियों में लागू कर प्रभाव का मूल्यांकन करते हैं।

इसके अलावा, *विशुद्ध अनुसंधान* और *व्यावहारिक अनुसंधान* पर भी चर्चा की गई। विशुद्ध अनुसंधान का उद्देश्य ज्ञान में वृद्धि करना और पुराने सिद्धांतों का पुनः परीक्षण करना है, जबकि व्यावहारिक अनुसंधान समाज की समस्याओं का समाधान ढूँढने के लिए किया जाता है।

क्रियात्मक अनुसंधान के बारे में भी जाना, जिसमें वर्तमान परिस्थितियों में सुधार लाने के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम लागू किए जाते हैं। इसके परिणामों का उपयोग मौजूदा स्थितियों में परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है, जैसे शिक्षा प्रणाली में सुधार के लिए कोठारी आयोग की रिपोर्ट।

मूल्यांकनात्मक अनुसंधान में विकास कार्यक्रमों की सफलता और प्रभाव का मूल्यांकन किया जाता है, ताकि भविष्य में इन कार्यक्रमों को और प्रभावी बनाया जा सके।

अंत में, *गणनात्मक अनुसंधान* और *गुणात्मक अनुसंधान* के बारे में जाना। गणनात्मक अनुसंधान में सांख्यिकीय विश्लेषण किया जाता है, जबकि गुणात्मक अनुसंधान में सामाजिक घटनाओं के मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है।

इन सभी अनुसंधान विधियों का अध्ययन करके हम यह समझ सकते हैं कि समाजिक जीवन को समझने और उसमें सुधार करने के लिए विभिन्न प्रकार के अनुसंधान की आवश्यकता होती है।

4.12 शब्दावली (Glossary)

- **वर्णात्मक अनुसंधान (Descriptive Research):** वर्णात्मक सामाजिक अनुसंधान में घटना के सम्बन्ध में प्रमाणिक तथ्य एकत्रित करके उनका क्रमबद्ध एवं तार्किक वर्णन करना है।
- **परीक्षणात्मक अनुसंधान (Experimental Research):** ऐसा अनुसंधान जिसमें नियंत्रित दशाओं के अन्तर्ग त मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।
- **अन्वेषणात्मक अनुसंधान (Exploratory Research):** किसी घटना के सम्बन्ध में प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने हेतु किया गया अनुसंधान जिससे कि मुख्य अनुसंधान की रूपरेखा एवं उपकल्पना का निर्माण किया जा सके।
- **क्रियात्मक अनुसंधान (Action Research)**: समाज की मौजूदा दशाओं को परिवर्तित करने के उद्देश्य से किया गया अनुसंधान, चाहे गन्दी बस्ती हो या प्रजातीय तनाव।

4.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. नए विचारों की पहचान करना 2. तथ्य एकत्रित करना 3. नियंत्रित परिस्थितियों में

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2. असत्य

4.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

4.15 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

A. यंग पी.वी., साइन्टेफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च

B. सी.ए. मोजर, सर्वे मैथड्स इन सोशल इन्वेस्टीगेशन। लुण्डवर्ग , जी.ए. सोशल रिसर्च।

C. गुड एण्ड हाट, मैथड्स ऑफ सोशल रिसर्च। के.डी. बैली, मैथड्स ऑफ सोशल रिसर्च। आहूजा, राम, रिसर्च मैथड्स।

4.16 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों की चर्चा उदाहरण सहित कीजिये।
2. विशुद्ध एवं व्यावहारिक सामाजिक अनुसंधान की विशेषताओं को समझाइये।
3. अन्वेषणात्मक और वर्णनात्मक सामाजिक अनुसंधानों को उदाहरण सहित समझाइये।

इकाई 5 - गुणात्मक और मात्रात्मक अनुसंधान
(Qualitative & Quantitative Research)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

5.2 उद्देश्य (Objectives)

5.3 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण (Clarification of The Concept of Theory)

5.4 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण (Clarification of The Concept of Research)

5.5 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध (Relation Between Research and Theory)

5.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध (Qualitative and Quantitative Research)

5.7 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर (Difference Between Qualitative and Quantitative Research)

5.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

5.9 सारांश (Summary)

5.10 शब्दावली (Glossary)

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

5.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

5.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

मानव की जिज्ञासात्मक प्रकृति शोध के लिए उत्तरदायी मानी जाती है। मानव एक सामाजिक प्राणी है तथा प्रारम्भ से ही एक जिज्ञासु प्राणी रहा है क्योंकि उसने प्रकृति को समझने एवं अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदैव सतत प्रयास किया है। वास्तव में, सभ्यता एवं संस्कृति का विकास मानव की इस जिज्ञासा द्वारा प्रेरित अपने पर्यावरण को अनवरत रूप से समझने के प्रयासों का ही परिणाम है। आज प्रकृति को समझने तथा सामाजिक जीवन के बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के प्रयासों को ही शोध कहा जाने लगा है। अतः शोध ज्ञान की खोज से सम्बन्धित है। सामाजिक शोध द्वारा प्राप्त तथ्यों को जब परस्पर सम्बन्धित किया जाता है तो एक सिद्धान्त का निर्माण होता है। समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग इसके सामान्य जीवन में व्यवहार के विपरीत अर्थ के रूप में नहीं किया जाता है। सिद्धान्त से अभिप्राय तथ्यों के क्रमबद्ध अवधारणात्मक ढाँचे से है। इस प्रकार, शोध तथा सिद्धान्त परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक-दूसरे को प्रोत्साहित करते हैं।

5.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई में सिद्धान्त की अवधारणा को समझाने का प्रयास किया गया है। इसके साथ ही शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध को स्पष्ट करना भी इस इकाई का उद्देश्य है। आशा है कि इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप-

सिद्धान्त की अवधारणा को समझ पाएँगे।
शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण कर पाएँगे।
शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध को स्पष्टतया समझ पाएँगे।
गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध का ज्ञान प्राप्त कर पाएँगे।

5.3 सिद्धान्त की अवधारणा का स्पष्टीकरण (Clarification of the concept of theory)

सिद्धान्त वैज्ञानिक अन्वेषण का महत्त्वपूर्ण चरण है। गुड एवं हैट (Goode and Hatt) ने इसे विज्ञान का एक उपकरण माना है क्योंकि इससे हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का पता चलता है, तथ्यों को सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा परस्पर सम्बन्धित करने के लिए इससे अवधारणात्मक प्रारूप प्राप्त होता है, इससे तथ्यों का सामान्यीकरण के रूप में संक्षिप्तीकरण होता है तथा इससे तथ्यों के बारे में भविष्यवाणी करने एवं ज्ञान में पाई जाने वाली त्रुटियों का पता चलता है।

कई बार सिद्धान्त को तथ्यों का योग मात्र ही मान लिया जाता है जो ठीक नहीं है तथा यदि हम इस अर्थ में सिद्धान्त को परिभाषित करते हैं तो इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जाता है। तथ्य एक आनुभविक रूप से प्रमाणित अवलोकन है तथा सिद्धान्त के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है सिद्धान्त शब्द किसी वस्तु या घटना के परिकल्पनात्मक स्वरूप को इंगित करता है। यह घटनाओं के कारणों की व्याख्या से सम्बन्धित है। इसमें 'क्यों' और 'कैसे' जैसे प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास किया जाता है।

समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का प्रयोग तीन प्रमुख अर्थों में किया जाता है - सामान्यीकरण के अर्थ में, आनुभविक सिद्धान्त के रूप में तथा व्याख्यात्मक सिद्धान्त के रूप में। अनेक विद्वान् यह मानते हैं कि सिद्धान्त से अभिप्राय केवल मात्र सामाजिक विश्व के बारे में सामान्यीकरण तथा इसका वर्गीकरण है। सामान्यीकरण का क्षेत्र कुछ मूर्त घटनाओं से लेकर अत्यधिक अमूर्त एवं समाज के सम्पूर्ण इतिहास के सामान्य सिद्धान्त तक विस्तृत हो सकता है। आनुभविक अर्थात् अनुभवपरक दृष्टि से सिद्धान्त को ऐसे कथन माना जा सकता है जिसके आधार पर व्यवस्थित रूप से जाँच-पड़ताल की जाती है। इस अर्थ में प्रयोग किए जाने वाले सिद्धान्त को 'प्रत्यक्षवाद' के नाम से भी जाना जाता है। जब सिद्धान्त शब्द का प्रयोग व्याख्यात्मक अर्थ में किया जाता है तो इसे केवल घटनाओं की व्याख्या तक ही सीमित करने का प्रयास किया जाता है। ऐसे सिद्धान्त कारणात्मक सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं को प्रकट

करने वाले होते हैं। अवधारणात्मक ढाँचा होने के नाते सिद्धान्तों को प्रत्यक्ष रूप में देखा तो नहीं जा सकता, परन्तु इनके प्रभावों को अनुभव किया जा सकता है।

सिद्धान्त के अर्थ के बारे में पाए जाने वाले एक सामान्य भ्रम को दूर करना भी अनिवार्य है। इस भ्रम का कारण सिद्धान्त जैसी अन्य समाजशास्त्रीय अवधारणाओं के अर्थ को जानने हेतु अंग्रेजी - हिन्दी शब्दकोशों का भी प्रयोग करना है। वास्तविकता यह है कि समाजशास्त्र में प्रयुक्त अवधारणाएँ इनके सामान्य अथवा शब्दकोशीय अर्थ से भिन्न अर्थ रखती है। उदाहरणार्थ- 'सिद्धान्त' शब्द का शब्दकोशीय अर्थ 'व्यवहार के विपरीत' अथवा 'अव्यावहारिक' है। इसलिए बहुधा यह कहा जाता है कि जो सिद्धान्त में उपयुक्त होता है वह अनिवार्य रूप से व्यवहार में नहीं । समाजशास्त्र में सिद्धान्त शब्द का अर्थ व्यवहार के विपरीत कदापि नहीं है ।

प्रमुख विद्वानों ने इसकी परिभाषाएँ निम्न प्रकार से दी हैं-

गुड एवं हैट (Goode and Hatt) के अनुसार – **"एक वैज्ञानिक के लिए सिद्धान्त का अर्थ तथ्यों में पाए जाने वाले सम्बन्धों से अथवा उन्हें निश्चित क्रम प्रदान करने से है।" जैटरबर्ग (Zetterberg)** के अनुसार – **"सिद्धान्त सुव्यवस्थित रूप से सम्बन्धित प्रस्तावनाओं का कुलक है।" फिलिप्स (Phillips)** के अनुसार – **"सिद्धान्त को प्रस्तावनाओं में पाए जाने वाले विशिष्ट सम्बन्धों के अंश के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक सिद्धान्त का मूल्यांकन इस अंश की मात्रा, प्रामाणिकता, विषय-क्षेत्र तथा व्याख्या एवं भविष्यवाणी की क्षमता के आधार पर किया जा सकता है।" लिन (Lin)** के अनुसार – "एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनमें से कुछ का आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त उन प्रस्तावनाओं से बनता है जिनका कि आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है। सिद्धान्त को सामान्यतः नियम भी मान लिया जाता है, परन्तु सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में अभी तक ऐसे सार्वभौमिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है जिन्हें नियम कहा जा सके। **फेयरचाइल्ड (Fairchild)** के शब्दों में, **"सामाजिक घटना के बारे में एक ऐसा सामान्यीकरण जो पर्याप्त रूप में वैज्ञानिक ढंग से स्थापित हो चुका है तथा समाजशास्त्रीय व्याख्या के लिए एक विश्वसनीय आधार बन सकता है, सिद्धान्त कहलाता है।"** इसी भाँति, **पारसन्स (Parsons)** के मतानुसार, **"एक वैज्ञानिक सिद्धान्त को आनुभविकता के सन्दर्भ में तार्किक रूप में परस्पर सम्बन्धित सामान्य अवधारणाओं के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"**

विज्ञान का अन्तिम उद्देश्य सिद्धान्तों का निर्माण करके घटनाओं की व्याख्या करना है । दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि सिद्धान्त सामाजिक वास्तविकता के बारे में ही अवलोकित प्रस्तावनाओं का सार है। समाजशास्त्र में प्रयोग की जाने वाली अवधारणाओं की अस्पष्टता के कारण अभी अधिक सिद्धान्तों का निर्माण नहीं किया गया है।

वे सिद्धान्त जो अधिक सुव्यवस्थित नहीं हैं, प्ररूप अथवा प्रतिरूप (Model) कहे जा सकते हैं । प्रतिरूप किसी सामाजिक घटना अथवा इकाई के व्यवहार के बारे में आनुभविक सिद्धान्त बनाने के लिए निर्मित कुछ सैद्धान्तिक कल्पनाएँ हैं । यह कहा जा सकता है कि प्रतिरूप किसी घटना अथवा इकाई का वर्णन मात्र नहीं है, अपितु उसकी प्रमुख विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करता है। प्रतिरूप द्वारा की जाने वाली व्याख्या अवलोकित घटना के विश्लेषणकिए जाने वाले वास्तविक व्यवहार के अधिक समीप है ।

5.4 शोध की अवधारणा का स्पष्टीकरण (Clarification of the concept of research)

सामाजिक शोध का अर्थ सामाजिक घटनाओं या तथ्यों के बारे में नवीन जानकारी प्राप्त करना, प्राप्त ज्ञान में वृद्धि करना अथवा जिन सिद्धान्तों एवं नियमों का निर्माण किया गया है उनमें किसी प्रकार का संशोधन करना

है। यद्यपि शोध एवं सामाजिक शोध की अवधारणाओं को पिछली इकाई में स्पष्ट किया जा चुका है, तथापि यहाँ पर भी इसको संक्षेप में समझाने का प्रयास किया गया है। किसी वस्तु, व्यक्ति, घटना आदि के सम्बन्ध में सावधानीपूर्वक खोज करना तथा तथ्यों या सिद्धान्तों का पता लगाने हेतु विषय - सामग्री की जाँच-पड़ताल करना शोध कहलाता है।

सामाजिक शोध की परिभाषाएँ विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से दी हैं-

मोजर (Moser) के अनुसार – **"सामाजिक प्रघटनाओं एवं समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए की गई व्यवस्थित खोज ही सामाजिक शोध है।" बोगार्डस (Bogardus)** के अनुसार - "साहचर्य में अर्थात् एक साथ रहने वाले लोगों के जीवन में क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं की खोज ही सामाजिक शोध है।" **यंग(Young)** के अनुसार – **"सामाजिक शोध नवीन तथ्यों की खोज, पुराने तथ्यों के सत्यापन, उनके क्रमबद्ध पारस्परिक सम्बन्धों, कारणों की व्याख्या तथा उन्हें संचालित करने वाले प्राकृतिक नियमों के अध्ययन की सुनियोजित पद्धति है।"** उनके अनुसार शोध के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं- प्रथम, नवीन तथ्यों का पता लगाना अथवा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच एवं परीक्षण करना; द्वितीय, उपयुक्त सैद्धान्तिक सन्दर्भ में उनके क्रमों, अन्तर्सम्बन्धों तथा कार्य-कारण व्याख्याओं का विश्लेषण करना; तथा तृतीय, नवीन वैज्ञानिक यन्त्रों, आवधारणाओं और सिद्धान्तों का निर्माण करना है जिनसे कि मानवीय व्यवहार का विश्वसनीय और प्रमाणित अध्ययन किया जा सके।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक शोध सामाजिक सम्बन्धों, घटनाओं तथा तथ्यों से सम्बन्धित है जिसमें इनकी व्याख्या, कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज, नवीन तथ्यों की खोज तथा पुराने तथ्यों की प्रामाणिकता की जाँच वैज्ञानिक ढंग से करने का प्रयास किया जाता है। अतः सामाजिक शोध एक व्यवस्थित पद्धति है जिसमें सामाजिक तथ्यों की वास्तविकता, उनके कार्य-कारण सम्बन्धों एवं प्रक्रियाओं के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। जब हम कहते हैं कि शोध से अभिप्राय वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त ज्ञान से है, तो हमारा अभिप्राय शोध में निरीक्षण, परीक्षण, तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण तथा सामान्यीकरण के आधार पर वस्तुस्थिति की तार्किक ढंग से विवेचना करने से है।

5.5 शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध (Relation Between Research and Theory)

शोध एवं सिद्धान्त परस्पर एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं। यदि यह कहा जाए कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। शोध एवं सिद्धान्त में परस्पर सम्बन्ध निम्नलिखित दो रूपों में समझा जा सकता है-

(अ) शोध को सिद्धान्त का योगदान (Contribution of theory to research)- किसी भी विषय में सिद्धान्तों का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है तथा इन्हीं से शोध को दिशा-निर्देश मिलते हैं। समाजशास्त्र इनमें कोई अपवाद नहीं है क्योंकि इसमें भी समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को अधिक उपयोगी बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। **रोबर्ट के० मर्टन (Robert K. Merton)** के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को निम्नांकित छह प्रकार से प्रभावित करता है-

(1) पद्धतिशास्त्र के विकास में सहायता देना (To Assist in The Development of Methodology)- समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के पद्धतिशास्त्र को प्रभावित करता है क्योंकि बिना पद्धतिशास्त्र के कोई भी शोध सम्भव नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध के निष्कर्षों को वास्तविक दिशा-निर्देश देता है

(2) सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण विकसित करना (Developing a General Sociological Perspective)- सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर हमें आनुभविक शोध की रूपरेखा का निर्माण करने में सहायता मिलती है। अन्य शब्दों में, सामान्य समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण ही उपकल्पनाओं का निर्माण करने में सहायक है। सामान्यतः विद्वान् यह स्वीकार करते हैं कि समाजशास्त्रीय शोध अथवा उपकल्पना समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से सम्बन्धित होनी चाहिए। अन्य शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त यह निर्धारित करता है कि आनुभविक शोध अथवा उपकल्पना कैसी होनी चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को एक विशिष्ट दृष्टिकोण प्रदान करता है।

(3) समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विश्ले" गण में सहायता देना (To Help Analyse Sociological Concepts)- समाजशास्त्रीय सिद्धान्त से हमें समाजशास्त्रीय अवधारणाओं का विष्ले"ाण करने में सहायता मिलती है। इन अवधारणाओं के स्पष्टीकरण के अभाव में न ही तो सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है और न ही आनुभविक शोध अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्तुतः अवधारणाएँ शोध में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करके तथा इनके निर्माण में विशेष रूप से सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त समाजशास्त्र में हो रहे आनुभविक शोध में प्रयुक्त उपकल्पनाओं का एक प्रमुख आधार है। इससे अवधारणाओं के निर्माण में ही सहायता नहीं मिलती अपितु इनके वर्गीकरण में भी सहायता मिलती है जो कि (अर्थात् वर्गीकरण) शोध में विशेष महत्त्व रखता है।

(4) उत्तर-कारकीय समाजशास्त्रीय विश्लेगण में सहायता देना (To assist in Post-Causal Sociological Analysis)- समाजशास्त्रीय सिद्धान्त उत्तर - कारकीय समाजशास्त्रीय विष्लेण में सहायक है अर्थात् यह आनुभविक शोध द्वारा संकलित तथ्यों के विष्लेण में सहायता देता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त हमें अनेक ऐसी प्रतिस्थापनाएँ प्रदान करते हैं जिनके आधार पर तथ्यों को संकलित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध द्वारा एकत्रित तथ्यों की व्याख्या करने तथा उनके बारे में भविष्यवाणी करने में सहायक है। तथ्यों के आधार पर समाजशास्त्री भविष्यवाणी कर सकते हैं, चाहे इसकी उपयोगिता सीमित ही क्यों न हो।

(5) आनुभविक सामान्यीकरण में सहायता देना (Aiding in Empirical Generalization)- समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक आनुभविक सामान्यीकरण प्रस्तुत करता है जिन्हें हम शोध द्वारा प्रमाणित करते हैं। अतः मर्टन के अनुसार समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध के लिए अनेक प्रस्तावनाएँ प्रस्तुत करता है जिनको शोध के द्वारा प्रमाणित व पुनःप्रमाणित किया जा सकता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध द्वारा प्राप्त विस्तृत एवं व्यापक ज्ञान को अमूर्त रूप में भी प्रस्तुत करता है। इस प्रकार, यह सामान्यीकरण के साथ-साथ विस्तृत ज्ञान के संक्षिप्तीकरण में भी सहायक है।

(6) नवीन समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता देना (To Help in The Development of New Sociological Theories)- समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को दिशा प्रदान करके नवीन सिद्धान्तों के निर्माण में सहायता प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध को केवल दृष्टिकोण प्रदान करने के साथ-साथ उसे एक निश्चित दिशा भी देता है। सिद्धान्त से ही हमें यह पता चलता है कि कौन-से कारण हमारी शोध समस्या की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। अतः समाजशास्त्रीय सिद्धान्त शोध को दिशा प्रदान करता है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त आनुभविक शोध में रह गई कमियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है ताकि इनको दूर करके अधिक विस्तृत एवं सार्वभौमिक सिद्धान्त बनाए जा सकें।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सिद्धान्त का प्रमुख कार्य क्रमबद्ध ज्ञान का संचय करना है तथा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त इसमें कोई अपवाद नहीं है। समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के आधार पर उपकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है, नवीन तथ्यों का संकलन किया जाता है तथा पहले से निर्मित सिद्धान्त में संशोधन किया जाता है। इस प्रकार,

समाजशास्त्रीय सिद्धान्त द्वारा आनुभविक शोध को दिए जाने वाले योगदान के परिणामस्वरूप ज्ञान की निरन्तर वृद्धि होती रहती है। नवीन तथ्यों के आधार पर सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा होती रहती है तथा कई बार नए सिद्धान्तों का विकास भी आनुभविक सिद्धान्त से प्राप्त तथ्यों के आधार पर ही होता है।

(ब) सिद्धान्त को शोध का योगदान (Contribution of Research to Theory)- जिस प्रकार सिद्धान्त शोध में सहायक है, ठीक उसी प्रकार शोध भी सिद्धान्त के निर्माण में सहायक है। मर्टन के अनुसार सिद्धान्त के निर्माण में शोध की सक्रिय भूमिका होती है। उनके अनुसार समाजशास्त्र में सिद्धान्त को आनुभविक शोध का योगदान निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है-

(1) आकस्मिक खोज में सहायता देना (Helping in Accidental Discovery)- शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का निर्माण करने में सहायक है। कई बार ऐसे शोध आकस्मिक या अप्रत्याशित खोज में सहायक होते हैं जिनका शोधकर्ता ने पहले से अनुमान ही नहीं लगाया था। मर्टन के मत में आनुभविक शोध से प्राप्त नए तथ्यों के आधार पर सामाजिक सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है अथवा विद्यमान सिद्धान्त को आगे बढ़ाया जा सकता है।

(2) सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण में सहायता देना (Helping in Theoretical Reformulation)- शोध समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को पुनर्व्यवस्थित करने एवं सैद्धान्तिक पुर्निनर्माण करने में सहायक होता है। शोध के आधार पर ही हम प्रचलित धारणाओं का बार-बार अवलोकन करके उनकी प्रामाणिकता की जाँच करते हैं तथा प्रचलित सिद्धान्तों को एक नए साँचे में ढालने का प्रयास करते हैं।

(3) सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता देना (To Help Give a New Direction to Theoretical Interest)- शोध सैद्धान्तिक रुचि को नवीन मोड़ देने में सहायता प्रदान करता है अर्थात् आनुभविक शोध में समाजशास्त्रीय सिद्धान्त का मार्गदर्शन करता है। मर्टन के मतानुसार शोध कार्य प्रचलित सिद्धान्तों को पुनः नए साँचे में ढालने एवं सैद्धान्तिक रुचि को नया मोड़ देने में अपना योगदान देता है।

(4) **अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता देना (To help Clarify Concepts)-** शोध का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त को सबसे प्रमुख योगदान यह है कि इससे समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की अनेक अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में सहायता मिलती है। अवधारणाओं का स्पष्टीकरण समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की प्रामाणिकता को सिद्ध करने के लिए आवश्यक है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि सिद्धान्त एवं शोध दोनों घनिष्ठ रूप से परस्पर सम्बन्धित हैं तथा दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों को सिक्के के ऐसे दो पहलू माना जा सकता है जिन्हें एक-दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है। **एक** ओर, सिद्धान्त शोध को प्रेरित करता है तो **दूसरी** ओर, शोध से प्राप्त आँकड़े एवं तथ्य सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक होते हैं। **सैल्टिज, जहोदा एवं अन्य विद्वानों (Selltiz Jahoda and Others)** के मतानुसार, **"सिद्धान्त तथा शोध का सम्बन्ध परस्पर सहयोग का होता है। सिद्धान्त उन क्षेत्रों की ओर ध्यान दिलाते हैं जिनमें शोध उपयोगी होता है। दूसरी ओर शोध से प्राप्त निष्कर्ष सिद्धान्तों का मूल्यांकन कर सकते हैं तथा नए सिद्धान्तों को बनाने एवं पुराने सिद्धान्तों को बदलने हेतु सुझाव दे सकते हैं। सैद्धान्तिक विचारों द्वारा प्रेरित शोध नवीन सैद्धान्तिक परिणाम उत्पन्न करता है जिससे नए शोधों हेतु मार्गदर्शन प्राप्त होता है तथा यह क्रम लगातार चलता रहता है। सैद्धान्तिक व्याख्या के अभाव में शोध कार्य तथा शोध के अभाव में सिद्धान्त बनाना सम्भव नहीं है।"**

5.6 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध (Qualitative and Quantitative Research)

प्रत्येक विषय की अपनी एक विषय-वस्तु होती है जिसका अध्ययन करने के लिए उस विषय में विशिष्ट पद्धतियाँ होती हैं। इन्हीं विशिष्ट पद्धतियों के आधार पर एक विषय को दूसरे विषय से पृथक् किया जाता है।

समाजशास्त्र में भी विषय-वस्तु का अध्ययन कुछ विशिष्ट पद्धतियों की सहायता से किया जाता है । जो पद्धतियाँ संख्याओं एवं माप को महत्त्व देती हैं उन्हें हम गणनात्मक पद्धतियाँ कहते हैं। इन पद्धतियों में सामाजिक सर्वेक्षण का प्रमुख स्थान है। अवलोकन (सहभागी अवलोकन को छोड़कर), प्रश्नावली, अनुसूची तथा साक्षात्कार गणनात्मक पद्धतियाँ ही मानी जाती हैं। इन पद्धतियों द्वारा सूचना संकलन करने के पश्चात् सारणीयन किया जाता है तथा सांख्यिकीय के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं । गुणात्मक पद्धतियाँ केवल गुणों को महत्त्व देती हैं संख्याओं को नहीं। इनमें अध्ययनरत् इकाइयों का वर्णन मात्र किया जाता है अर्थात् उनका केवल विवरण प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार का शोध वर्तमान स्थिति की व्याख्या तथा विवेचना प्रस्तुत करता है। इसका सम्बन्ध उन स्थितियों, व्यवहारों या सम्बन्धों से है जिनका अस्तित्व वर्तमान में है अथवा उन दृष्टिकोणों या मनोवृत्तियों से है जिनका वर्तमान में प्रचलन है। सहभागी अवलोकन, वैयक्तिक अध्ययन, अन्तर्वस्तु विष्ले"ाण तथा जीवन इतिहास गुणात्मक पद्धतियाँ मानी जाती हैं। इन पद्धतियों के प्रयोग से स्पष्ट है कि शोध गुणात्मक अथवा गणनात्मक किसी भी रूप में हो सकता है।

वस्तुतः शोध का प्रमुख लक्ष्य वैज्ञानिक पद्धति के प्रयोग द्वारा प्रश्नों के उत्तर खोजना है। इसका उद्देश्य अध्ययनरत समस्या के अन्दर छिपी यथार्थता का पता लगाना है या उस सब की खोज करना है जिसकी जानकारी समस्या के बारे में नहीं है । यद्यपि प्रत्येक शोध के अपने विशिष्ट लक्ष्य हो सकते हैं, तथापि इन्हें विद्वानों (यथा सैल्टिज, जहोदा एवं अन्यों तथा सी. आर. कोठारी आदि) ने मुख्य रूप से निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित किया है-

(1) किसी घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करना अथवा इसके बारे में नवीन ज्ञान प्राप्त करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध कहते हैं)।

(2) किसी व्यक्ति, परिस्थिति अथवा समूह की विशेषताओं का सही चित्रण करना (इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को वर्णनात्मक शोध कहते हैं)।

(3) किसी वस्तु के घटित होने की आवृत्ति (Frequency) निर्धारित करना अथवा इसका किसी अन्य वस्तु के साथ सम्बन्ध निर्धारित करना (इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु किए जाने वाले शोध को निदानात्मक शोध कहते हैं) तथा

(4) विभिन्न चरों में कार्य-कारण सम्बन्धों वाली उपकल्पनाओं का परीक्षण करना (इस प्रकार के शोध को उपकल्पना - परीक्षण शोध अथवा प्रायोगिक शोध कहते हैं)।

अन्वेषणात्मक शोध का उद्देश्य अज्ञात तथ्यों की खोज करना अर्थात् तथ्यों के बारे में नवीन अन्तर्दृष्टि प्राप्त करना है ताकि यथार्थ समस्या का निर्माण किया जा सके अथवा उपकल्पनाएँ बनाई जा सकें। किसी संरचनात्मक अध्ययन करने से पहले शोधकर्ता द्वारा किसी प्रकरण के बारे में जानकारी प्राप्त करने, अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने, अग्रिम शोध के लिए प्राथमिकताओं का पता लगाने, यथार्थ परिस्थिति में शोध करने की व्यावहारिक सम्भावनाओं का पता लगाने अथवा महत्त्वपूर्ण समस्याओं का पता लगाने इत्यादि उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी अन्वेषणात्मक शोध किया जाता है । अन्वेषणात्मक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य शोध के लिए समस्या का निर्माण करना अथवा शोध के लिए उपकल्पनाएँ बनाना है। वस्तुत: ये दोनों शोध के प्रमुख चरण माने जाते हैं। सैल्टिज तथा जहोदा आदि का कहना है कि “अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना उस अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है जो अधिक निश्चित शोध हेतु सम्बद्ध उपकल्पना के निरूपण में सहायक होगा।" कई बार शोध समस्या के बारे में हमें बहुत कम जानकारी होती है अर्थात् हमें इसके सामाजिक महत्त्व, सैद्धान्तिक पहलुओं, व्यावहारिक स्वरूप तथा

इससे सम्बन्धित विश्वसनीय आँकड़ों की उपलब्धता के बारे में कोई ज्ञान नहीं होता। ऐसी स्थिति में भी अन्वेषणात्मक शोध में लचीलापन (Flexibility) पाया जाता है।

वर्णनात्मक एवं निदानात्मक शोध परस्पर सम्बन्धित शोध हैं, क्योंकि प्रथम का उद्देश्य शोध समस्या से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करना है, जबकि द्वितीय (निदानात्मक) का उद्देश्य समस्या का निदान करना है। परन्तु दोनों एक नहीं हैं तथा इनमें स्पष्ट भेद पाया जाता है। वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य समस्या के सम्बन्ध में पूर्ण, यथार्थ एवं विस्तृत तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना है। इसके द्वारा वास्तविक तथ्यों का संकलन किया जाता है और इन तथ्यों के आधार पर समस्या का वर्णनात्मक विवरण अथवा चित्रण प्रस्तुत किया जाता है। निदानात्मक शोध का उद्देश्य समस्या का निदान प्रस्तुत करना है। इसलिए यह अधिक संरचित होता है, उपकल्पनाओं द्वारा निर्देशित होता है तथा समस्या के उपचार इत्यादि पर अधिक बल देता है

प्रायोगिक अथवा परीक्षणात्मक शोध प्रयोगशाला में प्रयोग की तरह दो चरों के परस्पर सम्बन्ध का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इसमें एक नियन्त्रित (Controlled) समूह बनाया जाता है तथा दूसरा प्रायोगिक (Experimental) समूह। नियन्त्रित समूह को जैसे वह है वैसे ही रहने दिया जाता है, जबकि प्रायोगिक समूह में जिस कारक का प्रभाव देखना है उसका प्रकाशकरण (Exposure) किया जाता है। अध्ययन में वैज्ञानिक विधि के सभी चरण अपनाए जाते हैं। चैपिन (Chapin) के अनुसार, "समाजशास्त्रीय शोध में परीक्षणात्मक प्ररचना की अवधारणा नियन्त्रण की दशाओं के अन्तर्गत निरीक्षण द्वारा मानवीय सम्बन्धों के व्यवस्थित अध्ययन की ओर संकेत करती है।"

सामाजिक विज्ञानों में किया जाने वाले शोध को इसकी प्रकृति एवं अन्वेषण हेतु प्रयुक्त पद्धतियों के आधार पर मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभाजित किया जाता है - गुणात्मक शोध (Qualitative) एवं गणनात्मक शोध (Quantitative)। गुणात्मक शोध से अभिप्राय उस शोध से है जिसका उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के गुणों को उजागर करना होता है। यह एक प्रकार से वर्णनात्मक (Descriptive) अध्ययन होता है जिसमें सामाजिक घटना का वर्णन ज्यों का त्यों करने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के शोध में मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग नहीं किया जाता है। गणनात्मक शोध, जिसे मात्रात्मक शोध भी कहा जाता है, वह शोध है जिसमें मात्राओं अथवा संख्याओं का प्रयोग किया जाता है। दोनों प्रकार के शोधों की अपनी पृथक्-पृथक् प्रविधियाँ हैं। उदाहरणार्थ- सहभागी अवलोकन, साक्षात्कार निर्देशिका, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास इत्यादि गुणात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ हैं, जबकि सामाजिक सर्वेक्षण, अवलोकन, प्रश्नावली, अनुसूची एवं साक्षात्कार आदि गणनात्मक शोध की प्रमुख प्रविधियाँ मानी जाती हैं।

गुणात्मक शोध में वैधता एवं विश्वसनीयता - गुणात्मक शोध की यह माँग रहती है कि संकलित आँकड़े विश्वसनीय एवं वैध हों। विश्वसनीयता का सम्बन्ध पुनरावृत्ति (Repeatability) से है अर्थात् यदि दो शोधकर्ता एक जैसे निष्कर्ष निकालते हैं अथवा एक शोधकर्ता द्वारा निकाले गए निष्कर्ष दो समयों पर सुसंगत (Consistent) होते हैं, तो ऐसे अध्ययनों को विश्वसनीय कहा जाता है। यदि माप में निदर्शन त्रुटि (Sampling error) पाई जाती है तो उसे अविश्वसनीय माना जाता है। विश्वसनीयता की एक उच्च एवं निम्न सीमा होती है। गुणात्मक अध्ययनों में आँकड़ों की विश्वसनीयता एक गम्भीर समस्या मानी जाती है क्योंकि गुणात्मक प्रकृति के कारण इनकी विश्वसनीयता की परख करना सम्भव नहीं है। चूँकि ऐसे अध्ययनों में कोई वस्तुनिष्ठ पैमाना प्रयोग में नहीं लाया जाता। इसलिए विश्वसनीयता का प्रश्न अधिक उठाया जाता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारणों में किसी अध्ययनरत समूह की संरचना का बाह्य एवं आन्तरिक कारणों के प्रभावों से निरन्तर परिवर्तित होना, इस संरचना का समय के अन्तराल में अत्यधिक परिवर्तित हो जाना, अध्ययन सम्बन्धी कसौटी के रूप में

अन्तर आ जाना आदि प्रमुख हैं।

गुणात्मक अध्ययनों की विश्वसनीयता को मापने की भी निम्नलिखित तीन पद्धतियाँ हैं-

(1) परीक्षा-पुनर्परीक्षा पद्धति (Test-Retest Method)- विश्वसनीयता को मापने की इस पद्धति में एक ही माप को अध्ययनरत समूह पर दो समयों पर लागू किया जाता है। यदि दोनों समयों पर निष्कर्ष एक समान होते हैं, तो उस माप को विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(2) तुल्यनीय प्रकार पद्धति (Equivalent form Method)- इस पद्धति में मापन हेतु दो एक समान मापकों का निर्माण किया जाता है। यदि दोनों द्वारा एक समान निष्कर्ष प्राप्त होते हैं तो उन्हें विश्वसनीय मान लिया जाता है।

(3) आन्तरिक संगति पद्धति (Internal Consistency Method)- यह सर्वाधिक प्रचलित पद्धति है । इसमें माप में सम्मिलित प्रश्नों को स्वेच्छिक रूप में दो समूहों में विभाजित किया जाता है । इन दोनों समूहों में पाया जाने वाला सहसम्बन्ध आन्तरिक संगति तथा माप की विश्वसनीयता को दर्शाता है।

विश्वसनीयता के विपरीत, वैधता का सम्बन्ध सूचना संकलित करने में प्रयुक्त प्रविधि एवं पद्धति की यथार्थता या परिशुद्धता एवं सत्यता से है। इसमें दो बातें महत्त्वपूर्ण मानी जाती हैं- प्रथम यह कि चयनित प्रविधि या पद्धति द्वारा उसी चीज का अध्ययन किया जा रहा है जिसका कि हम करना चाहते हैं या नहीं तथा दूसरे यह अध्ययन सही रूप से किया जा रहा है या नहीं। गुणात्मक शोध में प्रविधि की वैधता को स्थापित करने में निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है-

(1) सामाजिक अवरोधों के कारण एक समूह के व्यक्ति प्रायः अपनी स्वाभाविक नापसन्दों को व्यक्त नहीं करते हैं

(2) सामान्यतया सूचनादाता उचित सम्पर्क के अभाव में सही सूचनाएँ नहीं देते हैं।

(3) शोधकर्ता एवं सूचनादाता की स्थिति में अन्तर के परिणामस्वरूप दोनों में वार्तालाप के स्तर में तारतम्य स्थापित नहीं रह पाता। यदि सूचनादाता में निम्नता की भावना (Inferiority complex) आ जाती है तो वह सूचनाओं को बढ़ा चढ़ाकर देने का प्रयास करता है।

(4) सूचनादाता अल्पसंख्यक समूहों के प्रति प्रायः अपनी स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को व्यक्त करने में संकोच करते हैं।

गुणात्मक शोधों में बहुधा किसी एक ही प्रविधि द्वारा आँकड़ों का संकलन किया जाता है जिससे आँकड़ों की विश्वसनीयता को प्रमाणित नहीं किया जा सकता है। इसलिए आँकड़ों की विश्वसनीयता बढ़ाने हेतु एक से अधिक प्रविधियों एवं स्रोतों का प्रयोग किया जाना अनिवार्य है। निर्वचन करते समय व्यक्तिनिष्ठता से बचाव भी अध्ययन की विश्वसनीयता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। वैधता हेतु गुणात्मक शोध में उपयुक्त शोध प्रविधि का चयन किया जाना तथा उसका किसी अन्य सम्पूरक प्रविधि द्वारा सत्यापन अत्यन्त आवश्यक है। निर्वचन एवं मुख्य निष्कर्षों के बारे में किसी विशेषज्ञ से विचार-विमर्श भी गुणात्मक शोध को अधिक वैध बना सकता है। गुणात्मक शोध की विश्वसनीयता एवं वैधता के बारे में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं- प्रथम, प्रासंगिक शोध प्रश्नों अथवा समस्या का निर्माण करना तथा द्वितीय, उन प्रश्नों का उत्तर देने अथवा उस समस्या के समाधान हेतु सर्वाधिक उपयुक्त प्रविधि का चयन करना । यदि इन दोनों में कोई चूक नहीं होती तो गुणात्मक शोध विश्वसनीय एवं वैध हो सकता है।

गणनात्मक (जिसे परिमाणनात्मक भी कहा जाता है) शोध का सम्बन्ध विभिन्न चरों में सम्बन्धों की स्थापना से है । यह चर भार, समय, निष्पादन, उपचार, आधुनिकीकरण इत्यादि कुछ भी हो सकते हैं। इन चरों का सूचनादाताओं के निदर्शन के आधार पर मापन करने का प्रयास किया जाता है । चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों

का प्रदर्शन सांख्यिकीय पद्धतियों; जैसे- सहसम्बन्ध, साहचर्य, प्रतिगमन इत्यादि द्वारा किया जाता है । इस प्रकार के अध्ययनों पर वे विद्वान् ज्यादा बल देते हैं जिनकी मान्यता है कि सामाजिक सिद्धान्तों के निर्माण में प्राकृतिक विज्ञानों की पद्धतियाँ उपयोगी हैं तथा समाजशास्त्र में इनका प्रयोग किया जा सकता है। इस श्रेणी के विद्वान् समाज का एक ऐसा विज्ञान बनाने पर बल देते हैं जोकि उन्हीं सिद्धान्तों एवं प्रक्रियाओं पर आधारित होगा जो प्राकृतिक विज्ञानों (जैसे- रसायनशास्त्र एवं जीवविज्ञान) में प्रचलित हैं । व्यक्ति का व्यवहार, द्रव्य के व्यवहार की भाँति, वस्तुनिष्ठ रूप से मापा जा सकता है। जिस प्रकार द्रव्य का व्यवहार भार, तापमान एवं दबाव जैसे मापों द्वारा मापा जा सकता है, ठीक उसी प्रकार से मानव व्यवहार को वस्तुनिष्ठ रूप से मापने की पद्धतियों का विकास करना सम्भव है। ऐसे विद्वान् यह भी स्वीकार करते हैं कि मानव व्यवहार को उसी प्रकार से समझा जा सकता है जिस प्रकार से द्रव्य के व्यवहार को समझा जा सकता है । द्रव्य की भाँति, व्यक्ति भी बाहरी उद्दीपनों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं तथा उनके इस व्यवहार को इसी प्रतिक्रिया के रूप में समझा जा सकता है ।

सम्बन्धों के गणनात्मक सम्बन्धी अध्ययन मुख्य रूप से निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं-

(1) वर्णनात्मक अध्ययन (Descriptive Study)- इस प्रकार के अध्ययनों में व्यवहार या परिस्थितियों को परिवर्तित करने हेतु कोई प्रयास नहीं किया जाता है। इन्हें उसी रूप में मापने का प्रयास किया जाता है जिस रूप में वे विद्यमान होती हैं। इस प्रकार के अध्ययनों को प्रेक्षणनात्मक अध्ययन (Observational studies) भी कहा जाता है क्योंकि इसमें अध्ययन - वस्तु का उसमें बिना किसी हस्तक्षेप के अवलोकन किया जाता है ।

(2) प्रायोगिक अध्ययन (Experimental study)- प्रायोगिक अध्ययनों में दो चरों में सम्बन्ध स्थापित करने हेतु उनका मापन किया जाता है तथा फिर नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप कर पुन: मापन किया जाता है ताकि यह ज्ञात हो सके कि नियन्त्रण एवं हस्तक्षेप का परिणाम क्या हुआ। इस प्रकार के अध्ययनों में एक चर को नियन्त्रित चर तथा दूसरे को आश्रित चर कहा जाता है। इन्हें देशान्तरीय (Longitudinal) अथवा पुनरावृत्ति मापन अध्ययन भी कहा जाता है।

गणनात्मक शोध एवं अनुमापन से सम्बन्धित अध्ययनों की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं-

(1) विभिन्न चरों में पाए जाने वाले सम्बन्धों का यथार्थ मापन सम्भव है।

(2) सामाजिक व्यवहार एवं घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययनों में भी कारण - प्रभाव (Cause - effect) सम्बन्धों की स्थापना करना सम्भव है।

(3) मानव व्यवहार एवं सामाजिक घटनाओं के व्यवहार एवं द्रव्य के व्यवहार में अनेक समरूपताएँ पाई जाती हैं।

(4) मूर्त सामाजिक घटनाओं के साथ-साथ अनेक अमूर्त विषयों, जैसे- सामाजिक संश्लिष्टता, सामाजिक दूरी, मूल्यों में भिन्नता इत्यादि का परिमाणात्मक अध्ययन सम्भव है तथा इनके माप हेतु पद्धतियाँ उपलब्ध हैं अथवा उनका निर्माण किया जा सकता है।

(5) पैमानों के निर्माण द्वारा घटना के विभिन्न अंगों अथवा पक्षों में पाए जाने वाले तारतम्य को ज्ञात किया जा सकता है।

(6) परिमाणात्मक अध्ययनों में मापन हेतु अपनाए गए पैमानों की विश्वसनीयता की जाँच अनेक पद्धतियों द्वारा की जा सकती है। इन पद्धतियों में परीक्षा - पुनर्परीक्षा (Test-retest) पद्धति, विविध स्वरूप (Multiple form) पद्धति तथा दो भागों में बाँटने (Split - half) की पद्धति प्रमुख हैं।

(7) सामाजिक शोधों में अपनाए जाने वाले मापों की प्रामाणिकता की भी जाँच की जा सकती है। गुड एवं हैट ने पैमानों की प्रामाणिकता की जाँच करने की निम्नलिखित चार पद्धतियों का उल्लेख किया है-

(अ) तार्किक प्रमाणीकरण (Logical Validation)- इस पद्धति के अन्तर्गत यदि पैमाना तर्क एवं सामान्य ज्ञान के अनुकूल प्रतीत होता है तो उसे प्रमाणित माना जा सकता है। यद्यपि यह पद्धति सर्वाधिक प्रयोग में लाई गई है, तथापि गुड एवं हैट का कहना है कि केवल इसी पद्धति द्वारा पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करना पर्याप्त नहीं है। पैमानों के सन्तोषजनक प्रयोग के लिए तार्किक प्रमाणीकरण के अतिरिक्त अन्य विधियों की भी आवश्यकता होती है।

(ब) पंचों की राय (Jury Opinion)- यह पद्धति भी तार्किक प्रमाणीकरण का प्रसार - मात्र है क्योंकि इसमें तर्क की पुष्टि पैमाना लागू किए जाने वाले व्यक्तियों के चुने हुए समूह द्वारा की जाती है । पैमाने द्वारा प्रमाणित परिणामों को विशेषज्ञों या पंचों के सामने रखा जाता है। यदि उनकी राय में परिणाम ठीक है तो पैमाने को प्रमाणित मान लिया जाता है।

(स) परिचित समूह (Known Groups)- इस पद्धति में विशेषज्ञों की अपेक्षा पैमाने का प्रयोग उन समूहों पर किया जाता है जिनके विषय में हम पहले से परिचित होते हैं। उदाहरणार्थ - यदि चर्च के बारे में मनोवृत्तियों को मापना है तो पैमाने का प्रयोग पहले चर्च जाने वाले समूह पर किया जाएगा, फिर चर्च न जाने वाले समूह पर किया जाएगा। यदि दोनों परिचित परन्तु विरोधी समूहों से प्राप्त परिणामों की तुलना में एक-दूसरे के विपरीत परिणाम मिलते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

(द) स्वतन्त्र मापदण्ड (Independent Criteria)- इसमें पैमाने की प्रामाणिकता की जाँच करने के लिए उसे विभिन्न स्वतन्त्र कारकों पर भी लागू किया जाता है। यदि घटना तथा उससे सम्बन्धित विभिन्न स्वतन्त्र कारकों द्वारा एक समान परिणाम प्राप्त होते हैं तो पैमाने को प्रामाणिक माना जा सकता है।

यद्यपि गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध परस्पर विपरीत मान्यताओं पर आधारित होते हैं, तथापि सामाजिक यथार्थता को समझने हेतु इनका मिश्रित रूप भी प्रयोग में लाया जा सकता है। हो सकता है कि शोध का एक भाग गुणात्मक प्रकृति का हो, जबकि दूसरे भाग में गुणात्मक आँकड़ों की पुष्टि हेतु गणनात्मक शोध का सहारा लिया जाए। जैसे-जैसे शोध में प्रयुक्त पद्धतियों का परिष्कार होता जा रहा है, वैसे-वैसे शोध को अधिक से अधिक तार्किक, विश्वसनीय एवं प्रामाणिक बनाने हेतु गुणात्मक एवं गणनात्मक दोनों प्रकार की पद्धतियों का प्रयोग किया जाने लगा है।

5.7 गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में अन्तर (Difference Between Qualitative and Quantitative Research)

गुणात्मक शोध मुख्य रूप से अन्वेषणात्मक शोध होता है। इसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है। यह समस्या के बारे में अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है अथवा नवीन विचार या उपकल्पना विकसित करने में सहायता प्रदान करता है। इससे गणनात्मक शोध में सहायता प्राप्त होती है। गुणात्मक शोध का प्रयोग चिन्तन एवं मतों में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का पता लगाने तथा समस्या के बारे में गहराई तक पहुँचने हेतु भी किया जाता है। गुणात्मक सामग्री संकलन करने की पद्धतियाँ असंरचित अथवा अर्द्धसंरचित होती हैं। कुछ सामान्य पद्धतियाँ सामूहिक वार्तालाप, व्यक्तिगत साक्षात्कार, वैयक्तिक अध्ययन, जीवन इतिहास, नृजातीय वर्णन तथा सहभागी अवलोकन मानी जाती हैं। इस प्रकार के शोध में निर्दशन का आकार विशेष रूप से लघु होता है तथा सूचनादाताओं का चयन निर्धारित संख्या के अनुसार किया जाता है। अधिकतर विद्वान् गुणात्मक शोध को असंरचित एवं अन्वेषणात्मक पद्धति मानते हैं जिसकी सहायता से जटिल प्रघटनाओं को समझने का प्रयास किया जाता है। ऐसे शोध का उद्देश्य गुणात्मक शोध हेतु विचार अथवा उपकल्पना निर्मित करना भी हो सकता है।

गुणात्मक शोध के विपरीत गणनात्मक शोध नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझने हेतु रूपान्तरित किया जा सके। इसमें मनोवृत्तियों, मतों, व्यवहार तथा अन्य चरों को परिमाणात्मक दृष्टि से समझने का प्रयास किया जाता है। गणनात्मक शोध में निर्दशन बृहत् आकार का होता है। सामग्री के संकलन हेतु सामाजिक सर्वेक्षण, साक्षात्कार, दूरभाष साक्षात्कार, अनुसूची जैसी पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है।

गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले अन्तर को निम्नलिखित तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है-

अन्तर का बिन्दु	गुणात्मक शोध	गणनात्मक शोध
प्रकृति	समग्र (Holistic)	विशेषीकृत(Particularis)
दृष्टिकोण	व्यक्तिनिष्ठ (Subjective)	वस्तुनिष्ठ (Objective)
शोध का प्रकार	अन्वेषणात्मक (Exploratory)	निर्णयात्मक(Conclusiv)
तर्क	आगमनात्मक (Inductive)	निगमनात्मक(Deductiv)
निर्दशन	उद्देश्यपूर्ण (Purposive)	दैव (Random)
समग्री	मौखिक (Verbal)	मापन योग्य (Measurable)
अन्वेषण	प्रक्रिया-केन्द्रित (Process-oriented)	परिणाम - केन्द्रित (Result-oriented)
उपकल्पना	निर्मित (Generated)	प्रमाणित (Tested)
विश्लेषण के तत्त्व	शब्द, चित्र एवं वस्तुएँ (Words, pictures and objects)	संख्यात्मक सामग्री (Numerical data)
उद्देश्य	अनवरत प्रक्रियाओं में प्रयुक्त विचारों का अन्वेषण एवं खोज (To explore and discover ideas used in the ongoing processes.)	चरों में कार्य-कारण सम्बन्धों का परीक्षण (To examine cause and effect relationship between variables.)
पद्धतियाँ	गहन साक्षात्कार, समूह वार्तालाप जैसी असंरचित पद्धतियाँ (Non- structured techniques like In- depth interviews, group discussions etc.)	सर्वेक्षण, प्रश्नावली, अवलोकन जैसी संरचित पद्धतियाँ (Structured techniques such as surveys, questionnaires and observations.)
परिणाम	प्रारम्भिक समझ विकसित करना (Develops initial understanding)	अन्तिम कार्यवाही हेतु सुझाव देना (Recommends final course of action)

उपर्युक्त तालिका से गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में पाए जाने वाले सभी प्रकार के अन्तर स्पष्ट हो जाते हैं।

5.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. **.....** एक प्रमुख शिक्षा प्रणाली है जो हमें सोचने की क्षमता विकसित करने में मदद करती है। (गणित, साहित्य)
2. ..... का महत्व न केवल हमारी संस्कृति में है, बल्कि हमारे रोज़मर्रा के जीवन में भी है। (संस्कृति, राजनीति)
3. ..... की अच्छी समझ हमें विभिन्न प्रकार के कार्यों में सफलता प्राप्त करने में मदद करती है। (ज्ञान, विज्ञान)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. **गुणात्मक शोध में संख्याओं का उपयोग किया जाता है।**
2. **गणनात्मक शोध में सांख्यिकीय विश्लेषण का प्रयोग होता है।**

5.9 सारांश (Summary)

सिद्धान्त वैज्ञानिक शोध का एक महत्त्वपूर्ण चरण है। इसे विज्ञान का उपकरण भी माना जाता है क्योंकि इसकी सहायता से संकलित तथ्यों को सुव्यवस्थित करने, वर्गीकृत करने तथा उनमें परस्पर सम्बन्ध स्थापित करने हेतु अवधारणात्मक प्रारूप अथवा ढाँचा प्राप्त होता है। क्योंकि सिद्धान्तों का निर्माण शोध द्वारा प्रमाणित तथ्यों द्वारा किया जाता है, इसलिए सिद्धान्त एवं शोध परस्पर सम्बन्धित हैं । मर्टन जैसे विद्वानों ने इन दोनों को एक-दूसरे को प्रोत्साहन देने वाले ही नहीं, अपितु एक-दूसरे पर आश्रित भी माना है। समाजशास्त्र में शोध के अनेक प्रकार के स्वरूपों का प्रयोग किया जाता है । आज अधिकांश विद्वान् गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में विभेद करने लगे हैं। गुणात्मक शोध सामाजिक वास्तविकता के गुणों के वर्णन से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियों का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसके विपरीत गणनात्मक शोध मात्राओं से सम्बन्धित होता है तथा इसमें सांख्यिकीय पद्धतियाँ प्रमुख भूमिका निभाती हैं। इन दो प्रकार के शोधों के आधार पर समाजशास्त्र में आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयुक्त पद्धतियों को भी गुणात्मक एवं गणनात्मक श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। गुणात्मक शोध में अधिकतर सहभागी अवलोकन, जीवन इतिहास, वैयक्तिक अध्ययन, वंशावली आदि पद्धतियों का प्रयोग होता है, जबकि गणनात्मक शोध में प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, असहभागी, अवलोकन जैसी पद्धतियाँ ही आँकड़ों के संकलन हेतु प्रयोग में लायी जाती हैं। आज अनेक विद्वान् यह मानने लगे हैं कि सामाजिक यथार्थता को सामाजिक ढंग से समझने हेतु इन दोनों प्रकार के शोधों के मिश्रित रूप को अपनाया जाना चाहिए ।

5.10 शब्दावली (Glossary)

- **सामाजिक शोध (Social Research)-** सामाजिक जीवन, सामाजिक घटनाओं एवं सामाजिक जटिलताओं के सम्बन्ध में अन्वेषण के वैज्ञानिक प्रयास को सामाजिक शोध कहा जाता है।
- **सिद्धान्त (Theory)-** एक सिद्धान्त को परस्पर सम्बन्धित प्रस्तावनाओं के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिनका आनुभविक परीक्षण किया जा सकता है।
- **गुणात्मक शाध (Qualitative Research)-** गुणात्मक शोध से अभिप्राय मुख्य रूप से ऐसे अन्वेषणात्मक शोध से है जिसका प्रयोग कारणों, मतों एवं प्रेरणाओं का पता लगाने के लिए किया जाता है।

गणनात्मक शोध (Quantitative Research)- गणनात्मक शोध वह है जो नम्बरों से सम्बन्धित सामग्री के प्रयोग द्वारा समस्या को परिमाणात्मक स्वरूप प्रदान करता है ताकि सामग्री को सांख्यिकीय रूप में समझा जा सके।

5.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. गणित 2. संस्कृति 3. ज्ञान

निम्नलिखित कथनों में से सत्य / असत्य कथन चुनिये-

1. असत्य 2. सत्य

5.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- G. M. Fisher, Quoted in H. P. Fairchild (1944), **Dictionary** of **Sociology** (ed.),
- Philosophical Library, New York.
- P. V. Young (1966), **Scientific Social Surveys and Research: An Introduction to the Background, Content, Methods, Principles and Analysis of Social Studies**, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N.J.
- Bernard S. Phillips (1976), **Social Research: Strategy and Tactics**, The Macmillan
- Company, New York.
- C. A. Moser and G. Kalton (1971), **Survey Methods in Social Investigation**,
- Heinemann, London.
- C. R. Kothari (1996), Research Methodology: Methods and Techniques, Surjeet
- Publication, New Delhi.
- Claire Selltiz, Marie Jahoda, Morton Deutsch and Stuart Cook (1965), **Research**
- **Methods in Social Relations**, Holt, Rinehart and Winston, New York.
- E. S. Bogardus (1964), **Sociology**, The Macmillan Company, New York.
- F. Stuart Chapin (1947), **Experiments in Sociological Research**, Harper and Bros,
- New York.
- H. P. Fairchild (1944), **Dictionary of Sociology** (ed.), Philosophical Library, New
- York.
- Hans L. Zetterberg (1976), Quoted in Bernard S. Phillips, **Social Research: Strategy**
- **and Tactics**, The Macmillan Company, New York, p. 57.
- Nan Lin (1976), **Foundations of Social Research**, McGraw-Hill Book Company,
- New York.
- Robert K. Merton (1966), "The Sociologist as Empiricist" in Alex Inkeles (ed.),
- **Readings on Modern Sociology**, Prentice Hall, New York.
- Robert K. Merton (1968), **Social Theory and Social Structure**, The Free Press,

New York.

- Talcott Parsons (1951), **The Social System**, The Free Press, Glencoe, Illinois.
- W. J. Goode and P. K. Hatt (1965), **Methods in Social Research**, McGraw-Hill Book Company, New York.

5.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

5.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सामाजिक शोध एवं सिद्धान्त की अवधारणाएँ स्पष्ट कीजिए ।
2. सिद्धान्त किसे कहते हैं? इसमें तथा शोध में पाए जाने वाले परस्पर सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
3. सामाजिक शोध को परिभाषित कीजिए तथा गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध में भेद स्पष्ट कीजिए।
4. गुणात्मक शोध से आप क्या समझते हैं? यह गणनात्मक शोध से किस प्रकार भिन्न है ? स्पष्ट कीजिए।
5. गुणात्मक एवं गणनात्मक शोध पर एक विस्तृत लेख लिखिए।
6. मर्टन के विचारों के सन्दर्भ में शोध एवं सिद्धान्त में पाई जाने वाली पारस्परिकता की व्याख्या कीजिए।

इकाई संख्या 06 : अनुसंधान की विधियाँ
(Methods of Research)

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

6.2 उद्देश्य (Objectives)

6.3 प्रयोगात्मक शोध का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Experimental Research)

6.3.1 प्रयोगात्मक शोध की विशेषताएँ (Characteristics of Experimental Research)

6.3.2 प्रयोगात्मक शोध के लाभ या गुण (Advantages or Merits of Experimental Research)

6.3.3 प्रयोगात्मक शोध की सीमाएँ या दोष (Limitations or Demerits of Experimental Research)

6.3.4 प्रयोगात्मक शोध के प्रकार (Types of Experimental Research)

6. 4 अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि का परिचय (Introduction to the Historical Method of Research)

6.4.1 ऐतिहासिक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Historical Research)

6.4.2 ऐतिहासिक अनुसंधान के उद्देश्य (Objectives of Historical Research)

6.4.3 ऐतिहासिक अनुसंधान के पद (Positions of Historical Research)

6.4.4 ऐतिहासिक अनुसंधान में आंकड़ों की प्राप्ति के साधन (Means of Obtaining Data in Historical Research)

6.4.5 ऐतिहासिक शोध में प्रयुक्त आंकड़ों की आलोचना या मूल्यांकन (Criticism or Evaluation of Data Used in Historical Research)

6.4.6 ऐतिहासिक अनुसंधान की प्रक्रिया (The Process of Historical Research)

6.4.7 ऐतिहासिक अनुसंधान का क्षेत्र (Area of Historical Research)

6.5 केस या व्यक्ति या एकल अध्ययन विधि का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Case or Individual Study Method)

6.5.1 केस अध्ययन की विशेषताएं (Characteristics of Case Studies)

6.5.2 केस अध्ययन विधि के लाभ एवं दोष (Advantages and Disadvantages of Case Study Method)

6.6 अनुसंधान की प्रजातिक विधि का अर्थ (Meaning of Phenomenological Method of Research)

6.6.1 प्रजातिक अनुसंधान की मूल विशेषताएं (Basic Features of Species Research)

6.6.2 प्रजातिक अनुसंधान की विधि एवं प्रक्रिया (Method and Process of Species Research)

6.6.3 प्रजातिक अनुसंधान की उपयोगिता (Usefulness of Species Research)

6.6.4 प्रजातिवृत शोध की सीमाएं (Limitations of Phylogenetic Research)

6.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
6.8 सारांश (Summary)
6.9 शब्दावली (Glossary)
6.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)
6.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
6.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
6.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

शैक्षिक समस्या की प्रकृति को ध्यान में रखकर अनुसंधान की विधियों को वर्गीकृत किया जाता है। जब शोधकर्ता अध्ययन किए जाने वाले चर में जोड़ - तोड़,चयन, नियन्त्रण व परिचालन करता है तो इस प्रकार के शोध को प्रयोगात्म शोध कहा जाता है। ऐतिहासिक शोध से तात्पर्य वैसे शोध से होता है जिसमे बीती घटनाओं का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। ऐसे शोध से गत एवं वर्तमान की क्रियाओं को समझने में तो सहायता मिलती है साथ ही प्रत्याशित भविष्य को भी समझने में मदद मिलती है। शोध का केस अध्ययन विधि किसी भी इकाई का गहराई तक अध्ययन करता है। केस का अर्थ एक संस्था, राष्ट्र, धर्म, एक व्यक्ति या समूह भी हो सकता है। अनुसंधान में केस अध्ययन विधि का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है। अनुसंधान की विभिन्न विधियों में से प्रजातिक अनुसंधान भी एक महत्वपूर्ण विधि है। इसके अन्तर्गत यह विश्लेषण किया जाता है कि व्यक्ति अपनी गतिशीलता एवं क्रियाओं का प्रयक्षीकरण किस प्रकार करता है, वे अन्य व्यक्तियों से सम्बन्धों तथा प्रक्रियाओं का कैसे उपयोग करता है। प्रजातिकवृत अनुसंधान का संबंध मानवीय जैविक विकास (Ethnographic or Racial Development) से है। इनका संबंध मानव विकास के इतिहास से अधिक है। प्रस्तुत इकाई में आप अनुसंधान की विधियों के रूप में प्रयोगात्मक शोध, ऐतिहासिक शोध, केस अध्ययन, एवं प्रजातिक अनुसंधान के अर्थ, विशेषताओं, विधि एवं प्रक्रियाओं व महत्व का अध्ययन करेंगे।

6.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ✓ प्रयोगात्मक शोध का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- ✓ प्रयोगात्मक शोध की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ प्रयोगात्मक शोध की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान में प्रयोगात्मक शोध के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि के विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि के मूल उद्देश्य को स्पष्ट कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि का मूल्यांकन कर सकेंगे।
- ✓ केस अध्ययन विधि का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे।
- ✓ केस अध्ययन विधि के विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान में केस अध्ययन विधि के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसंधान की प्रजातिक विधि की विशेषताओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ प्रजातिक अनुसंधान की विधि एवं प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे ।

6.3 प्रयोगात्मक शोध का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and definitions of experimental research)

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक शोधों (Psychological and Educational Research) में प्रयोगात्मक शोध (Experimental Research) का महत्व सबसे अधिक है। सभी विज्ञानों का आदर्श प्रयोगात्मक शोध ही होता है। मनोविज्ञान को वैज्ञानिक अस्तित्व प्रयोगात्मक शोध अध्ययनों की वजह से ही मिला। प्रयोगात्मक शोध वैसे शोध को कहा जाता है जिस में प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता नियंत्रित परिस्थिति में स्वतंत्र चर या चरों में परिवर्तन लाकर और उस परिवर्तन का प्रभाव आश्रित चर पर देखता है। ऐसा करने पर प्रयोगकर्ता विश्वास के साथ कह सकता है कि उक्त परिवर्तन की वजह स्वतंत्र चर या चरों में परिवर्तन है। यही कारण है कि प्रयोगात्मक शोधों में

स्वतंत्र चर (Independent Variable) तथा आश्रित चर (Dependent Variable) के बीच कारण तथा परिणाम संबंध प्रयोगकर्ता एक विश्वास के साथ स्थापित कर पाता है।

प्रयोगात्मक शोध की परिभाषा देते हुए ए. के. सिंह (A. K. Singh, 2006) ने कहा है कि प्रयोगात्मक शोध वह शोध होता है जिसमें प्रयोगकर्ता या शोधकर्ता स्वतंत्र चर (Independent Variable) में जोड़-तोड़ (Manipulation) करके उसके प्रभाव का अध्ययन करता है तथा विभिन्न समूहों में प्रयोज्यों को यादृच्छिक ढंग से आबंटित भी करता है ताकि स्वतंत्र चर आश्रित चर (Dependent Variable) के बीच विश्वास के साथ कारण तथा परिणाम सम्बंध स्थापित हो पाए । (Experimental research is one in which the experimenter or researcher studies the effect of manipulation of independent variables with confidence and randomly assign subjects into different groups so that he may be able to establish the cause-and-effect relationship between the independent variable and the dependent variable.)

करलिंगर (Kerlinger, 2002) के अनुसार, **"प्रयोगात्मक शोध वह शोध है जिसमें अनुसंधानकर्ता कम से कम एक स्वतंत्र चर पर प्रत्यक्ष नियंत्रण रखता है तथा कम से कम एक स्वतंत्र चर को परिचालित करता है।**" (Experimental research is one in which the investigator has direct control over at least one independent variable and manipulates at least one independent variable.)

इसे आप एक उदाहरण के द्वारा समझ सकते हैं। मान लें कि प्रयोगकर्ता पुरस्कार (Reward) के प्रभाव का अध्ययन सीखने की प्रक्रिया पर करना चाहता है। इस के लिए वह प्रयोज्यों का कम से कम दो समूह लेगा जो एक दूसरे से पूर्णत: मिलते हैं। दोनों समूहों को एक समान का पाठ सीखने को दिया जाएगा। एक समूह में जल्दी सीखने के लिये कुछ पुरस्कार देने की घोषणा की जाएगी तथा दूसरे समूह में पुरस्कार की कोई बात नहीं की जाएगी। ऐसी परिस्थिति में यदि पहला समूह दूसरे समूह की अपेक्षा जल्दी सीख लेता है तो प्रयोगकर्ता यह निष्कर्ष निकालेगा कि सीखने की क्रिया पुरस्कार द्वारा तेजी से होती है। पहला समूह जिसमें स्वतंत्र चर (पुरस्कार) दिया गया था को प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) तथा दूसरा समूह जिस में स्वतंत्र चर (पुरस्कार) को अनुपस्थित रखा गया था नियंत्रित समूह (Control Group) कहते हैं। ऊपर वर्णित शोध एक प्रयोगात्मक शोध का उदाहरण है क्योंकि इस तरह के शोध में प्रयोगात्मक शोध की सभी विशेषताएं देखी जा सकती है।

6.3.1 प्रयोगात्मक शोध की विशेषताएँ (Characteristics of Experimental Research)

एक प्रयोगात्मक शोध में आप निम्नलिखित विशेषताएँ देख सकते हैं -

1. स्वतंत्र चरों पर नियंत्रण (Control over Independent Variables): करलिंगर (Kerlinger,2002) के अनुसार प्रयोगात्मक शोध में नियंत्रण की विशेषता आवश्यक रूप से पाई जाती है। यहाँ शोधकर्ता स्वतंत्र चरों पर नियंत्रण रखता है। कभी तो पूर्ण नियंत्रण होता है और कभी आंशिक नियंत्रण होता है।

2. स्वतंत्र चर या चरों का परिचालन (Manipulation of Independent Variable or Variables): प्रयोगात्मक शोध में प्रयोगकर्ता द्वारा स्वतंत्र चर या चरों में जोड़-तोड़ (Manipulation) किया जाता है। उपर्युक्त उदाहरण में पुरस्कार एक स्वतंत्र चर है जिस में जोड़-तोड़ किया जाता है। इसीलिए प्रयोगात्मक समूह में पुरस्कार दिया जाता है जबकि नियंत्रिण समूह में उसे नहीं दिया जाता है।

3. प्रयोज्यों का यादृच्छिक चयन (Random Selection of Sample): प्रयोगात्मक शोध में प्रयोगकर्ता प्रयोज्यों का चयन यादृच्छिक ढंग (Randomly) से करता है। प्रयोज्यों का चुनाव करने के बाद प्रयोगात्मक समूह

(Experimental Group) तथा नियंत्रित समूह (Controlled Group) के रूप में उसका विभाजन भी यादृच्छिक ढंग से ही किया जाता है जिससे ये समूह आपस में समान रहें।

4. आश्रित चर का मापन (Measuring Dependent Variable): प्रयोगात्मक शोध में स्वतंत्र चर के प्रभाव को आश्रित चर के रूप में मापा जाता है। जैसे पुरस्कार (स्वतंत्र चर) के प्रभाव से शिक्षण शीघ्र (Dependent Variable) होता है। यहाँ पुरस्कार का प्रभाव शिक्षण पर देखा जाता है।

5. कारण तथा परिणाम सम्बंध (Cause and Effect Relationship): प्रयोगात्मक शोध में प्रयोगकर्ता स्वतंत्र चर तथा आश्रित चर के बीच एक कारण तथा परिणाम सम्बन्ध स्थापित करने में समर्थ हो पाता है। उपर्युक्त उदाहरण में सीखना आश्रित चर (Dependent Variable) का उदाहरण है, जिस में पुरस्कार दिये जाने और नहीं दिये जाने की वजह से परिवर्तन होता है। प्रयोगात्मक समूह जिस में पुरस्कार दिया जाता है, इससे सीखने में तेजी देखी जाती है। यहाँ परिणाम शीघ्र सीखना है जिसका कारण (Cause) पुरस्कार है। जबकि नियंत्रित समूह जिस में पुरस्कार नहीं दिया जाता है इसलिये सीखने में कोई तेजी नहीं देखी जाती है।

6. ज्ञात से अज्ञात की ओर (From Known to Unknown): प्रयोगात्मक शोध में ज्ञात से अज्ञात की तरफ जाते हैं। शोधकर्ता को स्वतंत्र चर (Independent Variable) का ज्ञान रहता है क्योंकि वह स्वयं उस चर को परिचालित करता है लेकिन उसे आश्रित चर (Dependent Variable) का ज्ञान नहीं रहता है। वह स्वतंत्र चर के आधार पर आश्रित चर की खोज करता है। जैसे पुरस्कार (स्वतंत्र चर) में परिचालन कर के अर्थात् एक अवस्था में पुरस्कार देकर और दूसरी अवस्था में पुरस्कार रोक कर यह देखने का प्रयास किया जाता है कि इस के कारण सीखने में ह्रास होता है (आश्रित चर) ।

7. पृथक्कीकरण (Isolation): प्रयोगात्मक शोध में पृथक्कीकरण की विशेषता पाई जाती है। इसका अर्थ है कि शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक चरों को अलग करके उसके प्रभावों (आश्रित चर) को देखने की कोशिश करता है। ऐसा करना इसलिये संभव हो पाता है कि यहाँ अध्ययन परिस्थिति तथा स्वतंत्र चरों पर शोधकर्ता का नियंत्रण होता है।

8. पुनरावृत्ति (Replication): प्रयोगात्मक शोध में पुनरावृत्ति की विशेषता पायी जाती है। प्रयोगात्मक शोधकर्ता अपने अध्ययन को बार-बार दोहराकर प्राप्त परिणाम की विश्वसनीयता की जॉच कर सकता है। अध्ययनकर्ता का अध्ययन परिस्थिति पर पूर्ण नियंत्रण होता है इसी वजह से प्राप्त परिणाम की पुनरावृति संभव हो पाती है।

हमने प्रयोगात्मक शोध की कई विशेषताएं देखी। प्रयोगात्मक शोध का स्वरूप इन विशेषताओं के कारण ही अप्रयोगात्मक शोध के स्वरूप से स्पष्ट रूप से भिन्न होता है।

6.3.2 प्रयोगात्मक शोध के लाभ या गुण (Advantages or Merits of Experimental Research)

प्रयोगात्मक शोध में वैज्ञानिक शोध के सभी गुण पाए जाते हैं इसीलिये यह अन्य शोधों की अपेक्षा ज्यादा वैज्ञानिक है। इसके गुण निम्नलिखित हैं-

1. नियंत्रण (Control): प्रयोगात्मक शोधों में नियंत्रण का गुण मौलिक रूप से देखा जाता है। शोधकर्ता स्वतंत्र चरों (Independent Variable) पर पर्याप्त नियंत्रण रखते हैं। इसी नियंत्रण के कारण वे किसी स्वतंत्र चर या चरों का परिचालन (Manipulation) कर पाते हैं तथ असंबंद्ध चरों के प्रभावों को रोक पाते हैं। करलिंगर (Kerlinger, 2002) के अनुसार, **"शोध का एक अपूर्व गुण नियंत्रण है (The unique virtue of experimental inquiry in control) अपने इसी मौलिक गुण के कारण यह शोध अप्रयोगात्मक शोधों (Non- experimental research) से अधिक वैज्ञानिक हो पाता है।"**

2. यादृच्छिकरण (Randomization): प्रयोगात्मक शोधों में शोधकर्ता यादृच्छिकरण विधियों (Random Methods) के आधार पर प्रायोज्यों का चयन करता है और प्रयोगात्मक समूह (Experimental Group) तथा नियंत्रित समूह (controlled Group) में प्रयोज्यों का विभाजन करता है। करलिंगर (Kerlinger,2002) के अनुसार यह गुण किसी अप्रयोगात्मक शोध (Non-experimental Research) में नहीं पाया जाता है।

3. वस्तुनिष्ठता (Objectivity): प्रयोगात्मक शोधों में वस्तुनिष्ठता का गुण पाया जाता है। रेबर (Reber,1987) के अनुसार वस्तुनिष्ठ अध्ययन (objective study) में पक्षपात (Bias) तथा पूर्वधारण (Prejudice) की संभावना नहीं रहती। चूँकि यह शोध नियंत्रित परिस्थितियों में किया जाता है, इसलिए यह अध्ययन पक्षपात रहित एवं वस्तुनिष्ठ होता है।

4. परिमाणन तथा मापन (Quantification and Measurement): प्रयोगात्मक शोधों में पर्याप्त परिमापन तथा मापन का गुण पाया जाता है। ननली (Nunnally, 1967) के अनुसार प्रयोगात्मक शोधों में साख्यिकीय विधियों की सहायता से प्राप्त आकड़ों का मात्रात्मक विश्लेषण एवं निरूपण करना जिस हद तक संभव होता है उतना किसी अप्रयोगात्मक शोध में संभव नहीं है।

5. परिशुद्धता (Precision): करलिंगर (Kerlinger, 2002) के अनुसार प्रयोगात्मक शोधों में परिशुद्धता का गुण पाया जाता है। इसमें नियंत्रण अधिक रहता है इसलिये परिशुद्धता स्वत: बढ जाती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि प्रयोगात्मक शोध में पर्याप्त नियंत्रण रहने की वजह से अशुद्धि-विचलन (Error Variance) की संभावना कम हो जाती है तथा शुद्धता एवं निश्चितता अधिक पाई जाती है।

6. उच्च विश्वसनीयता (High Reliability): प्रयोगात्मक शोधों में उच्च विश्वसनीयता का गुण पाया जाता है। भिन्न-भिन्न समयों पर प्रयोगात्मक शोध के आधार पर जो परिणाम प्राप्त होते हैं उनमें अत्यधिक स्थिरता (Stability) तथा संगति (consistency) पायी जाती है। इसका मुख्य कारण है कि यहाँ अध्ययन परिस्थिति पर शोधकर्ता का पूर्ण नियंत्रण रहता है। अप्रयोगात्मक शोधों में विश्वसनीयता अपेक्षाकृत सीमित रहती है।

7. उच्च वैधता (High Validity): इस प्रकार के शोधों में भविष्यवाणी वैधता (Predictive Validity) अधिक पायी जाती है। प्रयोगात्मक शोधों के आधार पर जो परिणाम प्राप्त होते हैं उनके आलोकों में पूर्वकथन करना संभव हो पाता है। अप्रयोगात्मक शोधों में यह विशेषता अपेक्षाकृत सीमित होती है। प्रयोगात्मक शोध के उपर्युक्त गुणों के बावजूद भी इसकी कुछ कमियॉ या सीमाएँ हैं।

6.3.3 प्रयोगात्मक शोध की सीमाएँ या दोष (Limitations or Demerits of Experimental Research)

1. कृत्रिमता (Artificiality)- प्रयोगात्मक शोध में कठोर नियंत्रण रहता है इसलिए इसमें कृत्रिमता का दोष पाया जाता है। इसमें अध्ययन परिस्थिति को शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार उत्पन्न करता है तथा स्वतंत्र चर को परिचालित (Manipulate) करता है तथा आश्रित चर पर उसका प्रभाव देखता है। इस प्रकार प्रयोगात्मक शोध में स्वाभाविकता नहीं रह पाती, उसमें कृत्रिमता आ जाती है।

2. लचीलापन का अभाव (Lack of Flexibility)- करलिंगर (Kerlinger, 2002) के अनुसार प्रयोगात्मक शोध में लचीलापन का अभाव रहता है। चूँकि इसमें परिशुद्धता अधिक रहती है इसलिए इसमें लचीलापन का गुण स्वतः कम हो जाता है।

3. सीमित क्षेत्र (Limited Scope)- प्रयोगात्मक शोध का क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित होता है। ऐसे शोध के लिए नियंत्रण आवश्यक होता है। अत: जहाँ नियंत्रण संभव नहीं होता वहाँ प्रयोगात्मक शोध संभव नहीं है। रेबर

(Reber, 1995) ने भी माना कि अप्रयोगात्मक शोधों की तुलना में प्रयोगात्मक शोध का क्षेत्र सीमित होता है।

4. जटिल सामाजिक समस्याओं के लिए अनुपयुक्त (Inappropriate for complex social problems)- सामाजिक समस्याएँ जब ज्यादा जटिल होती है तो उनका अध्ययन नियंत्रित परिस्थिति में करना संभव नहीं होता है। समूह गतिकी (Group Dynamics) सामाजिक पारस्परिक क्रियाओं (Social Interactions) आदि से संबंधित अध्ययन के लिए यह शोध उपयुक्त नही है क्योंकि इनका अध्ययन पूर्णत: नियंत्रित वातावरण में नहीं किया जा सकता है और नियंत्रण के अभाव में प्रयोगात्मक शोध संभव नहीं है।

प्रयोगात्मक शोध की उपयुक्त सीमाओं के बावजूद भी प्रयोगात्मक शोध सबसे अधिक वैज्ञानिक शोध है।

6.3.4 प्रयोगात्मक शोध के प्रकार (Types of Experimental Research)

सामान्यत: प्रयोगात्मक शोध को निम्नांकित दो भागों में बाँटा जा सकता है-

1. प्रयोगशाला प्रयोग शोध (Laboratory Experiment Research)

2. क्षेत्र प्रयोग शोध (Field Experiment Research)

1. प्रयोगशाला प्रयोग शोध (Laboratory Experiment Research)- प्रयोगशाला प्रयोग एक प्रयोगात्मक शोध है जो एक प्रयोगशाला (Laboratory) में प्राय: यादृच्छित रूप से चुने गए (Randomly selected) व्यक्ति या व्यक्तियों पर किया जाता है। इसके लिए प्रयोगकर्ता कुछ स्वतंत्र चरों (Independent Variable) में जोड़-तोड़ (Manipulation) करता है तथा इसका प्रभाव आश्रित चर (Dependent Variable) पर देखता है। इसके लिए शोधकर्ता ऐसी नियंत्रित परिस्थिति उत्पन्न करता है जिसमें सभी बहिरंगी चरों या असंबद्ध चरों (Extraneous Variables) को नियंत्रित किया जा सके।

2.क्षेत्र प्रयोग शोध (Field Experiment Research)- क्षेत्र प्रयोग एक ऐसा शोध है जिसमें प्रयोगकर्ता एक वास्तविक परिस्थिति में एक या एक से अधिक स्वतंत्र चरों में जोड़- तोड़ करता है। इसमें बहिरंगी चरों या असंबद्ध चरों (Extraneous Variables) को अधिकतम नियंत्रित करने की कोशिश की जाती है।

6.4 अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि का परिचय (Introduction to the Historical Method of Research)

इतिहास व्यक्ति की उपलब्धियों का सार्थक लिखित प्रमाण है। यह केवल विशेषताओं एवं अतीत से संबंधित घटनाओं का अभिलेख ही नहीं है बल्कि व्यक्तियों, घटनाओं, समय तथा स्थानों के बीच संबंधों का एक तथ्यात्मक विवरण है। मनुष्य इतिहास का उपयोग अतीत को समझने के लिए तथा पुरानी घटनाओं और विकास के संदर्भ में वर्तमान को समझने के लिए करता है।

ए. एन. व्हाइटहैड (A. N. whitehead) का कथन तार्किक है कि "प्रत्येक अंकुरण स्वयं में अपना सम्पूर्ण भूत एवं भविष्य के बीज रखता हुआ समझा जाता है।"

जार्ज बर्नाड शॉ (George Bernard Shaw) के अनुसार, **"भूत समूह के पीछे नहीं होता है, यह समूह के अन्तर्गत होता है। भूत को यदि निर्धारित किया जा सकता है तो यह वर्तमान के लिए कुंजी रखने के समान है। यद्यपि आज बीते हुए कल से भिन्न है, यह बीते हुए कल से बना है। आज तथा कल संभवत: आने वाले कल को प्रभावित करेंगे।"**

अर्थात इतिहास अतीत का क्रमबद्ध व वैज्ञानिक अध्ययन है जिसके द्वारा वर्तमान की घटनाओं को समझने में काफी मदद मिलती है। इतिहास की विशेषताओं को निम्नलिखित तरीके से समझा जा सकता है।

इतिहास, शोध के किसी भी क्षेत्र में, पूर्ण सत्य के लिए एक समालोचनात्मक खोज को प्रस्तुत करने वाली प्राचीन घटनाओं की एक संपूर्ण कहानी है।

इतिहासकारों की कल्पना एवं तथ्यों का मिश्रण इतिहास कहलाता है। इतिहास तथ्यों व कल्पनाओं का योग है।

इतिहास शब्द का अर्थ ज्ञान एवं सत्य के लिए खोज है।
इतिहास मानव वंश के अतीत का एक विश्वसनीय तथा अर्थपूर्ण आलेख है जो उसके विस्तृत एवं अधिक सामान्य रूपों का चिन्तन करता है।

6.4.1 ऐतिहासिक अनुसंधान का अर्थ (Meaning of Historical Research)

ऐतिहासिक अनुसंधान को क्रियान्वित करने के लिए आपको सर्वप्रथम इसका अर्थ समझना आवश्यक है। यहाँ ऐतिहासिक अनुसंधान के अर्थ को निम्न रूप में प्रस्तुत किया गया है -

ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकासक्रमों तथा अनुभवों का विशिष्ट अन्वेषण होता है जिसमें अतीत से संबंधित सूचनाओं के साधन तथा प्राप्त सन्तुलित विवेचन की वैधता का सावधानीपूर्वक आकलन किया जाता है। ऐतिहासिक अनुसंधान का संबंध अतीत के अनुभवों से रहता है। इसका उद्देश्य एक घटना, तथ्य तथा अभिवृत्ति से संबंधित अतीत की प्रवृत्तियों के अन्वेषण द्वारा अभी तक अबोध्य सामाजिक समस्याओं के लिए चिन्तन विधि का प्रयोग होता है। इसके द्वारा मानव विचार तथा व्यवहार के उन विकास क्रमों को खोज करना होता है, जिससे किसी एक सामाजिक गतिविधि के आधार पर पता लगता है।

ऐतिहासिक समस्याओं के अन्वेषण में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधान है। इसमें एक सुनियोजित विधि एंव प्रवृत्ति के मानदंड की आवश्यकता होती है।

इसमें समस्या की सीमाएं एवं पहचान, परिकल्पना का निर्माण, आंकड़ों का संग्रहण, संगठन, सत्यापन, सप्रमाणता एवं विश्लेषण, परिकल्पना की जाँच एवं ऐतिहासिक विवरण का आलेख निहित है।

ऐतिहासिक अध्ययन एक ऐसा ज्ञान है जो कुछ प्राचीन शैक्षिक अभ्यासों के प्रभावों से संबंधित आवश्यक सूचनायें देता है तथा इन पुराने अनुभवों के मूल्यांकन के आधार पर वर्तमान में की जाने वाली क्रियाओं के लिए कार्यक्रमों का सुझाव दे सकता है।

6.4.2 ऐतिहासिक अनुसंधान के उद्देश्य (Objectives of Historical Research)

ऐतिहासिक अनुसंधान के मूल उद्देश्य को आप निम्नलिखित रूप में समझ सकते है-

1. भूत के आधार पर वर्तमान को समझना एवं भविष्य के लिए सतर्क होना है। अधिकांश वस्तुओं का कोई ना कोई ऐतिहासिक आधार होता है। अतः किसी समस्या, घटना अथवा व्यवहार से समुचित मूल्यांकन के लिए उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित होना आवश्यक है। अनुशासन संबंधी वर्तमान धारणा, शिक्षक के स्थान पर छात्र को महत्व, छात्र परिषदों का गठन एवं उन पर नियंत्रण, व्यक्ति की वर्तमान अवधारणा, मापन और मूल्यांकन आदि सभी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में विकसित हुए हैं और आज वर्तमान रूप में हैं। अतः ऐतिहासिक अनुसंधान का मूल उद्देश्य ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में निहित है।

2. ऐतिहासिक अनुसंधान इस तथ्य का भी विश्लेषण करता है कि आज जो सिद्धांत तथा क्रियाएँ व्यवहार में है उनका उद्भव एवं विकास किन परिस्थितियों में हुआ है।

3. इसका प्रमुख उद्देश्य शिक्षा मनोविज्ञान अथवा अन्य सामाजिक विज्ञानों में चिंतन को नई दिशा देने एवं नीति निर्धारण में सहायता करना है। वह यह भी स्पष्ट करता है कि आज नवीन कही जाने वाली वस्तुओं में नवीनता कहाँ तक है तथा बीच के परिवर्तनों के क्या प्रभाव पड़े हैं। इस प्रकार ऐतिहासिक अनुसंधान त्रुटियों के प्रति सतर्क कर मार्ग प्रशस्त करता है।

4. यह वैज्ञानिकों की भूतकालीन तथ्यों के प्रति जिज्ञासा की तृप्ति एवं भूत, वर्तमान तथा भविष्य का संबंध स्थापन है।

5. ऐतिहासिक अनुसंधान किसी क्षेत्र विशेष के व्यावसायिक कार्यकर्ताओं के लिए पूर्व अनुभव के आधार पर भावी कार्यक्रम की रूपरेखा निर्धारित करने में सहायता करता है।

6. यह इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि किन परिस्थितियों में, किन कारणों से व्यक्ति अथवा व्यक्तियों ने एक विशेष प्रकार का व्यवहार किया है, उसका प्रभाव उसके ऊपर तथा समाज पर क्या पड़ा है?

6.4.3 ऐतिहासिक अनुसंधान के पद (Positions of Historical Research)

यदि आप किसी विषय पर ऐतिहासिक अनुसंधान करना चाहते हैं तो आपको निम्नलिखित पदों को अनुसरित करना पड़ेगा

1) आकड़ों का संग्रह
2) आकड़ों का विश्लेषण तथा
3) उपर्युक्त के आधार पर तथ्यों के विश्लेषण एंव रिपोर्ट

डेविड फॉक्स ने ऐतिहासिक अनुसंधान के निम्नलिखित पद बताये हैं -

1. समस्या समाधान के लिए ऐतिहासिक विधि की उपयुक्तता

2. आंकड़ों के प्रकार की आवश्यकता का निश्चयीकरण।

3. पर्याप्त आंकड़े।

4. निम्नलिखित माध्यमों से आंकड़े प्राप्त करके प्रारंभ करना- **पहला** ज्ञात आंकड़े, **दूसरा** ज्ञात स्त्रोतों से नवीन आंकड़े प्राप्त करना प्राथमिक स्त्रोत, या माध्यमिक स्त्रोत तथा **तीसरा** नवीन और पूर्व अज्ञात आंकड़ों की खोज-आंकड़ों के रूप में और स्त्रोत के रूप में।

5. प्रतिवेदन लिखने की शुरूआत ।

6. आंकड़ों का परीक्षण करते जाना।

7. अनुसंधान प्रतिवेदन का वर्णनात्मक भाग पूर्ण करना।

8.अनुसंधान प्रतिवेदन का विश्लेषणात्मक भाग पूर्ण करना।

9.आकड़ों का वर्तमान के प्रयोग और भविष्य के लिए परिकल्पना का निर्माण करना।

6.4.4 ऐतिहासिक अनुसंधान में आंकड़ों की प्राप्ति के साधन (Means of Obtaining Data in Historical Research)

ऐतिहासिक अनुसंधान में आंकड़ों का संग्रह करना बहुत ही जटिल कार्य है। शोधकर्ता को बहुत ही सावधानीपूर्वक विभिन्न साधनों से आंकड़ों को संग्रहित करना होता है ताकि विश्वसनीय व वैध निष्कर्ष निकाला जा सके। ऐतिहासिक साधनों का विभाजन निम्नवत् है-

1. प्राथमिक साधन (Primary Source of Data)- ये वे साधन हैं जो घटना, व्यक्ति या संस्था के विषय में प्रथम साक्षी का कार्य करते हैं। इस प्रकार के साधन घटना से तात्कालिक संबंध रखने वाले होते हैं जिनके समक्ष वास्तव में घटना घटित होती है। इस प्रकार के साधनों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं-

A. लिखित साधन- वृतान्त, कथा, जीवन-वृतांत, दैन्दिनी, वंशावलियाँ तथा शिलालेख आदि।

B. मौखिक परम्परा- जैसे गाथायें, कहानियाँ, उपाख्यान आदि।

C. कलात्मक उपलब्धियाँ- जैसे ऐतिहासिक चित्र, मूर्तियाँ, सिक्के आदि।

D. अवशेष या अचेतन प्रमाण पत्र- यथा मानवीय अवशेष, भवन, अस्त्र, शस्त्र, वस्त्र एवं ललित कलायें आदि।

इन अवशेषों से तत्कालीन घटना, काल, विशेष या व्यक्ति विशेष के विषय में प्राथमिक ज्ञान प्राप्त होता है।

2. द्वितीयक साधन (Secondary source of data)- ऐतिहासिक घटना या व्यक्ति के विषय में जो तथ्य प्रदान करते हैं उनकी आवृत्ति उन साधनों के अन्तर्गत प्रत्यक्षतः समाहित नहीं रहती। एक व्यक्ति जो ऐतिहासिक तथ्य विषय में तात्कालिक घटना से संबधित व्यक्ति के मुहँ से सुने- सुनाये वर्णन को अपने शब्दों में व्यक्त करता है, ऐसे वर्णन को द्वितीयक साधन कहते हैं। इनमें हालाँकि सत्य का अंश रहता है किन्तु प्रथम साक्षी से द्वितीय श्रोता तक

पहुँचते-पहुँचते वास्तविकता में कुछ परिवर्तन आ जाता है जिससे उसके दोष-युक्त होने की संभावना रहती है।

6.4.5 ऐतिहासिक शोध में प्रयुक्त आंकड़ों की आलोचना या मूल्यांकन (Criticism or Evaluation of Data Used in Historical Research)

आंकड़ों की आलोचना अथवा मूल्यांकन दो प्रकार का होता है जो इस धारणा पर आधारित होता है कि यदि आंकड़े सत्य हैं तो उनसे लिखा गया इतिहास भी सत्य होगा। आंकड़ों के संग्रह के साथ-साथ उनका मूल्यांकन भी करना होता है कि किसे तथ्य माना जाए, किसे संभावित माना जाए और किस आंकड़े को भ्रमपूर्ण माना जाए? इसके लिए दो तथ्यों को ध्यान में रखते है-

A. **आंतरिक क्रमबद्धता (Internal Consistency)**- जिन आंकड़ों में आंतरिक क्रमबद्धता नहीं होगी अर्थात विरोधाभास का अभाव हो, वे सत्य के अधिक निकट होंगे।
B. **बाह्य क्रमबद्धता (External Consistency)-** इसका तात्पर्य यह है कि अन्य साधनों से प्राप्त सूचनाओं से इसका विरोध न हो।

तथ्यपूर्णता को सिद्ध करने के लिए- दो प्राथमिक स्त्रोत एक ही तथ्य पर सहमत हो, एक प्राथमिक स्त्रोत तथा एक माध्यमिक स्त्रोत का एक मत हो तथा उस तथ्य का विरोध किसी ने न किया हो। इन तीनों विशेषताओं के आधार पर किसी आंकड़े को तथ्यपूर्ण मान लेते हैं, उसके पश्चात् ही इसकी समालोचना प्रारंभ करते हैं। ऐतिहासिक आंकड़ों की विश्वसनीयता व वैधता ती जांच के लिए प्रायः दो तरह की आलोचनाओं का प्रयोग किया जाता है। ये इस प्रकार हैं -

1. बाह्य लोचना (External Criticism)- इसमें इस तथ्य की जाँच करते हैं कि प्राप्त आंकड़ा या प्रमाण पत्र अपने बाह्य स्वरूप की दृष्टि से उचित है अथवा नहीं। इसके अन्तर्गत लिखित प्रमाण पत्र की यर्थाथता की जाँच की जाती है। बाह्य आलोचना के अन्तर्गत आंकड़ों के रूप, रंग, समय, स्थान तथा परिणाम की दृष्टि से यथार्थता की जाँच करते हैं तथा यह देखते हैं कि प्राप्त आंकड़ा जब लिखा गया, जिस स्याही से लिखा गया, लिखने में जिस शैली का प्रयोग किया गया तथा जिस प्रकार की भाषा, लिपि, रचना, हस्ताक्षर आदि प्रयुक्त हैं, वे सभी तथ्य मौलिक घटना के समय उपस्थित थे या नहीं। यदि नहीं तो आंकड़ा जाली है इसके परीक्षण हेतु निम्न तथ्यों पर ध्यान देते हैं।

a. लेखक कौन था तथा उसका चरित्र और व्यक्तित्व कैसा था?
b. सामान्य रिपोर्टर के रूप में उसकी योग्यताएँ क्या थी?
c. इस तथ्य के रिर्पोटर के रूप में उसकी विशिष्ट योग्यता क्या थी?
d. घटना के कितने समय पश्चात् प्रमाण लिखा गया?
e. क्या प्रमाण पत्र स्मरण द्वारा, परामर्श द्वारा, देखकर या पूर्व ड्राफ्टों को मिलाकर लिखा गया?
f. लिखित प्रमाण पत्र अन्य प्रमाण पत्रों से कहाँ तक मिलता है?

आंकड़ों की यथार्थता का ज्ञान करने हेतु इतिहासकारों ने अलग-अलग विज्ञानों का अपने क्षेत्र में प्रयोग किया है। उदाहरण लिए, शिलालेखों का अध्ययन करने के लिए इपिग्राफी डिप्लोमा आदि का ज्ञान करने हेतु डिप्लोमेटिक्स, लिखावट का ज्ञान करने हेतु पैलियोग्राफी तारीखों का ज्ञान करने हेतु फिलोलॉजी, स्याही हेतु केमेस्ट्री आदि के प्रयोग द्वारा आंकड़ों के बाह्य स्वरूप के विषय में पूर्णरूप से ज्ञान प्राप्त करने में सफलता मिलती है।

2. आन्तरिक लोचना (Internal Criticism) - इस प्रकार की आलोचना का उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि क्या लेखक विषय के साथ न्याय कर पाया है अथवा नहीं। इसमें निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देते हैं -

a) लेखक किसी रूप में प्रभावित तो नहीं था ?
b) क्या तथ्य की जानकारी हेतु लेखक को पर्याप्त अवसर मिला था?
c) क्या वर्णित घटना उसने स्वयं देखी थी ?

d) क्या विश्वसनीय निरीक्षण हेतु वह सक्षम था ?

e) क्या लेखक का कोई विशेष उद्देश्य था ?

f) क्या लेखक किसी दबाव अथवा भय में था ?

g) घटना के कितने दिन पश्चात् उसने लिखा है ?

h) उसके लेख तथा अन्य लेखों में कितनी समानता है ?

i) लेखकों की राष्ट्रीयता, पेशा, स्थिति, वर्ग, दलों से संबंध, धर्म, प्रशिक्षण आदि के विषय में क्या ज्ञात है ?

j) अभिलेखों के तैयार करने के लिए उसमें प्रशिक्षण, मानसिक क्षमता, समाजिक सार, अवधारणाएँ, रूचियाँ, भाषायी आदत कैसी थी ?

k) लेखक सही है अथवा गलत ?

l) अभिलेख में कोई धोखा तो नहीं किया गया है ?

m) लेखक ने अभिलेख क्यों तैयार किया ?

n) क्या लेखक ऐसी स्थिति में तो नहीं रख दिया गया था जिसमें उसे सत्य छिपाना पड़ा हो ?

o) क्या उसने अधिकारियों को प्रसन्न कर उन्नति चाही थी ?

p) क्या उसमें धार्मिक, राजनीतिक अथवा जातीय पूर्वधारणा प्रबल थी ? क्या जनता को प्रसन्न करने हेतु उसने संवेग उभारा है ?

q) क्या उसने साहित्यिक प्रवाह में सत्य को छिपाया है ?

इन प्रश्नों के उत्तर के आधार पर ऐतिहासिक आंकड़ों की आन्तरिक समालोचनाकरने के पश्चात् ही अनुसंधानकर्ता किसी निष्कर्ष पर पहुँचता है।

6.4.6 ऐतिहासिक अनुसंधान की प्रक्रिया (The Process of Historical Research)

ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता को निम्नलिखित शोध प्रक्रिया अपनानी चाहिए-

a) ऐसे क्षेत्र का चुनाव करना जिसमें पर्याप्त प्रमाण एवं अनुसंधान सामग्री प्राप्य हों ।

b) जहाँ तक संभव हो प्राथमिक साधन का ही प्रयोग करें।

c) अवश्यकतानुसार सामान्य रूप से माध्यमिक साधनों का भी प्रयोग कर सकते हैं।

d) सुपरिभाषित समस्या पर कार्य प्रारंभ करें।

e) व्यक्तिगत पक्षपातों से सदैव बचते रहें।

f) विभिन्न परिस्थितियों एवं वातावरण की स्थिति के संदर्भ में अध्ययन को आगे बढ़ायें।

g) कार्य कारण संबंध पर विशेष ध्यान दें।

h) विभिन्न आंकड़ों के आधार पर अर्थपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त करें।

6.4.7 ऐतिहासिक अनुसंधान का क्षेत्र (Area of Historical Research)

ऐतिहासिक अनुसंधान का क्षेत्र उतना ही व्यापक है जितना स्वयं जीवन, किन्तु संक्षेप में इसकेक्षेत्र में निम्नलिखित को सम्मिलित कर सकते हैं -

1. बड़े शिक्षाशास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों के विचार।
2. संस्थाओं एवं प्रयोगशालाओं द्वारा किए गए कार्य।
3. विभिन्न कालों में शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिकों विचारों के विकास की स्थिति।

4. एक विशेष प्रकार की विचारधारा का प्रभाव और उसके स्त्रोत।
5. शिक्षा के लिए संवैधानिक व्यवस्था।
6. पुस्तक सूची की तैयारी आदि।

6.5 केस या व्यक्ति या एकल अध्ययन विधि का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Case or Individual Study Method)

व्यावहारिक विज्ञान में केस अध्ययन विधि का प्रयोग आरंभ से ही किया जा रहा है। सामाजिक शोध (Social research)में केस अध्ययन विधि का उपयोग सबसे पहले फ्रेड्रिक ली प्ले (Fredric Le Play) द्वारा 1840 में परिवारिक बजट (Family budget) के अध्ययन में किया गया।

केस अध्ययन विधि एक ऐसी विधि है जिसमें किसी सामाजिक इकाई (social unit) के जीवन (life) की घटनाओं का किसी एक व्यक्ति, एक परिवार (family), एक संस्था (Institution) एक समुदाय (community) घटना, नीति (policy), संगठन आदि को लिया जा सकता है। स्पष्ट हुआ कि तब केस अध्ययन विधि में जो केस होता है, उससे तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया या घटना से होता है जिसका एक आबद्ध संदर्भ होता है अर्थात केस में सम्मिलित की गई घटना या इकाई की अपनी चहारदीवारी होती है।

पी वी यंग (P.V. Young, 1974) के अनुसार "केस अध्ययन एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा सामाजिक इकाई के जीवनी का अन्वेषण तथा विश्लेषण किया जा सकता है।"

गुडे तथा हाट (Goode & Hatt, 1989), "केस अध्ययन सामाजिक आंकड़ों को संगठित करने का एक तरीका है ताकि अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक वस्तु के एकात्मक स्वरूप को बनाकर रखा जा सके। अर्थात यह ऐसा उपागम है जिसमें किसी भी समाजिक इकाई को पूर्ण रूप से देखा जाता है। करीब-करीब हमेशा ही इस उपागम में इकाई को एक व्यक्ति, एक परिवार या अन्य सामाजिक समूह प्रक्रियाओं या संबंधों का एक सेट या संपूर्ण संस्कृति भी हो सकता है, का विकास सम्मिलित होता है।"

थियोडोरसन एवं थियोडोरसन (Theodorson & Theodorson, 1969) के अध्ययन विधि किसी इकाई के गहन विश्लेषण के माध्यम से सामाजिक घटना के अध्ययन की विधि है। केस कोई एक व्यक्ति, एक समूह, एक घटना, एक प्रक्रिया, एक समुदाय, एक समाज या सामाजिक जिंदगी कोई इकाई हो सकती है। यह बहुत सारे विशिष्ट विवरण के गहन विश्लेषण करने का अवसर प्रदान करता है जिसे अन्य विधियों में प्राय: उपेक्षा की जाती है।

यिन (Yin, 1984) ने केस अध्ययन को इस तरह परिभाषित किया है **"यह एक आनुमानिक जॉच है जो एक वास्तविक जिंदगी के संदर्भ में समकालीन घटनाओं का अन्वेषण तब करता है जब घटना तथा संदर्भ के बीच की सीमा स्पष्ट नहीं होती है तथा जिसमें सबूत के बहुत सारे श्रोतों का उपयोग किया जाता है।"**

इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर केस अध्ययन विधि के स्वरूप को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है।

1. केस अध्ययन विधि में किसी सामाजिक इकाई के विकासात्मक घटनाओं (Developmental events) का अध्ययन किया जाता है।
2. सामाजिक इकाई के रूप में एक व्यक्ति विशेष का भी अध्ययन किया जा सकता है या अन्य सामाजिक समूह जैसे परिवार या किसी संस्कृति का भी अध्ययन किया जाता है।
3. इसके अंतर्गत अध्ययन किए जाने वाली सामाजिक इकाई को सम्पूर्ण रूप से अध्ययन करने की कोशिश की जाती है।
4. यह समाजिक इकाई का वर्णन (Description) तथा व्याख्या (Explanation) दोनों ही करता है। अर्थात् यह किसी भी सामाजिक इकाई के क्या (What) और क्यों (Why) का अध्ययन करता है।

6.5.1 केस अध्ययन की विशेषताएं (Characteristics of Case Studies)

केस अध्ययन की विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. केस अध्ययन एक सीमाबद्ध अध्ययन विधि होती है। (Case study is a bounded system of study)
2. केस अध्ययन में केस कुछ का केस होता है। (In case study case is a case of something)
3. केस अध्ययन में केस की संपूर्णता, एकता तथा अखंडता को बचाकर रखने का स्पष्ट प्रयास किया जाता है (There is an obvious attempt to preserve the wholeness, unity and integrity of the case.)
4. केस अध्ययन में आंकड़े के बहुत सारे स्त्रोतों को तथा बहुत सारे आंकड़े संग्रह विधियों का उपयोग किया जाता है (In case studies multiple sources of data and multiple data collection methods are used.)|

6.5.2 केस अध्ययन विधि के लाभ एवं दोष (Advantages and Disadvantages of Case Study Method)

केस अध्ययन विधि का प्रयोग मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में काफी किया जाता है। इस विधि के कुछ लाभ (Advantages) तथा कुछ खामियॉ (Limitations) निम्नवत हैं।

इस विधि के प्रमुख लाभ (Advantages) निम्नांकित हैं-

1. केस अध्ययन विधि में दो विभिन्न केसेज (Cases) को लेकर उनका तुलनात्मक अध्ययन (Comparative study) किया जा सकता है।
2. केस अध्ययन विधि द्वारा अध्ययन के लिए चयन किए गए केस (Case) का गहन रूप से (intensive) अध्ययन सम्भव है क्योंकि इस में एक समय में किसी एक केस या समाजिक इकाई (Social Unit) का ही अध्ययन किया जा सकता है।
3. केस अध्ययन विधि द्वारा किसी प्राककल्पना (Hypothesis) के निर्माण में काफी मदद मिलती है।
4. यह एक ऐसी विधि है जिससे प्राप्त तथ्यों के आधार पर भविष्य में किए जाने वाले अध्ययनों में उत्पन्न होने वाली कठिनाइयों को पहले से ही आंका जा सकता है तथा उसे दर करने के उपायों का वर्णन किया जा सकता है।
5. इस विधि में चूंकि सामाजिक इकाई का गहन अध्ययन किया जाता है, इसलिए इसमें संबंधित इकाई के व्यवहारिक पैटर्न को पूर्णरूप से समझने में मदद मिलता है।
6. यह विधि सामाजिक इकाई के स्वाभाविक इतिहास के बारे में जानने में मदद करने के साथ ही उसका संबंध वातावरण के अन्य सामाजिक कारकों से भी स्थापित करने में मदद करता है।
7. केस अध्ययन विधि में शोधकर्ता द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आधार पर संबंधित कार्य के लिए प्रश्नावली या अनुसूची बनाने में मदद मिलती है।
8. परिस्थिति की जरूरत के अनुरूप इस विधि में शोधकर्ता कई शोध प्रविधियों का उपयोग आसानी से कर लेता है।
9. इस विधि से शोधकर्ता की अनुभूतियॉ मजबूत होती हैं और इससे फिर उनमें परिस्थिति को समझने एवं विश्लेषण करने की क्षमता और भी अधिक तीक्ष्ण होती है।

केस अध्ययन विधि में चिकित्सीय एवं प्रशासनिक उद्देश्यों को अति महत्वपूर्ण समझा जाता है। केस अध्ययन के

आधार पर वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, चिकित्सा संबंधी एंव प्रशासनिक दृष्टिकोण से भी शोधकर्ता को इकाई के व्यवहारिक समस्याओं को समझने में मदद करता है। इन लाभों के बावजूद केस अध्ययन विधि में कुछ खामियॉ भी हैं जो निम्नांकित हैं -

a. केस अध्ययन विधि में आत्मनिष्ठता अधिक पाई जाती है जिसका प्रतिकूल प्रभाव निष्कर्ष पर पड़ता है।
b. केस अध्ययन विधि में शोधकर्ता में निश्चितता का मिथ्या भाव उत्पन्न हो जाता है।
c. केस अध्ययन विधि को पूर्ण वैज्ञानिक विधि नहीं माना जाता है।
d. केस अध्ययन विधि द्वारा अध्ययन में समय काफी लगता है।
e. केस अध्ययन का उपयोग सीमित क्षेत्र में होता है।
f. केस अध्ययन विधि से प्राप्त आंकड़े संदूषित हो सकते है क्योंकि इसमें प्रयोज्य वही कहता है या लिखता है जो शोधकर्ता चाहता है।

6.6 अनुसंधान की प्रजातिक विधि का अर्थ (Meaning of Phenomenological Method of Research)

शिक्षा अनुसंधान का क्षेत्र - कलात्मक तथा वैज्ञानिक दोनों ही प्रकार है। इसलिए शिक्षा में अनुसंधान के लिए अनेक प्रकार की विधियों का उपयोग किया है। प्रयोगात्मक तथा वर्णनात्मक दोनों ही प्रकार की शोध विधियों को प्रयुक्त की जाती है। इस के अतिरिक्त ऐतिहासिक तथा दार्शनिक शोध अध्ययन भी किए जाते हैं। शिक्षा में शोध के विभिन्न आयामों को प्रयुक्त करते हैं। शिक्षा अनुसंधान के निष्कर्षों की आंन्तरिक तथा बाह्य वैधता भी होती है। विकासात्मक शोध अध्ययन भी किए जाते हैं। प्रजातिकवृत अनुसंधान का संबंध मानवीय जैविक विकास (Ethnographic or Racial Development) से है। इनका संबंध मानव विकास के इतिहास से अधिक है। यह शोध गुणात्मक अधिक है और विश्लेषण विधि का उपयोग किया जाता है।

प्रजातिकवृत का अर्थ (Meaning of Ethnography)-

प्रजातिकवृत मानवशास्त्र विषय की एक शाखा है। इसके अंतर्गत प्रजातियों का इतिहास राष्ट्रों के अनुसार तथा उनके आविर्भाव का अध्ययन किया जाता है। शिक्षा में ऐतिहासिक अनुसंधान की भाँति इस में अध्ययन किया जाता है। यह एक शोध विधि भी है जिस का उपयोग मानवशास्त्र की शिक्षा में किया जाता है। “Ethnography is defined as a technique of describing and accounting for the behaviour of people. It analyses how people perceive the dynamics of their own acting sensibly in relation to others and also the procedures they use to do this.”

प्रजातिकवृत को एक प्रविधि मानते हैं जिससे व्यक्तियों के व्यवहारों का वर्णन किया जाता है।

इसके अन्तर्गत यह भी विश्लेषण किया जाता है कि व्यक्ति अति गतिशील एवं क्रियाओं का प्रयक्षीकरण किस प्रकार करते हैं, वे अन्य व्यक्तियों से सम्बन्धों तथा प्रक्रियाओं का कैसे उपयोग करते हैं।

इस प्रजातिकवृत के अन्तर्गत दो पक्षों का अध्ययन किया जाता है।

1. समुदाय के सदस्य अपने मस्तिष्क में क्या सोचते हैं और कैसा व्यवहार करते हैं। इसे प्रजातिक विज्ञान (Ethno-science) कहते हैं।
2. व्यक्तियों के सांस्कृतिक एवं मानसिक पक्षों के सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इसे प्रजातिक संस्कृति (Ethno-culture) कहते हैं।
3. विद्यालयों तथा शिक्षा के क्षेत्र में (15-20) वर्ष के आयु के छात्रों पर प्रजातिकवृत अध्ययनों को अधिक महत्व दिया गया है। तुलनात्मक दृष्टि से तथा अनुप्रस्थ संस्कृति की (cross-cultural) दृष्टि से इनकी उपयोगिता अधिक है।

6.6.1 प्रजातिक अनुसंधान की मूल विशेषताएं (Basic Features of Species Research)

प्रजातिक अनुसनधानों के अन्तर्गत प्रदत्तों के संकलन में गहनता दो प्रकार से की जाती है।

1. इसके अन्तर्गत अनेक चरों (Variable) का मापन किया जाता है।
2. इन चरों को सामान्य परिस्थिति में एक अवधि के अन्तराल में प्रदत्तों का संकलन किया जाता है।
3. इन शोध अध्ययनों को स्वाभाविक अनुसंधान अथवा सर्वेक्षण अध्ययन भी कहते हैं। यह शोध अध्ययन आनुवंशिक अध्ययनों (Genetic Research) से अधिक मिलते हैं। यह गुणात्मक शोध अध्ययनों के अन्तर्गत आते हैं। इस के अन्तर्गत सहभागी निरीक्षण प्रविधि का उपयोग प्रदत्तों के संकलन में किया जाता है।

शोध अध्ययनों को व्यापक रूप में दो वर्गों में विभाजित किया जाता है-

1. स्वाभाविक अनुसंधान (Naturalistic Research)- इनमें सामान्य स्थिति में प्रदत्तों का संकलन किया है। प्रजातिक अनुसंधान इसी वर्गीकरण के अंतर्गत आते हैं। बाह्य वैधता शोध निष्कर्षों की अधिक होती है।

2. प्रायोगिक अनुसंधान (Experimental Research)- इसके अन्तर्गत नियंत्रित परिस्थिति में प्रदत्तों का संकलन किया जाता है। प्रदत्तों का संकलन परीक्षणों से किया जाता है। कारण- प्रभाव सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। शोध निष्कर्षों की आन्तरिक वैधता अधिक होती है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रजातिक अनुसनधानों का विकास आधुनिक युग की देन है। इस प्रकार का अनुसंधान परम्परागत अनुसंधान की विधियों से संतुष्ट नहीं है क्योंकि इनका आयोजनशिक्षा की समस्या के समाधान हेतु किया जाता है। विकासात्मक अनुसन्धानों को स्वाभाविकया सामान्य परिस्थिति में नहीं किया जाता है। अनुप्रस्थ-सांस्कृतिक प्रभाव का अध्ययन शिक्षा के अन्तर्गत किया जाना चाहिए। आधुनिक समाज में अनुप्रस्थ- सांस्कृतिक (Cross-cultural) प्रभाव तकनीकी विकास के कारण तीव्रता से बढ़ रहा है जो शिक्षा की प्रक्रिया को भी प्रभावित कर रहा है। अनुप्रस्थ- सांस्कृतिक प्रभाव भी अधिक हो रहा है।

प्रजातिकवृत अनुसंधान का सम्पादन सामान्य परिस्थिति में किया जाता है। जिसमें मानव व्यवहार का विकास एवं परिवर्तन होता है। इस में महत्वपूर्ण चरों को सम्मिलित किया जाता है। समाज, समुदाय, विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालयों के अंतर्गत मानव व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। प्रजातिक शोध का सम्बन्ध वर्तमान तथा भूतकाल से होता है। वर्तमान-व्यवहार को समझने का प्रयास अतीत के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार का व्यवहार क्यों है? इसका उत्तर अतीत के आधार पर देने का प्रयास किया जाता है। व्यक्ति ऐसा क्यों सोचते तथा करते हैं इन प्रश्नों का उत्तर भी इस प्रकार के शोध अध्ययनों से दिया जाता है।

आनुवंशिक शोध अध्ययनों में भी वर्तमान एवं भूतकाल को महत्व दिया जाता है। वर्तमान के प्रश्नों का उत्तर अतीत से प्राप्त हो जाता है। प्रजातिक शोध की विधि आनुवांशिक अध्ययन के समान है।

प्रजातिक अनुसंधान की विशेषताएं (Characteristics of Ethnographic Research): प्रजातिक अनुसन्धान की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं-

1. यह मूल रूप में गुणात्मक तथा वर्णनात्मक अनुसंधान है। किसी मानव व्यवहार का अध्ययन स्वाभाविक परिस्थिति में किया जाता है।

2. इस प्रकार के अनुसंधानों का सम्बन्ध वर्तमान तथा अतीत से होता है। वर्तमान के प्रश्नों का उत्तर अतीत के तथ्यों के आधार पर दिया जाता है।

3. शिक्षा के अन्तर्गत इस विधि का उपयोग एक संस्था के विकास क्रम में किया जाता है। प्रजातिकवृत अनुसंधान के माध्यम से वर्तमान व्यवहार को समझने का प्रयास किया जाता है। उसकी बोधगम्यता के लिए अतीत तथ्यों की सहायता ली जाती है। आनुवंशिक अनुसंधान में भी इसी आधार को प्रयुक्त करते हैं।

4. यह सर्वेक्षण विधि के समान सामान्य परिस्थिति के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह प्रयोगात्मक विधि से भिन्न हाती है। निष्कर्षों की बाह्य वैधता अधिक होती है। इस के सामान्यीकरणों की व्यवहारिकता भी अधिक

होती है।

5. इसकी अवधारणा यह है कि मानव व्यवहार का शुद्ध रूप में अर्थापन करना तथा समझना आवश्यक है। उनके विचारों, भावों तथा क्रियाओं का अध्ययन करना भी आवश्यक होता है। व्यक्तियों के सोचने में तथा प्रत्यक्षीकरण में अन्तर क्यों होता है। इस को समझने का प्रयास किया जाता है।

6. इस प्रकार के शोध अध्ययनों की सहायता से मानव व्यवहार तथा समस्याओं के आन्तरिक अर्थों तथा कारणों को समझने का प्रयास किया जाता है। इस के अन्तर्गत सम्पूर्ण परिस्थिति को ध्यान में रखकर अध्ययन किया जाता है।

7. इस प्रकार के शोध अध्ययनों में सम्पूर्ण आयाम (holistic approach) का उपयोग किया जाता है। शिक्षा की अन्य शोधविधियों में संम्पूर्ण परिस्थिति को महत्व नहीं दिया जाता है। उनमें सीमांकन किया जाता है।

8. इसके अन्तर्गत एकल अध्ययन (case study) प्रविधि का भी उपयोग करते हैं। परन्तु अध्ययन वर्तमान तथा भूतकाल तक ही सीमित रहता है। जबकि एकल अध्ययन का सम्बन्ध भविष्य से भी होता है। यह विकासात्मक अध्ययन के अंतर्गत आता है।

9.सामान्य रूप से यह मूल्यांकन अनुसंधान होता है। इस प्रकार के अध्ययन से सर्वेक्षण द्वारा खोजने (Explore) का प्रयास किया जाता है। परिकल्पनाओं का विशेष महत्व नहीं होता है। इसका उपयोग एक सहायक प्रविधि के रूप में किया जाता है। इसे स्वाभाविक अनुसंधान भी कहते है।

10. इस प्रकार के अनुसंधान में विविध प्रकार के प्रदत्तों का संकलन किया जाता है। निरीक्षण प्रविधि का उपयोग दोनों ही रूप में किया जाता है। सभी प्रकार के परीक्षण, अनुमापनियों तथा अनुसूचियों का उपयोग किया जाता है। अशाब्दिक प्रविधियाँ भी प्रयुक्त की जाती हैं जिससे गहनता का बोध होता है।

6.6.2 प्रजातिक अनुसंधान की विधि एवं प्रक्रिया (Method and Process of Species Research)

सामान्यत: प्रजातिक-वृत अनुसंधान प्रक्रिया में पॉच सोपानों को प्रयुक्त किया जाता है। ये सोपान इस प्रकार हैं-

1. उद्देश्यों का विशिष्ट रूप में प्रतिपादन करना (Formulation of specific objectives)

2. शोध प्रारूप का नियोजन करना (Planning of Research Design)

3.प्रदत्तों का संकलन करना (collection of Data)

4.प्रदत्तों का विश्लेक्षण करना तथा (Analysis of Data)

5.निष्कर्ष निकालना (Formulation of conclusions)

6.6.3 प्रजातिक अनुसंधान की उपयोगिता (Usefulness of Species Research)

इस प्रकार के शोध अध्ययनों की उपयोगिता इस प्रकार है-

1. इन शोध अध्ययनों से ऐसे तथ्य एवं सिद्धांत निकलकर आते है, जो बिल्कुल ही मौलिक होते हैं।

2. इस प्रकार के शोध अध्ययन स्वाभाविक तथा सामान्य परिस्थिति में किए जाते हैं इसलिए इनका संचालन सुगम होता है।

3. शोध का प्रारूप, विधियाँ, उद्देश्य आदि लचीले होते हैं। परिस्थितियों के अनुसार उनका परिवर्तन कर लिया जाता है।

4. इस के अन्तर्गत प्रदत्तों की अनुप्रस्थ जॉच होती है। कुछ प्रविधियों को जाँच के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इन्हें मूल्यांकन अनुसंधान भी कहते हैं। अनुप्रस्थ-सांस्कृति का अध्ययन किया जाता है।

5.इसमें निरीक्षण, साक्षात्कार तथा परीक्षणों से प्रदत्तों को संकलन किया जाता है।

6. इसमें विश्लेषण तार्किक ढंग व सांख्यिकी प्रविधियों से किया जाता है। इसमें विशिष्ट तथा वैध निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास किया जाता है। इसमें विश्लेषण तथा संश्लेषण दोनों किए जाते हैं।

7. इसके निष्कर्षों की बाह्य वैधता अधिक होती है। इनकी उपयोगिता अधिक होती है।

8.इन शोध अध्ययनों से क्या, क्यों तथा कैसे प्रश्नों के उत्तर भी प्राप्त किए जाते हैं।

6.6.4 प्रजातिवृत शोध की सीमाएं (Limitations of Phylogenetic Research)

इस प्रकार के शोध की अधोलिखित सीमायें होती हैं।

1. इस प्रकार शोध अध्ययन ऐतिहासिक, आनुवंशिक तथा घटोत्तर अध्ययन के समान ही है। आनुवांशिक शोध (Genetic) के अधिक समान है। नये क्षेत्र के कारण इसे उपयोग में नहीं ला रहे हैं।
2. शोध प्रक्रिया अधिक लचीली है इसलिये इनका आयोजन करना कठिन है, शोध-विधि की आचार संहिता का अनुपालन नहीं होता है। इसमें शोध क्रियाएँ लचीली होती हैं तथा बदलती रहती हैं।
3. मानवशास्त्र की एक शाखा से सम्बन्धित है जिसमें जैविक पक्षों को प्राथमिकता अधिक दी जाती है। शैक्षिक पक्ष कम होता है।
4. इस प्रकार के शोध समय, धन तथा उर्जा की दृष्टि से अधिक मंहगे हैं।

6.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. प्रयोगात्मक शोध में ..... (स्वतंत्र चर, आश्रित चर) में परिवर्तन करके उसके प्रभाव को अध्ययन किया जाता है।
2. ऐतिहासिक शोध में बीती ..... (घटनाएँ, व्यक्ति) का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है।
3. प्रजातिक अनुसंधान मानव के ..... (जैविक विकास, मानसिक विकास) से संबंधित होता है।

निम्नलिखित कथनों में से सत्य असत्य कथन चुनिये-

1. प्रयोगात्मक शोध में स्वतंत्र चर पर नियंत्रण नहीं रखा जाता।
2. ऐतिहासिक शोध केवल अतीत की घटनाओं का अध्ययन नहीं, बल्कि वर्तमान के घटनाओं को समझने में भी मदद करता है।सही

6.8 सारांश (Summary)

अभी तक आपने देखा कि विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक शोधों में प्रयोगात्मक शोध का महत्व सबसे अधिक है। इस प्रकार के शोधों में शोधकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ (Manipulation) करके उसके प्रभाव का अध्ययन करता है तथा स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच कारण तथा परिणाम सम्बन्ध (Cause and Effect Relationship) स्थापित करता है। प्रयोगात्मक शोधों में आत्मनिष्ठता नहीं पायी जाती। इसमें उच्च वैधता (High Validity) उच्च विश्वसनीयता (High Reliability) के साथ-साथ नियंत्रण, मापन तथा वस्तुनिष्ठता के गुण देखे जाते हैं। इन गुणों के बावजूद भी इसकी कुछ सीमाएँ हैं।

आपने प्रयोगात्मक शोध जो मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं- प्रयोगशाला प्रयोग (Laboratory Experiment) तथा क्षेत्र प्रयोग (Field Experiment) का बारे में भी अध्ययन किया।

आपने इस इकाई में ऐतिहासिक अनुसंधान के विभिन्न पक्षों के बारे में भी अध्ययन किया। ऐतिहासिक अनुसंधान अतीत की घटनाओं, विकासक्रमों तथा अनुभवों का विशिष्ट अन्वेषण होता है जिसमें अतीत से संबंधित सूचनाओं के साधन तथा प्राप्त सन्तुलित विवेचन की वैधता का सावधानीपूर्वक आकलन किया जाता है। ऐतिहासिक

अनुसंधान का संबंध अतीत के अनुभवों से रहता है। इसका उद्देश्य एक घटना, तथ्य तथा अभिवृत्ति से संबंधित अतीत की प्रवृत्तियों के अन्वेषण द्वारा अभी तक अबोध्य सामाजिक समस्याओं के लिए चिन्तन विधि का प्रयोग होता है। इसके द्वारा मानव विचार तथा व्यवहार के उन विकास क्रमों को खोज करना होता है, जिससे किसी एक सामाजिक गतिविधि के आधार पर पता लगता है।

ऐतिहासिक अनुसंधान के मूल उद्देश्य को आप निम्नलिखित रूप में समझ सकते है- भूत के आधार पर वर्तमान को समझना एवं भविष्य के लिए सतर्क होना है। अधिकांश वस्तुओं का कोई न कोई ऐतिहासिक आधार होता है। अतः किसी समस्या, घटना अथवा व्यवहार से समुचित मूल्यांकन के लिए उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित होना आवश्यक है।

अनुशासन संबंधी वर्तमान धारणा, शिक्षक के स्थान पर छात्र को महत्व, छात्र परिषदों का गठन एवं उन पर नियंत्रण, व्यक्ति की वर्तमान अवधारणा, मापन और मूल्यांकन आदि सभी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में विकसित हुए हैं और आज वर्तमान रूप में हैं। अत: ऐतिहासिक अनुसंधान का मूल उद्देश्य ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में निहित है।

ऐतिहासिक अनुसंधान में आंकड़ों का संग्रह करना बहुत ही जटिल कार्य है। शोधकर्ता को बहु ही सावधानीपूर्वक विभिन्न साधनों से आंकड़ों को संग्रहित करना होता है ताकि विश्वसनीय व वैध निष्कर्ष निकाला जा सके। ऐतिहासिक साधनों का विभाजन निम्नवत् है- प्राथमिक साधन (Primary Source of Data)- ये वे साधन हैं जो घटना, व्यक्ति या संस्था के विषय में प्रथम साक्षी का कार्य करते हैं। इस प्रकार के साधन घटना से तात्कालिक संबंध रखने वाले होते हैं जिनके समक्ष वास्तव में घटना घटित होती है। द्वितीयक साधन (Secondary source of data)- ऐतिहासिक घटना या व्यक्ति के विषय में जो तथ्य प्रदान करते हैं उनकी आवृत्ति उन साधनों के अन्तर्गत प्रत्यक्षतः समाहित नहीं रहती। एक व्यक्ति जो ऐतिहासिक तथ्य के विषय में तात्कालिक घटना से संबधित व्यक्ति के मुहँ से सुनी सुनायी वर्णन को अपने शब्दों में व्यक्त करता है, ऐसे वर्णन को द्वितीयक साधन कहते हैं।

ऐतिहासिक आंकड़ों की विश्ववसनीयता व वैधता की जांच के लिए प्रायः दो तरह की आलोचनाओं का प्रयोग किया जाता है। ये इस प्रकार हैं - बाह्य लोचना (External Criticism)- इसमें इस तथ्य की जाँच करते हैं कि प्राप्त आंकड़ा या प्रमाण पत्र अपने बाह्य स्वरूप की दृष्टि से उचित है अथवा नहीं। इसके अन्तर्गत लिखित प्रमाण पत्र की यर्थाथता की जाँच की जाती है। बाह्य आलोचना के अन्तर्गत आंकड़ों के रूप, रंग, समय, स्थान तथा परिणाम की दृष्टि से यथार्थता की जाँच करते हैं। न्तरिक लोचना (Internal Criticism)- इस प्रकार की आलोचना का उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि क्या लेखक विषय के साथ न्याय कर पाया है अथवा नहीं। ऐतिहासिक अनुसंधानकर्ता के शोध प्रक्रिया व ऐतिहासिक अनुसंधान के क्षेत्र के बारे में भी आपने अध्ययन किया।

केस अध्ययन विधि एक ऐसी विधि है जिसमें किसी सामाजिक इकाई (social unit) के जीवन (life) की घटनाओं का किसी एक व्यक्ति, एक परिवार (family), एक संस्था (Institution) एक समुदाय (community) घटना, नीति (policy), संगठन आदि को लिया जा सकता है। स्पष्ट हुआ कि तब केस अध्ययन विधि में जो केस होता है, उससे तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया या घटना से होता है
जिसका एक आबद्ध संदर्भ होता है अर्थात केस में सम्मिलित की गई घटना या इकाई की अपनी चहारदीवारी होती है। आपने केस अध्ययन विधि के प्रत्येक पक्षों के बारे में भी अध्ययन किया।

प्रजातिक अनुसन्धान प्रमुख रूप से गुणात्मक तथा वर्णनात्मक अनुसंधान है। इस तरह के अनुसंधान में किसी मानव व्यवहार का अध्ययन स्वाभाविक परिस्थिति में किया जाता है। इस प्रकार के अनुसंधानों का सम्बन्ध वर्तमान तथा अतीत से होता है। वर्तमान के प्रश्नों का उत्तर अतीत के तथ्यों के आधार पर दिया जाता है। शिक्षा के अन्तर्गत इस विधि का उपयोग एक संस्था के विकास क्रम में किया जाता है। प्रजातिकवृत अनुसंधान के माध्यम से वर्तमान व्यवहार को समझने का प्रयास किया जाता है। उसकी बोधगम्यता के लिए अतीत तथ्यों की सहायता ली जाती है। आनुवंशिक अनुसंधान में भी इसी आधार को प्रयुक्त करते हैं। आपने प्रजातिक अनुसन्धान विधि के प्रत्येक पक्षों के बारे में भी अध्ययन किया।

6.9 शब्दावली (Glossary)

- **प्रयोगात्मक शोध (Experimental Research):** वह शोध जिसमें शोधकर्ता स्वतंत्र चर में जोड़-तोड़ (Manipulation) करके उसके प्रभाव का अध्ययन परतंत्र चर पर करता है तथा स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच कारण तथा परिणाम के मध्य सम्बन्ध (Cause and Effect Relationship) स्थापित करता है।
- **प्रयोगशाला प्रयोग शोध (Laboratory Experiment Research):** प्रयोगशाला प्रयोग एक प्रयोगात्मक शोध है जो एक प्रयोगशाला (Laboratory) में प्राय: यादृच्छित रूप से चुने गए (Randomly selected) व्यक्ति या व्यक्तियों पर किया जाता है तथा प्रयोगकर्ता कुछ स्वतंत्र चरों (Independent Variable) में जोड़-तोड़ (Manipulation) करता है तथा इसका प्रभाव आश्रित चर (Dependent Variable) पर देखता है। यह प्रयोग शोधकर्ता नियंत्रित परिस्थिति में करता है।
- **क्षेत्र प्रयोग शोध (Field Experiment Research):** क्षेत्र प्रयोग एक ऐसा शोध है जिसमें प्रयोगकर्ता एक वास्तविक परिस्थिति में एक या एक से अधिक स्वतंत्र चरों में जोड़-तोड़ करता है। इसमें बहिरंगी चरों या असंबद्ध चरों (Extraneous Variables) को अधिकतम नियंत्रित करने की कोशिश की जाती है।
- **इतिहास (History):** इतिहास अतीत का क्रमबद्ध व वैज्ञानिक अध्ययन है जिसके द्वारा वर्तमान की घटनाओं को समझने में काफी मदद मिलती है।
- **ऐतिहासिक अनुसंधान (Historical Research):** ऐतिहासिक समस्याओं के अन्वेषण में वैज्ञानिक विधि का प्रयोग ऐतिहासिक अनुसंधान है।
- **प्राथमिक साधन (Primary Source of Data):** ऐतिहासिक घटना या व्यक्ति के विषय में प्रत्यक्ष रूप से आंकड़े का संकलन ।
- **द्वितीयक साधन (Secondary source of data):** ऐतिहासिक घटना या व्यक्ति के विषय में अप्रत्यक्ष रूप से आंकड़े का संकलन ।
- **बाह्य लोचना (External Criticism):** बाह्य आलोचना में इस तथ्य की जांच की जाती है कि प्राप्त आंकड़ा या प्रमाण पत्र अपने बाह्य स्वरूप की दृष्टि से उचित है अथवा नहीं । इसके अन्तर्गत लिखित प्रमाण पत्र की यर्थाथता की जाँच की जाती है।
- **केस अध्ययन विधि (Case History Method):** केस अध्ययन विधि किसी इकाई के गहन विश्लेषण के माध्यम से सामाजिक घटना के अध्ययन की विधि है। केस कोई एक व्यक्ति, एक समूह, एक घटना, एक प्रक्रिया, एक समुदाय, एक समाज या सामाजिक जिंदगी की कोई इकाई हो सकती है।
- **प्रजातिकवृत (Ethnography):** प्रजातिकवृत मानवशास्त्र विषय की एक शाखा है। इसके अंतर्गत प्रजातियों का इतिहास राष्ट्रों के अनुसार तथा उनके आविर्भाव का अध्ययन किया जाता है।
- **प्रजातिक अनुसंधान (Ethnographic Research):** यह मूल रूप में गुणात्मक तथा वर्णनात्मक अनुसंधान है। किसी मानव व्यवहार का अध्ययन स्वाभाविक परिस्थिति में किया जाता है।

6.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. स्वतंत्र चर 2. घटनाएँ 3. जैविक विकास

निम्नलिखित कथनों में से सत्य अथवा असत्य कथन चुनिये-

1. असत्य 2. सत्य

6.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

4. Best, John W. & Kahn (2008). Research in Education, New Delhi, PHI.

5. Good, Carter, V. (1963). Introduction to Educational Research, New York, Rand Mc Nally and company.

6. Koul, Lokesh (2002). Methodology of Educational Research New Delhi, Vikas Publishing Pvt. Ltd.

7. Kerlinger, Fred N. (2002). Foundations of Behavioural Research, New Delhi, Surjeet Publications.

8. Ebel, Robert L. (1966) Measuring Educational Achievement, New Delhi, PHI.

9.Garret, H.E. (1972). Statistics in Psychology and Education, New York, Vakils, Feffers and Simans Pvt. Ltd.

10. Tuckman Bruce W. (1978). Conducting Educational Research New
York: Harcourt Bruce Jovanovich Inc.

11. Van Dalen, Deo Bold V. (1979). Understanding Educational Research, New York MC Graw Hill Book Co.

6.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

1. सिंह, ए. के. (2007): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास

2. शर्मा, आर. ए. (2001): शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स।

3. राय, पारसनाथ (2001): अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स।

6.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. प्रयोगात्मक शोध का अर्थ स्पष्ट कीजिए तथा प्रयोगात्मक शोध की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

2. शैक्षिक अनुसंधान में प्रयोगात्मक शोध के महत्व की व्याख्या कीजिए।

3. अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि के विशेषताओं की व्याख्या कीजिए व इसके मूल उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए।

4. शिक्षा में अनुसंधान की ऐतिहासिक विधि का मूल्यांकन कीजिए।

5. केस अध्ययन विधि का अर्थ स्पष्ट करते हुए इस विधि की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए।

6. शैक्षिक अनुसंधान में केस अध्ययन विधि के महत्व की व्याख्या कीजिए।

7. अनुसंधान की प्रजातिक विधि की विशेषताओं की व्याख्या कीजिए व इसकी विधि एवं प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

इकाई 7: संबंधित अनुसंधान साहित्य की समीक्षा

(Review of Related Literature)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

7.2 उद्देश्य (Objectives)

7.3 'साहित्य की समीक्षा' का अर्थ (Meaning of 'Literature Review')

7.4 साहित्य की समीक्षा के उद्देश्य (Objectives of the Literature Review)

7.5 साहित्य की समीक्षा के अधिनियम और प्रक्रिया (Act and Process of Literature Review)

7.6 साहित्य की समीक्षा के साधन (Tools of Literature Review)

7.7 शोध साहित्य समीक्षा के प्रकार्य (Tools of Literature Review)

7.8 शोध साहित्य समीक्षा की प्रक्रिया (Tools of Literature Review)

7.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

7.10 सारांश (Summary)

7.11 शब्दावली (Glossary)

7.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

7.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

7.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

7.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

शोधकार्य को आरम्भ करने से पूर्व शोध से संबंधित साहित्यों का गहन अध्ययन व उनकी समीक्षा बहुत ही आवश्यक होती है ताकि प्रस्तावित शोध की योजना व विस्तृत रूपरेखा तैयार की जा सके व शोध कार्य को सुचारू रूप से संपन्न किया जा सके। संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा, शोधकर्ता को अनुसंधान के लिए अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। शोध प्रस्ताव तैयार करने से लेकर शोध कार्य को संपन्न करने तक संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा मददगार साबित होती है। इन साहित्यों से शोध समस्या का चुनाव, शोध उद्देश्यों का निर्धारण, प्राक्क्ल्पनाओं का निर्माण, आंकड़े संग्रहित करने वाले उपकरण का चयन न्यादर्श का चुनाव, शोध डिजाइन निर्धारण इत्यादि बहुत सारे निर्णय करने में मदद मिलती है। प्रस्तुत इकाई में आप संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के समस्त पहलुओं का अध्ययन करेंगे ।

7.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ✓ संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा' का अर्थ स्पष्ट कर पाएंगे।
- ✓ शैक्षिक अनुसंधान में संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के अधिनियम और प्रक्रिया की व्याख्या कर सकेंगें।
- ✓ संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के साधनों का वर्णन कर सकेंगे ।
- ✓ संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा की प्रक्रिया का मूल्यांकन कर सकेंगे।

7.3 साहित्य की समीक्षा का अर्थ (Meaning of Review of Literature)

किसी भी विषय के विकास में किसी विशेष शोध प्रारूप का स्थान बनाने के लिए शोधकर्ता को पूर्व सिद्धान्तों एवं शोधों से भली-भाँति अवगत होना चाहिए। इस जानकारी को निश्चित करने के लिए व्यावहारिक ज्ञान में प्रत्येक शोध प्रारूप की प्रारंभिक अवस्था में इसके सैद्धान्तिक एवं शोधित साहित्य की समीक्षा करनी होती है। शोध कार्य को पूरा करने हेतु संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा एक बहुत ही आवश्यक पहलू है। अत: सर्वप्रथम इसके अर्थ को समझना अनिवार्य है। इस हेतु यहाँ साहित्य समीक्षा का अर्थ दिया गया है।

साहित्य-समीक्षा में दो शब्द हैं - 'साहित्य' और 'समीक्षा'। साहित्य शब्द परम्परागत अर्थ से विभिन्न अर्थ प्रदान करता है। यह भाषा के संदर्भ में प्रयोग किया जाता है जैसे हिंदी साहित्य, आंग्ल साहित्य, संस्कृत साहित्य इत्यादि । इसके विषय-वस्तु के अन्तर्गत गद्य, काव्य, नाटक, उपन्यास कहानी आदि आते हैं। अनुसंधान के क्षेत्र में 'साहित्य' शब्द किसी विषय के अनुसंधान के विशेष क्षेत्र के ज्ञान की ओर संकेत करता है जिसके अंतर्गत सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और तथ्यात्मक शोध अध्ययन आते हैं।

'समीक्षा' शब्द का अर्थ शोध के विशेष क्षेत्र के ज्ञान की व्यवस्था करना एवं ज्ञान को विस्तृत करके यह दिखाना है कि उसके द्वारा किया गया अध्ययन इस क्षेत्र में एक योगदान होगा। साहित्य की समीक्षा का कार्य अत्यन्त सृजनात्मक एवं थकाने वाला है क्योंकि शोधकर्ता अपने अध्ययन को व्यक्ति पूर्वक कथन प्रदान करने के लिए प्राप्त ज्ञान को अपने ढंग से एकत्रित करता है।

'साहित्य की समीक्षा' की अवधारणा को निम्नलिखित ढंग से परिभाषित किया गया है। शोध के संदर्भ में इसका विशेष अर्थ होता है। **गुड, बार और स्केट्स (Good, Bars and Scates)** के अनुसार' "योग्य चिकित्सक को औषधि के क्षेत्र में हुए नवीनतम अन्वेषणों के साथ चलना चाहिए.....स्पष्टतः शिक्षाशास्त्र के विद्यार्थी और शोधकर्ता को शैक्षिक सूचनाओं के साधनों और उपयोगों तथा उनके स्थापन से परिचित होना चाहिए।"

डब्ल्यु. आर. बर्ग (W. R. Burg) के अनुसार, "किसी भी क्षेत्र का साहित्य उसकी नींव को बताता है, जिसके ऊपर भविष्य का कार्य किया जाता है। यदि हम साहितय की समीक्षा द्वारा प्रदान किए गए ज्ञान की नींव बनाने में असमर्थ होते हैं तो हमारा कार्य संभवतया तुच्छ और प्राय: उस कार्य की नकल मात्र ही होता है जो कि पहले ही किसी के

द्वारा किया जा चुका है।"

जॉन डब्ल्यू. बेस्ट (W. R. Burg) के अनुसार, "व्यावहारिक रूप में संपूर्ण मानव-ज्ञान पुस्तकों और पुस्तकालयों से मिल सकता है। अन्य प्राणियों से भिन्न मानव को अतीत से प्राप्त ज्ञान को प्रत्येक पीढ़ी के साथ नए ज्ञान के रूप में प्रारंभ करना चाहिए। ज्ञान के विस्तृत भण्डार में उसका निरंतर योगदान प्रत्येक क्षेत्र में मानव द्वारा किए गए प्रयासों की सफलता को सम्भव बनाता है।"

साहित्य की समीक्षा के दो पक्ष होते हैं। प्रथम पक्ष के अंतर्गत, समस्त क्षेत्र में प्रकाशित सामग्री को पहचानना तथा जिस भाग से हम पूरी तरह अवगत नहीं है उसको पढ़ना आता है। हम उन विचारों और परिणामों का विकास करते हैं, जिसके आधार पर शोध अध्ययन किया जाएगा। साहित्य के समीक्षा के द्वितीय पक्ष में शोध अभिलेख के भाग में इन विचारों को लिखना होता है। यह भाग शोधकर्ता और पढ़ने वाले दोनों के लिए लाभकारी है। शोधकर्ता के लिए यह उस क्षेत्र में भूमिका स्थापित करता है। पढ़ने वालों के लिए यह विचारों और अध्ययन के लिए आवश्यक शोधों का सारांश प्रस्तुत करता है।

7.4 साहित्य की समीक्षा के उद्देश्य (Objectives of the Literature Review)

शोध कार्य में साहित्य की समीक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. यह सिद्धान्त, विचार, व्याख्यायें अथवा परिकल्पनायें प्रदान करता है जो नई समस्या के चयन में उपयोगी हो सकते हैं।
2. यह परिकल्पना के लिए साधन प्रदान करता है। शोधकर्ता प्राप्त अध्ययनों के आधार पर शोध परिकल्पनायें बना सकता है।
3. यह समस्या के समाधान के लिए उचित विधि, प्रक्रिया, तथ्यों के साधन और सांख्यिकी तकनीक का सुझाव देता है।
4. यह परिणामों के विश्लेषण में उपयोगी निष्कर्षों और तुलनात्मक तथ्यों को निर्धारित करता है। संबंधित अध्ययनों से प्राप्त किए गए निष्कर्षों की तुलना की जा सकती है और यह समस्या के निष्कर्षों के लिए उपयोगी हो सकता है।
5. यह शोधकर्ता की निपुणता और सामान्य ज्ञान को विकसित करने में सहायक होता है।

ब्रूस डब्ल्यू. टाकमन(Bruce W. Takman) (1978) के अनुसार साहित्य समीक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. महत्वपूर्ण **चरों** को खोजना।
2. जो हो चुका है और उससे जो करने की आवश्यकता है उसको पृथक करना।
3. शोध कार्य का स्वरूप बनाने के लिए प्राप्त अध्ययनों का संकलन करना।
4. समस्या का अर्थ, इसकी उपयुक्तता, समस्या से इसका संबंध और प्राप्त अध्ययनों से इसके अन्तर को निर्धारित करना।
5. साहित्य की समीक्षा, पूर्व अध्ययनों की सीमाएं और महत्वपूर्ण चीजों के संदर्भ में अन्तदृष्टि प्रदान करता है। यह शोधकर्ता को अपने शोध कार्यों में सुधार करने योग्य बनाता है।

7.5 साहित्य की समीक्षा के अधिनियम और प्रक्रिया (Act and Process of Literature Review)

संबंधित शोध (Related Research) - साहित्य की समीक्षा करने की एक सुनिश्चित प्रणाली होती है। इस प्रणाली का ज्ञान शोधकर्ता को होना चाहिए। संबंधित शोध - साहित्य की समीक्षा की विशिष्ट प्रक्रिया निम्नलिखित हैं-

1. सामान्यत: यह सुझाव दिया जाता है कि शोधकर्ता को सामान्य कार्यों अथवा साधनों अर्थात् सैद्धान्तिक कार्यों, चरों और प्रकरणों का अर्थ और प्रकृति को अधिक स्पष्ट करने वाली पाठय पुस्तकों को पढ़कर अथवा विचार करके एक सामान्य अवधारणा बना लेनी चाहिए। तार्किक रूप से प्रारम्भिक अवस्था में समाधान किए जाने वाली समस्या की एक रूप रेखा तैयार कर ली जाती है। पाठ्य-पुस्तक से प्रायः समस्या का सैद्धान्तिक स्वरूप प्राप्त होता है। विशिष्ट क्षेत्र और चरों के विषय में गहन ज्ञान विकसित करना अत्यन्त आवश्यक है।

2. अपनी समस्या की प्रकृति के विषय में अन्तदृष्टि उत्पन्न करने के पश्चात् शोधकर्ता को अपने क्षेत्र के प्रयोग सिद्ध अनुसंधानों की समीक्षा करनी चाहिए। इस पक्ष का सबसे अच्छा संदर्भ शोध की सूची पुस्तिका, शैक्षिक अनुसंधान का विश्व-कोष, शैक्षिक अनुसंधान की समीक्षा आदि है। इस अवस्था पर विशिष्ट विवरण अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

3. अनुसंधान के लिए पुस्तकालय सामग्री क्रमानुसार होनी चाहिए। शोधकर्ता को शैक्षिक सूची-पत्र से अपने तथ्यों को एकत्र करके कार्य प्रारंभ करना चाहिए। जब अनेक संदर्भों की नकल करनी होती है तो उनको फोटो कॉपी करा लेनी चाहिए क्योंकि यह कार्य नियमपूर्वक करना अत्यन्त आवश्यक है।

4. अनुसंधानकर्ता को आवश्यकतानुसार पूरे नोट्स बना लेना चाहिए तथा अनावश्यक नोट्स को छोड़ देना चाहिए। उपयोगी और आवश्यक सामग्री नियमपूर्वक तैयार करनी चाहिए। एक जैसे साधनों को एकत्र करना अधिक उचित होगा।

5. पुस्तकालय के प्रभावशाली कार्य के लिए शीघ्रता से पढ़ने की योग्यता होना अत्यन्त आवश्यक है। यह कौशल अभ्यास से विकसित की जा सकती है। शोध के उद्देश्य के लिए साहित्य का सर्वेक्षण कोई आसान काम नहीं है। यह विशिष्ट उद्देश्य के लिए विशिष्ट जानकारी प्राप्त करने का विधिपूर्वक किया जाने वाला कार्य है।

6. शोधकर्ता के लिए नोट्स लेने का कार्य अत्यन्त कठिन है। उसको अपना अधिकांश समय पुस्तकालय में नोट्स बनाने में ही लगाना पड़ता है। यह अत्यन्त थकाने वाला कार्य है। लेकिन अस्पष्टता और असावधानी के लिए महत्वपूर्ण मार्ग दिखाता है। इसको इस उद्देश्य के लिए पुस्तकालय में प्राप्त सुविधाओं का लाभ उठाना चाहिए।

7.6 साहित्य की समीक्षा के साधन (Tools of Literature Review)

इस उद्देश्य के लिए प्रयोग किए जाने वाले साहित्य के विभिन्न साधन हैं। ये साधन मुख्यतया तीन भागों में विभक्त किए जा सकते हैं-

1. पुस्तकें और पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री,

2. समय-समय पर निकलने वाली पत्रिकाओं का साहित्य तथा

3. सामान्य पुस्तकें।

1. पुस्तकें और पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री (Books and Text Books Material)- अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित सर्वाधिक उपयोगी पुस्तकों की सूची (Cumulative Book Index and Book Review Index, Book Review Digest) में होती है। विषय सूचक पुस्तकें बताती हैं कि पुस्तकें प्रेस में है अथवा छपने वाली हैं अथवा छपी 'राष्ट्रीय संघीय नामावली' (National Union Catalogue) भी इस उद्देश्य के लिए उपयोगी है।बहुत से ऐसे प्रकाशन हैं जिनमें विशिष्ट संदर्भ पाए जाते हैं जो ज्ञान के विशिष्ट क्षेत्र के लिए पर्याप्त होते हैं। संचयी पुस्तक सूचकांक प्रतिमाह प्रकाशित होता है। सभी पुस्तकें अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित होती हैं।

2. समय-समय पर निकलने वाली पत्रिकायें (Periodicals)- समय-समय पर निकलने वाली वाली पत्रिकाओं को एक प्रकाशन के रूप में परिभाषित किया जाता है जोकि क्रमबद्ध भागों में प्राय: एक निश्चित अन्तराल के बाद तथा अनिश्चित काल तक चलते रहने के उद्देश्य से प्रकाशित होती है। इसके अंतर्गत वार्षिक पुस्तिका (Year book), अभिलेख (Documents), संचयी पुस्तकों की सूची(Cumulative Book Index), अन्तर्राष्ट्रीय शोध सारांश

(International Research Abstracts), मासिक पत्रिका (Journals), समाचार-पत्र, पत्रिकायें समय-समय पर प्रकाशित होने वाली अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं की सूचकांक आदि आते हैं।

ये पत्रिकायें सामान्यतः पुस्तकालयों के कमरे में खुली अलमारियों में रखी जाती हैं। अध्ययन किए जाने वाले विषय-वस्तु के प्रकरण को पहचानने के लिए बनाए गए सूची- पत्र पर ही इन पत्रिकाओं का प्रभावशाली उपयोग लिख दिया जाता है।

शिक्षाशास्त्र की पत्रिकाओं का नवीनतम सूची पत्र न्यूयॉर्क से प्रतिमाह प्रकाशित होती है। न्यूयॉर्क का पुस्तकों का सूचकांक अंग्रेजी और विदेशी भाषा दोनों में प्रकाशित पत्रिकाओं एवं पुस्तकों की नवीनतम सूची पत्रों का निर्देशन करता है।

3. सारांश (Abstracts)- शोध कार्य हेतु प्रकाशित लेख का सारांश प्रासंगिक व सहायक है। संदर्भों की क्रमबद्ध सूची प्रदान करने के अतिरिक्त इसके अन्तर्गत विषय-वस्तु का सारांश भी आता है। प्राय: शोध अध्ययनों का संक्षिप्तिकरण सारांश के रूप में दिया जाता है जैसे- शैक्षिक शोध (Educational Abstracts) सारांश, अन्तर्राष्ट्रीय शोध सारांश आदि।

एरिक (ERIC) शैक्षिक अभिलेखीय सारांश (Educational Documents Abstracts, Washington DC) नामक वार्षिक प्रकाशन के अंतर्गत पूरे वर्ष के शैक्षिक साधनों के अभिलेखों का सारांश होता है। इन विषय क्षेत्र के शोध अध्ययनों के साथ शैक्षिक शोध सारांश, मनोवैज्ञानिक शोध सारांश और सामाजिक शोध सारांश प्रकाशित होते हैं।

4. विश्व कोश (Encyclopaedia)- विश्व-कोशों में विशेषज्ञों द्वारा लिखे गए विभिन्न विषयों पर संक्षिप्त सूचनायें होती हैं। केवल विशेष विश्वकोशों में ज्ञान का निश्चित क्षेत्र होता है। शैक्षिक शोध का विश्व-कोश न्यूयॉर्क से प्रत्येक दस वर्ष बाद प्रकाशित होता है। यह शैक्षिक समस्याओं पर किए गए महत्वपूर्ण कार्यों की ओर संकेत करता है।

5. पत्रावली, पुस्तकें, वार्षिक पुस्तकें, और सहायक पुस्तकें तथा निर्देशिका (Files, Books, Yearbooks, and Subsidiary Books and Directories)- सन्दर्भ की इन श्रेणियों के अंतर्गत वे प्रकाशन आते हैं जो दिए गए उद्देश्य से संबंधित विभिन्न विषयों के नवीनतम सूचनाओं का विवरण प्रस्तुत करते हैं। प्राय: परिगणना संबंधी प्रकृति की विशिष्ट सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए इस प्रकार के संदर्भों की आवश्यकता **पड़ती** है। 'विश्व पत्रांक (World Almanac), 'तथ्यों संबंधी पुस्तक (Book of Facts), न्यूयॉर्क, नामक पुस्तक में विभिन्न विषयों की विभिन्न सूचनायें होती है। शिकागो की शिक्षण पर शोध की छोटी पुस्तक (Hand-book of Research on Teaching Chicago) के अन्तर्गत विस्तृत संदर्भ पुस्तकों की सूची के साथ शिक्षण पर विस्तृत शोध अध्ययनों को दिया जाता है। Education year book, New York, एक वार्षिक प्रकाशन है जिसके अंतर्गत संदर्भ पुस्तिकाओं और विस्तृत संदर्भ पुस्तकों की सूची के साथ विभिन्न शैक्षिक विषयों पर साहित्यकीय आकड़े होते हैं।

'उच्च शिक्षा की वार्षिक पुस्तक' (Year Book of Higher Education) से अमेरिका, कनाडा और मैक्सिको में हुए उच्च शिक्षा के समीक्षाओं की सूचनायें प्राप्त होती है।

6.अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा पर संदर्भ पुस्तकें (References of International Education): इस प्रकार प्रकाशनों में अमेरिका से बाहर की शिक्षा होती है। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के अध्यापक-शिक्षा और लंदन विश्वविद्यालय दोनों के द्वारा संयुक्त रूप से तैयार किए जाने पर शिक्षा की वार्षिक पुस्तक, न्यूयार्क प्रतिवर्ष प्रकाशित होती है, प्रत्येक भाग अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा के किसी न किसी पक्ष पर आधारित होता है। 'शिक्षाशास्त्र की अन्तर्राष्ट्रीय वार्षिक पुस्तक' (International Year - Book of Education) नामक वार्षिक पुस्तक अमेरिका, कनाडा और 1-10 से अधिक विदेशी देशों में पूर्व वर्षों में विकसित शैक्षिक समीक्षा को अंग्रेजी और फ्रेंच दोनों भाषाओं में प्रस्तुत करती

है। "विकासशील देशों में उच्चशिक्षा" (Higher Education in Developing Countries Cambridge) विद्यार्थियों, राजनीति और उच्च शिक्षा पर चयनित संदर्भ पुस्तकों की सूची दी जाती (Bibliography) है।

7. विशिष्ट शब्द-कोश (Specialized Encyclopaedia) – शिक्षाशास्त्र पर विशिष्ट शब्द-कोश है जिनमें पद-शब्द और उनका अर्थ निहित है। 'शिक्षाशास्त्र का शब्दकोश, न्यूयॉर्क नामक शैक्षिक शब्द-कोश में तकनीकी और व्यावसायिक शब्द आते हैं। तुलनात्मक शैक्षिक लेखों में प्रयुक्त विदेशी शैक्षिक शब्द भी उसमें दिये **जाते** हैं।
भारत सरकार ने भी शिक्षाशास्त्र का शब्द-कोश तैयार किया है। जिसमें अंग्रेजी व हिंदी में तकनीकी और व्यावसायिक शब्द दिये गए हैं। शिक्षाशास्त्र पर कार्य करने वाले को प्राय: **दूसरे** शिक्षाशास्त्री या शिक्षा से बाहर के क्षेत्र में कार्य करने वालों के विषय में जानकारी प्राप्त करने की आवश्यकता पड़ती है। शैक्षिक शोध करने के लिए उसका अध्ययन आवश्यक है।

8. लघु शोध और शोध ग्रन्थ (Dissertations and Theses)- लघु शोध व शोध प्रबन्ध जिनमें शैक्षिक शोधों के प्रस्तुतीकरण का समावेश रहता है, संस्थाओं और विश्वविद्यालयों द्वारा रखी जाती है, जोकि इनके लेखकों की पारितोषिक देती है। शैक्षिक पत्रिकाओं में कभी-कभी तो ये पूरी प्रकाशित हो जाती हैं ओर कभी उनका कुछ अंश ही प्रकाशित होती है। संबंधित शोध प्रबन्ध (Theses) और लघु शोध प्रबन्ध (Dissertations) साहित्य की समीक्षा के मुख्य साधन हैं।

9. समाचार-पत्र (News Papers)- प्रचलित समाचार पत्र शिक्षा क्षेत्र के नये विकास, सम्मेलन, अभिलेख और भाषाओं की नवीनतम सूचनायें देती हैं। नवीन घटनायें और शैक्षिक समाचार भी समाचार-पत्रों में प्रकाशित होत हैं। यह भी साहित्य की समीक्षा के महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक है।
साहित्य को देखने से शोध-कर्ता ज्ञान की समस्याओं को जान जाता है तथा वह अपने क्षेत्रों में नई खोजों का मूल्यांकन कर सकता है, आवश्यक शोधों की पहचान और विरोधाभास खोजों के ज्ञान के अंतर को जान पाता है। वह उनके विधियों और पुस्तकों से अवगत हो **जाता** है जो उसके अपने शोध में उपयोगी हो सकती हैं।

7.7 शोध साहित्य समीक्षा के प्रकार्य (Functions of Review of Literature)

शोध साहित्य समीक्षा के मुख्य कार्य निम्नवत हैं-

1. विचारणीय शोध के लिए निर्देशों अथवा सन्दर्भों की अवधारणाओं को निर्मित करना ।
2. समस्या क्षेत्र के शोध की वस्तुस्थिति को समझना।
3. शोध विधियों और तथ्यों के विश्लेषण को आधार प्रदान करना ।
4. विचारणीय शोध की सफलता और निष्कर्षों की उपयोगिता अथवा महत्व की संभावना का आकलन करना।
5. शोध की परिभाषाएँ, कल्पनाओं, सीमाओं, और परिकल्पनाओं के विश्लेषण के लिए आवश्यक जानकारी प्रदान करना।
6. शोध निष्कर्षों को यथास्थिति लिख देना ।
7. शोध विधियों और तथ्यों के विश्लेषण को आधार प्रदान करना।
8. यह सिद्धान्त, विचार, व्याख्यायें अथवा परिकल्पनायें प्रदान करता है जो नई समस्या के चयन में उपयोगी हो सकते हैं।
9. यह परिकल्पना के लिए साधन प्रदान करता है। शोधकर्ता प्राप्त अध्ययनों के आधार पर शोध परिकल्पनायें बना सकता है।
10. यह शोध कार्य में नकल को प्रोत्साहित करता है।

7.8 शोध साहित्य समीक्षा की प्रक्रिया (Tools of Literature Review)

साहित्य की समीक्षा को आरम्भ करने का स्थान शोधकर्ता पर निर्भर करता है कि वह समस्या क्षेत्र से कितना अवगत है। पूर्णरूपेण भली-भाँति पढ़े हुए शोधकर्ता को केवल नवीन लेखों और शोधों की संक्षिप्त समीक्षा की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार इस भाग की यह अवधारणा है कि शोधकर्ता समस्या के क्षेत्र में दक्ष नहीं होता है तथा वह साहित्य की समीक्षा के द्वारा यह दक्षता हासिल करता है।

इस प्रकार के शोध-कर्ता को विचारों से संबंधित साहित्य की समीक्षा द्वारा कार्य प्रारम्भ करना चाहिए क्योंकि शोध साहित्य का क्षेत्र अधिक विस्तृत है और अधिक अच्छा दृष्टिकोण पैदा करता है। सबसे अच्छा स्थान नवीन कार्यों की समीक्षा अथवा विश्वकोष में समस्या क्षेत्र के सामान्य कार्यों से शुरू करना है। शिक्षा शास्त्र के सभी क्षेत्रों में बहुत अच्छे सामान्य कार्य और सामान्य विश्वकोश हैं। जैसे आधुनिक शिक्षा का विश्व- कोश और शैक्षिक शोध का विश्वकोश और अधिक विशिष्ट कार्य जैसे बाल विकास और मार्ग दर्शन का विश्व-कोश अथवा शिक्षा शास्त्र के अध्ययन के लिए राष्ट्रीय समाज की वार्षिक पुस्तकें आदि है।

जब शोध समस्या का विशिष्टीकरण हो जाता है तो शोध-कर्ता को अपनी सभी अध्ययन सामग्री विशेषकर नई विशिष्ट शोध समस्या के संदर्भ में उसकी उपयुक्तता का मूल्यांकन करके सामग्री एकत्र कर लेनी चाहिए। यह वह मूल्यांकन करना चाहेगा कि क्या पहले से ही समीक्षा किया गया साहित्य उसके द्वारा निश्चित की गई विशिष्ट समस्या के लिए स्वरूप प्रदान करता है, अथवा उसमें और अधिक कार्य की अवश्यकता है। दूसरी ओर वह नये शोध साहित्य को भी देखना चाहेगा और यह देखना शुरू कर देगा कि उसकी विशिष्ट शोध समस्या पर क्या, कब, किसके द्वारा और किस प्रकार के शोध पूर्व में हुए हैं।

साहित्य को पढ़ते समय वह शोध अध्ययनों के संदर्भों पर भी आयेगा। लेकिन प्राय: कुछ स्थानों पर उसकी संदर्भों की सूची बेकार हो जाती है और सामान्य व्यक्ति प्रकाशित साहित्य के पुंज में से अन्य संदर्भों को देखने लगता है। व्यावहारिक साहित्य की समीक्षा के लिए प्रयोग में आने वाले विभिन्न प्रकार के साधन शिक्षाशास्त्र में लाभदायक है। शिक्षाशास्त्र में लाभदायक हैं- शिक्षाशास्त्र का सूचकांक, बाल विकास का शोध, सारांश, मनोविज्ञान शोध सारांश, सामाजिक शोध सारांश और संचित साहित्य के लिए समानान्तर साधन जैसे- संचयी पुस्तकों का सूचकांक और सामाजिक साहित्य के लिए रीडर गाइड।

सामान्य व्यक्ति अपने समीक्षा के इस पक्ष को अपनी समस्या क्षेत्र के लिए अधिक उपयुक्त सारांश अथवा सूची पत्र का प्रयोग करके शुरू करता है। उदाहरणार्थ प्राइमरी विद्यालयों में अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में शोध प्रोजेक्ट विकसित करने में रूचि रखने वाले शोध-कर्ता के लिए अधिक उपयुक्त सूची-पत्र, शिक्षा-शास्त्र का सूचकांक है। जैसा की उपर बताया गया है यह प्रतिमाह प्रकाशित होनेवाला वर्णमाला प्रकरण संबंधित सूचकांक है जिसके प्रत्येक प्रकरण में नवीनतम उपयुक्त पुस्तकों और पत्रिकाओं के लेखों की सूची होती है। अध्यापक शिक्षा के लिए साहित्य की समीक्षा में सूची-पत्र प्रयोग करने पर अयोग्य व्यक्ति अध्यापक शिक्षा की विशिष्ट समस्या को लेगा और साथ ही विभिन्न संबंधित शब्दों की सूची भी तैयार करेगा जैसे शिक्षण का अभ्यास, प्रवेश के मानदण्ड, शिक्षण कौशलों को पहचानना और शिक्षा सूचकांक की नवीनतम पुस्तक लेकर उन शीर्षकों को देखना और समस्या के लिए उपयुक्त प्रतीत होने वाले प्रत्येक प्रकरण की नकल करना।

7.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. ..... उन पुस्तकों के बारे में आवश्यक जानकारी प्रदान करता है जो या तो प्रकाशित हो चुकी हैं या प्रकाशित होने की प्रक्रिया में हैं। (राष्ट्रीय संघीय नामावली (National Union Catalogue) **या** एरिक (ERIC))
2. शोध साहित्य की समीक्षा शोधकर्ताओं को ..... को समझने में मदद करती है। (शोध विषय की वस्तुस्थिति **या** शोध सारांश)

3. पत्रिकाएँ उन प्रकाशनों को परिभाषित करती हैं जो ..... प्रकाशित होती हैं। (अनिश्चित काल के लिए निरंतर **या** साल में एक बार)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सोशल मीडिया पोस्ट साहित्य समीक्षा का साधन नहीं है।
2. साहित्य समीक्षा का मुख्य उद्देश्य मौजूदा ज्ञान को समझना और शोध में अंतराल पहचानना है।

7.10 सारांश (Summary)

साहित्य की समीक्षा का कार्य सृजनात्मक है क्योंकि शोध-कर्ता अपने अध्ययन को व्यक्ति **पूर्वक** कथन प्रदान करने के लिए प्राप्त ज्ञान को अपने ढंग से एकत्रित करता है।साहित्य की समीक्षा के दो पक्ष होते हैं। प्रथम पक्ष के अंतर्गत, समस्त क्षेत्र में प्रकाशित सामग्री को पहचानना तथा जिस भाग से हम पूरी तरह अवगत नहीं है उसको पढ़ना आता है। हम उन विचारों और परिणामों का विकास करते हैं, जिसके आधार पर शोध अध्ययन किया जाएगा। साहित्य के समीक्षा के द्वितीय पक्ष में शोध अभिलेख के भाग में इन विचारों को लिखना होता है। पढ़ने वालों के लिए यह विचारों और अध्ययन के लिए आवश्यक शोधों का सारांश प्रस्तुत **करता** है।

संबंधित शोध-साहित्य की समीक्षा करने की एक सुनिश्चित प्रणाली होती है। इस प्रणाली का ज्ञान शोधकर्ता को होना चाहिए। संबंधित शोध-साहित्य की समीक्षा की विशिष्ट प्रक्रिया को इस इकाई में आपने अध्ययन किया। संबंधित शोध-साहित्य की समीक्षा के लिए प्रयोग किए जाने वाले साहित्य के विभिन्न साधन हैं। ये साधन मुख्यतया तीन भागों में विभक्त किए जा सकते हैं-

1. पुस्तकें और पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री,
2. समय-समय पर निकलने वाली पत्रिकाओं का साहित्य
3. सामान्य पुस्तकें।

शोध साहित्य समीक्षा के मुख्य कार्य हैं- विचारणीय शोध के लिए निर्देशों अथवा सन्दर्भों की अवधारणाओं को निर्मित करना, समस्या क्षेत्र के शोध की वस्तुस्थिति को समझना, शोध विधियों और तथ्यों के विश्लेषण को आधार प्रदान करना, विचारणीय शोध की सफलता और निष्कर्षों की उपयोगिता अथवा महत्व की संभावना का आकलन करना, शोध की परिभाषाएँ, कल्पनाओं, सीमाओं और परिकल्पनाओं के विश्लेषण के लिए आवश्यक जानकारी प्रदान करना।

7.11 शब्दावली (Glossary)

साहित्य (Literature): साहित्य शब्द किसी विषय के अनुसंधान के विशेष क्षेत्र के ज्ञान की ओर संकेत करता है जिसके अंतर्गत सैद्धान्तिक, व्यावहारिक और तथ्यात्मक शोध अध्ययन आते हैं।

समीक्षा (Review): समीक्षा शब्द का अर्थ शोध के विशेष क्षेत्र के ज्ञान की व्यवस्था करना एवं ज्ञान को विस्तृत करना।

7.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. राष्ट्रीय संघीय नामावली (National Union Catalogue) 2. शोध विषय की वस्तुस्थिति
3. अनिश्चित काल के लिए निरंतर

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2. सत्य

7.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

7.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

1. सिंह, ए०के० (2007) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोधविधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
2. गुप्ता, एस०पी० (2008) : मापन एवं मूल्यांकन, इलाहाबाद, शारदा पब्लिकेशन
3. शर्मा, आर०ए० (2001) : शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स
4. राय, पारसनाथ (2001) : अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स
5. Best, John W. & Kahn (2008). Research in Education, New Delhi, PHI.

7.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा' का अर्थ स्पष्ट कीजिए तथा शैक्षिक अनुसंधान में संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के महत्व की व्याख्या कीजिए ।
2. संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
3. संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के अधिनियम और प्रक्रिया की व्याख्या कीजिए ।
4. संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा के साधनों का वर्णन कीजिए।
5. संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा की प्रक्रिया का मूल्यांकन कीजिए।

इकाई - 8 अनुसंधान समस्या का निर्माण

Formulation of Research Problem

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

8.2 उद्देश्य (Objectives)

8.3 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन (Selection and Formulation of Research Problem)

8.4 अनुसंधान की प्रकृति (Nature of research)

8.5 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली (Operational Definition and Scientific Terminology)

8.6 अवधारणाएं (Concepts)

8.7 परिकल्पनाएँ (Hypotheses)

8.8 चर (Variables)

8.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

8.10 सारांश (Summary)

8.11 शब्दावली (Glossary)

8.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

8.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

8.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

8.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी अनुसन्धान में शोध समस्या के निर्धारण में शोध समस्या का स्पष्ट एवं तर्कसंगत होना नितांत आवश्यक है। शोध समस्या का उचित चयन किसी भी अनुसन्धान की नीव है एवं यहाँ पर यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सम्पूर्ण शोध, चरण बद्ध तरीके से एवं सामाजिक शोध के प्रमाणिकता के आधार पर ही सम्पादिक किया जाये तभी यह अनुसन्धान की परिधि में आता है। जब एक बार शोध समस्या का स्पष्ट रूप से निर्धारण हो जाता है तभी उसे स्पष्ट अनुसन्धान की समस्या के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। शोध समस्या को एक कथन के रूप में स्पष्ट करने के लिये शोध के चरण को भालिभांति समझना अत्यन आवश्यक है।

शोध समस्या के चरणों को स्पष्ट रूप से समझने के लिये इसका क्रमबद्ध अध्ययन किया जाना आवश्यक है, क्योंकि सामाजिक अनुसन्धान में शोध समस्या के चयन में वह तार्किकता क्रमबद्धता एवं गुणात्मकता होना अत्यंत आवश्यक है। जिस विषय या शोध समस्या पर आपके द्वारा शोध किया जाना है। अतः शोध समस्या का चुनाव ही शोध की आधारशिला है। शोध समस्या क्या है इसका विवरणात्मक लेखा जोखा ही हमें परिकल्पना निर्माण में मदद करता है यदि समस्या पर गौर किया जाये तो यह प्रश्नवाचक रूप में हमारे सामने आती है कि समस्या का स्वरुप क्या है एवं दो या दो से अधिक चरों के मध्य किस प्रकार का या क्या सम्बन्ध है। समस्या के चुनाव में और इसके प्रतिपादन में जो विवरण प्रस्तुत किया जाना होता उस कार्य हेतु हमें एक सुव्यवस्थित रूपरेखा का निर्माण करना होता है। इस अध्ययय में हम आगे रूपरेखा निर्माण की प्रक्रिया से अवगत होंगे।

8.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप-

- ✓ अनुसन्धान या शोध, समस्या किसे कहते है यह जान सकेंगे।
- ✓ अनुसन्धान या शोध, समस्या का चुनाव किस प्रकार किया जाता है का अध्ययन कर सकेंगे।
- ✓ अनुसन्धान या शोध, समस्या के चुनाव एवं इसके प्रतिपादन में शोध के क्रम की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ अनुसन्धान या शोध समस्या के चरणों के अध्ययन के पश्चात आप शोध समस्या का क्रमवार वर्णन कर सकेंगे।

8.3 अनुसंधान समस्या का चुनाव एवं प्रतिपादन (Selection and Formulation of Research Problem)

यहाँ पर हम शोध समस्या के निर्धारण की प्रक्रिया से अवगत होंगे एवं इसके साथ-साथ शोध के चरणों के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करेंगे जिसका विवरण निम्नवत है-

ए. आइन्स्टीन तथा एन. एनफैल्ड (A. Einstein and N. Enfeld) के अनुसार, **"समस्या का प्रतिवादन प्रायः इसके समाधान से आवश्यक है।"**

समस्या के चुनाव के साथ समस्या से सम्बन्धित अवधारणाओं, परिभाषाओं, वाक्य विन्यासों और परिकल्पनाओं का विवरण प्रस्तुत किया जाना आवश्यक है। सामाजिक अनुसन्धान में शीर्षकों के चुनाव का क्षेत्र उतना ही व्यापक है जितना कि सामाजिक व्यवहार का इसलिए अनुसन्धान का विषय तर्कसंगत होना अत्यंत आवश्यक है। एक सामाजिक अनुसन्धानकर्ता को व्यक्तित्व एवं पर्यावरण दोनों का ही ज्ञान होना नितांत आवश्यक है।

शोध समस्या निर्माण के चरणों का विवरण निम्नवत है-

1- समस्या का कथन (Statement of the problem)

2- समस्या की प्रकृति (Nature of the problem)

3- उपलब्ध साहित्य का पुर्नावलोकन (Review of available literature)

इस प्रकार से किसी अनुसन्धान हेतु समस्या के चयन में विचारों को एकत्रित करने के अनेक श्रोत हैं। जैसे लिखित उपलब्ध सामग्री, व्यक्तियों के अनुभव, व्यक्तिगत बातचीत, तथ्य, मूल्य एवं सिद्धांत, शोध ग्रन्थ, शोध विषय से सम्बन्धित विभिन्न पत्र- पत्रिकाओं को शामिल किया जाता है। इसके साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि जो व्यक्ति या अनुसन्धानकर्ता अनुसन्धान करने जा रहा है उसका व्यक्तित्व एवं वहाँ का पर्यावरण से सम्बन्धित कारक भी अनुसन्धान पर प्रभाव डालते है। क्योंकि अनुसंधानकर्ता के अपने निजी मूल्य विश्वास मनोव्रतियाँ एवं अभिरुचियां होती है और फिर एक अनुसन्धान कार्य बहुत ही धैर्य, परिश्रम, दृढ़ता की आवश्यकता होती है जब अनुसंधानकर्ता द्वारा चुना गया विषय उसके अपनी रूचि का एवं उसके व्यक्तित्व को मेल खाता हुआ होता है तो अधिक उचित होता है इसी को संदर्भित करते हुए **वाईटहेड (Whitehead)** ने स्पष्ट किया है **कि "गुण सम्बन्धी निर्णय भौतिक विज्ञानों की विषयवस्तु के अंग नहीं है किन्तु वे इसकी उत्पत्ति की प्रेरणा के अंग है, अन्वेषण के लिए वैज्ञानिक क्षेत्रों के अंशों का चेतन चुनाव किया जाता है और इस चेतन चुनाव में मूल्यों के निर्णय सम्मिलित हैं।"**

इस प्रकार से अनुसन्धान समस्या या अनुसन्धान शीर्षक के चुनाव के दौरान कुछ प्रश्नों के उत्तर खोजना अत्यंत आवश्यक हैं जैसे-

1. उक्त अनुसन्धान विषय पर क्या पूर्व में भी कोई कार्य किया गया है, यदि किया गया है तो उसका लिखित दस्तावेज उपलब्ध है क्या और क्या शोधकर्ता ने उसका अध्ययन किया है।
2. उक्त अनुसन्धान की उपयोगिता क्या होगी।
3. उक्त अनुसन्धान का शीर्षक अनुसन्धान योग्य है या नहीं।
4. क्या उक्त अनुसन्धान समाज के लिये उपयोगी होगा।
5. इस कार्य में अनुसन्धान किया गया विषय समाज विरोधी तो नहीं है। क्योंकि ऐसा है तो विरोध का सामना भी किया जा सकता है।

इस प्रकार, अनुसंधान के कुछ घटक निम्नानुसार हो सकते हैं-

1. अनुसन्धान में कौन लोग सम्मलित होंगे एवं इसका विस्तार क्षेत्र क्या होगा।
2. अनुसन्धान के उद्देश्य क्या है?
3. अनुसन्धान के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु साधन क्या उपलब्ध है।
4. वह पर्यावरण जिससे अनुसन्धान सम्बन्धित है (प्रत्यक्ष एवं अपत्यक्ष रूप से सम्मलित लोग)

8.4 अनुसंधान की प्रकृति (Nature of research)

इस प्रकार से उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए यह जांचना आवश्यक है कि अनुसन्धान की प्रकृति क्या है, अर्थात आपके द्वारा किया जाने वाला अनुसन्धान व्यावहारिक होगा विशुद्ध होगा अथवा यह क्रिया शोध पर आधारित होगा। इसमें आपकी प्राथमिकताएं क्या होंगी एवं क्या यह समस्या का स्पष्ट प्रस्तुतीकरण करने में सक्षम होगा और समस्या की खोज में मददगार साबित होगा अथवा नहीं। यहाँ यह भी ध्यान रखने योग्य है कि इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु स्पष्ट तर्कसंगत एवं सम्पूर्ण सूचना को प्रश्नावली या अनुसूची में समाहित किया जाना अत्यंत आवश्यक है। शोध समस्या के उचित प्रतिपादन हेतु क्रमबद्ध अध्ययन में क्रमश: सबसे पहले आपके द्वारा चुने गये विषय या शीर्षक में समस्या का स्पष्ट प्रत्यक्षीकरण होना आवश्यक है अर्थात समस्या का उचित रूप में और स्पष्ट ढंग से स्पष्टीकरण होना चाहिए। इसके साथ समस्या की प्रकृति समस्या क्षेत्र का परिसीमन (परिसीमन उतना ही हो जितना कार्य शोध कर्ता द्वारा सफलतापूर्वक संभाला जा सके) समस्या से सम्बन्धित मान्यताओं एवं उपकल्पनाओं का स्पष्ट एवं विस्तृत वर्णन होना चाहिए। समस्या के बाद में उससे सम्बन्धित सभी पहलुओं का स्पष्ट चित्रण किया जाना चाहिए।

जहोडा एवं अन्य (Jahoda and others) द्वारा स्पष्ट शब्दों में यह लिखा गया है **कि "प्रतिपादन प्रक्रिया के दौरान अनुसंधान कार्यरीति में बाद में आने वाले चरणों की आशा किए जाने की आवश्यकता है ताकि यह आश्वासन प्रदान किया जा सके कि समस्या का प्रतिपादन ऐसे ढंग से किया गया है। जिसके साथ कार्य उपलब्ध प्रविधियों के साथ किया जा सकता है। यह आशा वैज्ञानिक तथा प्रायोगिक चरणों से सम्बन्धित है। सर्व प्रमुख बात यह है कि वैज्ञानिक को अपने मस्तिष्क में यह बात सदैव रखनी चाहिए कि प्रदिपादन कभी भी समाप्त ना होने वाली प्रक्रिया है जो पूछताछ के सभी चरणों में व्याप्त होती है।"**

शोध समस्या के प्रतिपादन से पूर्व शोध कर्ता को कुछ प्रश्न अपने आप में स्पष्ट जरुर करना चाहिए जैसे- शोध समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है एवं इन जानकारियों के श्रोत क्या हैं। उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि क्या है। इसकी सम्पूर्ण जानकारी होना जरुरी है। धन, समय एवं प्रयासों की जानकारी के साथ स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए। उक्त तथ्यों के मार्गदर्शन के श्रोत क्या है। उपकल्पनाओं के प्रयोग हेतु अवधारणायें, चरों एवं प्रायोगिक दृष्टिकोणों की उपयुक्त एवं स्पष्ट परिभाषा प्रस्तुत की जानी चाहिए।

8.5 कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली (Operational Definition and Scientific Terminology)

कार्यकारी परिभाषा एवं वैज्ञानिक शब्दावली के प्रयोग की अनिवार्यता होनी चाहिए। अनुसन्धान की समस्या उपकल्पना के रूप में हो या अन्वेषणात्मक अथवा विवरणात्मक रूप में परन्तु उसकी वैज्ञानिक शब्दावली का वर्णन किया जाना आवश्यक है। इसके साथ ही कार्यकारी परिभाषा जो आपके कार्य को पूर्ण करने में स्पष्टता प्रदान की जायेगी का वर्णन किया जाना चाहिए। क्योंकि प्रत्येक विज्ञान अपने शब्दों एवं अवधारणाओं को विकास के परिणामों से अवगत करने हेतू ही इसका विकास करता है।

एफ डब्ल्यू वेस्टावे (F W Westaway) ने लिखा है- **"शब्द कोष की स्थूल कार्यकारी परिभाषाएं केवल शब्दों के अर्थ पर कुछ प्रकाश डालती है किन्तु जब शब्दों का वास्तविक प्रयोग बलपूर्ण कथनों में किया जाता है तो इनकी अनिश्चितता संदेह को उत्पन्न करती है।"**

8.6 अवधारणाएं (Concepts)

अवधारणा को साधारण रूप से इस प्रकार समझ सकते है कि यह समान्यता भाववाचक अभिव्यक्ति है जिसमे अवधारणाएँ प्रमुख रूप से तथ्यों द्वारा व्यक्त की जाने वाली घटनाओं का संकेतिकरण होता है। **लैबोविज तथा हेजडार्न (Labowitz and Heijdern)** के अनुसार **"एक अवधारणा ऐसा शब्द अथवा संकेत है जो अन्यथा विभिन्न प्रकार की घटनाओं में समानता का प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरणार्थ, यद्यपि मनुष्य अपने अनेक वैयक्तिक लक्षणों में भिन्न होते हैं किन्तु सभी को कुछ जैविक विशेषताओं में समानता के आधार पर स्तनधारी की श्रेणी मे वर्गीकृत किया जा सकता है।"** अवधारणायें वैज्ञानिक उपयोग के साथ मानवीय क्रिया संचार हेतु भी आवश्यक है।

8.7 परिकल्पनाएँ (Hypotheses)

परिकल्पना अथवा उपकल्प (Hypotheses) ना को दो या दो से अधिक चरों के बीच अनुमानित संबंधों के तथ्यों के स्पष्टीकरण के रूप में समझ सकते है। अनुसंधानकर्ता द्वारा जब किसी समस्या अथवा विषय का चयन किया जाता है तो वह एक कार्यकारी परिभाषा का निर्माण करता है जिसको वह एक अस्थाई आधार के रूप में प्रयोग करता है, जिसको एक आधे स्तंभ मानकर वह कार्य को आगे बढाता है। यह परिकल्पना बाद में जाँच के पश्चात स्पष्ट होती है कि यह सही थी अथवा गलत यह शोध के आरंभ में एक प्रस्तावित जाँच होती है जिसको परिक्षण के पश्चात स्पष्ट किया जाता है। इसका आधार संदर्भित विषय से संबंधिय शोधकर्ता का ज्ञान होता है जो उपकल्पना का आधार स्तंभ होता है। इस सन्दर्भ ये इसकी अर्थात परिकल्पना की जाँच किया जाना आवश्यक होता है एवं शोधकर्ता द्वरा बनायीं गई। उपकल्पना उसके द्वारा चुने गये अध्ययन के विषय से सम्संबंधित होनी चाहिय द्यपरिकल्पना तर्कपूर्ण होनी चाहिए एवं मितव्ययी होनी चाहिए परिकल्पना आपके द्वारा प्रयोग किये जा रहे सिद्धांतों एवं तथ्यों से मेल खाती होनी चाहिए तभी आपका शोध विषय के तरफ उन्मुख होगी क्योंकि उदाहरण के तौर पर यदि आप सामाजिक विज्ञान के अंतर्गत शोध कर रहे है तो निश्चित रूप से उसी से सम्बन्धित सिद्धांतों का

प्रयोग करेंगे और उसी से सम्बन्धित समस्या के हल की उर उन्मुख होगें।

अत: यह ध्यान दिया जाना चाहिए की उपकल्पना विषय से इतर नहीं निर्मित की जानी चाहिए। एक परिकल्पना को अवधारणात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए एवं यह वस्तुनिष्ट होनी चाहिए। परिकल्पनाओं के निर्माण में जैसा कि पहले ही कहा गया है की उस विषय से सम्बन्धित ज्ञान ही आधार है उसी को ध्यान में रखते हुए परिकल्पना निर्माण हेतु कुछ सहायक तथ्यों का वर्णन किया जा रहा है इसमें शोधकर्ता के व्यक्तिगत अनुभव सम्बन्धित विषय में पूर्व में किये गये शोध के परिणाम, शोध प्रपत्र, पुस्तकों, विषय विशेषज्ञ के अनुभव एवं मत इत्यादि का सहारा लिया जाता है।

8.8 चर (Variables)

चर को साधारण शब्दों में एक अवधारणा के परिमाण के पहलू के रूप में समझा जा सकता है। जो एक इकाई अथवा एक समय में एक से अधित इकाईयों के विभिन्न समयों में एक से अधिक मान ग्रहण करता हैद। पुरुष और महिला के जैविक विभिन्नता एवं भार में अंतर इत्यादि एक के गुण दोष दूसरे से भिन्न है। चर दो प्रकार के होते है स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर। आश्रित चर वह है जिसके विषय में भविष्यवाणी की जाती है वही स्वतंत्र चर वह है जो भविष्यवाणी करता है। ये परिवर्तनशील एवं सक्रिय चर कहलाते है। वे चर जिनकी परिभाषा की जा सके वे निर्धारित चर कहलाते है। एक बार प्रयोग में लाए जाने वाले चरों की परिभाषा हो जाने के पश्चात यह निर्णय लिया जाता है कि चरों को स्थिर रखते हुए या परिवर्तित करते हुए कार्य किया जाना है तो यह परिवर्तन किस सीमा तक किया जायेगा। यहाँ यह ध्यान दिया जाना आवश्यक है कि अनुसन्धान की उपकल्पना एवं शोध अध्ययन के उद्देश्य एवं उस परिस्थिति पर निर्भर करता है जिसपर समस्या का प्रतिपादन किया जाता है। उदाहरण के तौर पर यह कहा जा सकता है कि समस्या जितनी विशिष्ट एवं अपरिवर्तनशील परिस्थिति के लिये खोजी जानी है तो चरों को एक विशिष्ट मूल्य पर स्थिर रखा जायेगा और समस्या जितनी ही सामान्य होगी उतने अधिक चरों में और उतनी ही अधिक सीमा में परिवर्तन करने पडेंगे।

इस प्रकार से शोध समस्या के निर्धारण हेतु उपरोक्त स्तरों से होकर गुजरना होता है तब एक शोध समस्या का निर्माण होता है जिसपर पुनः शोध किया जाना संभव होता है। शोध प्रक्रिया के चरणों का अध्ययन करने हेतु यहाँ पर इसके चरणों का संछिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. शोध समस्या का निर्माणअथवा समस्या का कथन (Formulation of research Problem or Statement of The Problem)
2. उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Available Literature)
3. उपकल्पना अथवा परिकल्पना का निर्माण (Formulation of Hypothesis)
4. अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of The Study)
5. शोध अध्ययन की संरचना (Design of Research Study)
6. शोध अध्ययन की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र (Nature and Scope of Research Study)
7. अध्ययन का समग्र एवं निदर्श (Overall and Sample of The Study)
8. निदर्शन की विधि (Method of Sampling)
9. आंकड़ों के संग्रह की विधि (Method of Collection of Data)
10. आंकड़ों के संग्रह के प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोत (Primary and Secondary Sources of Collection of Data)
11. प्राप्त आंकडों का विशलेषण (Analysis of the data obtained)

12. परिकल्पना की जाँच (Testing of hypothesis)
13. प्रतिवेदन तैयार करना (Preparation of report)
14. सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
15. सामान्यीकरण एवं व्याख्या करना (Generalization and interpretation)

8.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. शोध समस्या के निर्माण की प्रक्रिया में सबसे पहला चरण ..... होता है। (समस्या का कथन **या** परिकल्पना निर्माण)
2. अनुसंधान में उपलब्ध साहित्य का .....आवश्यक है। (शोध अध्ययन **या** पुनरावलोकन)
3. शोध में ..... चर वे होते हैं जिनकी परिभाषा की जा सकती है। (निर्धारित **या** अनिर्धारित)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. शोध समस्या का कथन अनुसंधान प्रक्रिया का पहला चरण है।
2. सभी शोध विषयों का चयन तर्कसंगत होना अनिवार्य नहीं है।

8.10 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हमें शोध समस्या के निर्धारण की प्रक्रिया और अनुसंधान के विभिन्न चरणों के बारे में गहन जानकारी प्रदान की गई है। शोध समस्या किसी भी अनुसंधान कार्य का मूल आधार होती है, और इसे सही तरीके से पहचानना और स्पष्ट रूप से व्यक्त करना शोधकर्ता के लिए अत्यंत आवश्यक है। अध्याय की शुरुआत एक महत्वपूर्ण उद्धरण से होती है, जिसमें कहा गया है कि "समस्या का प्रतिवादन प्रायः इसके समाधान से आवश्यक है।" यह उद्धरण इस बात पर जोर देता है कि एक स्पष्ट और सुसंगत समस्या बयान करने से न केवल शोध की दिशा और उद्देश्य स्पष्ट होते हैं, बल्कि यह शोधकर्ता को सही दिशा में मार्गदर्शन भी करता है। हमें बताया गया है कि विषय का चयन करते समय तार्किकता और महत्व को ध्यान में रखना चाहिए। हम यह समझेंगे कि शोधकर्ता को सामाजिक संदर्भ को भी ध्यान में रखना आवश्यक है, ताकि वे एक ऐसा विषय चुन सकें जो उनके व्यक्तिगत हितों के अनुरूप हो, और साथ ही समाज के लिए भी महत्वपूर्ण हो।

शोध समस्या के निर्माण की प्रक्रिया में कई महत्वपूर्ण चरण होते हैं। इनमें से पहला है समस्या का कथन (Statement of the Problem), जिसमें शोधकर्ता को अपनी समस्या को स्पष्ट और संक्षेप में व्यक्त करना होता है। एक स्पष्ट समस्या कथन शोध के उद्देश्य और दिशा को स्पष्ट करता है, जिससे अनुसंधान कार्य को सही दिशा में आगे बढ़ाया जा सकता है।

इसके बाद, समस्या की प्रकृति (Nature of the Problem) का अध्ययन किया जाता है, जिसमें हमें बताया जाएगा कि समस्या के लक्षण, कारण और प्रभाव क्या हैं। यह चरण समस्या की गहराई को समझने में मदद करता है और यह सुनिश्चित करता है कि शोधकर्ता अपने अध्ययन के लिए सही तरीके से योजना बना सकें। उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Available Literature) भी एक महत्वपूर्ण चरण है, जिसमें हम मौजूदा ज्ञान का अवलोकन करते हैं। यह हमें मौजूदा शोधों की कमी को पहचानने और अपने शोध को उस संदर्भ में रखने में मदद करता है।

अध्याय में शोध विचारों के विभिन्न स्रोतों पर भी चर्चा की गई है। हमें यह सिखाया जाएगा कि शोध विचारों के लिए स्रोतों में लिखित सामग्री, व्यक्तिगत अनुभव, व्यक्तिगत बातचीत, तथ्य, मूल्य और सिद्धांत शामिल होते हैं। शोधकर्ता का व्यक्तिगत अनुभव और मान्यताएँ अनुसंधान प्रक्रिया पर गहरा प्रभाव डालती हैं, इसलिए इन्हें समझना महत्वपूर्ण है। हमें यह भी बताया जाएगा कि शोध विषय का चयन करते समय कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है, जैसे कि क्या इस विषय पर पहले से कोई काम हुआ है, क्या उसके लिखित दस्तावेज

उपलब्ध हैं, और इस शोध की उपयोगिता क्या होगी।

इसके अलावा, हमें यह जानने की आवश्यकता होगी कि अध्ययन का दायरा और उद्देश्य क्या होंगे। अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of the Study) को स्पष्ट करना एक आवश्यक कदम है, क्योंकि यह शोध की दिशा और लक्ष्यों को निर्धारित करता है। अनुसंधान के घटकों के बारे में भी जानकारी दी गई है, जिसमें प्रतिभागी, अध्ययन के उद्देश्य, उपलब्ध साधन, और पर्यावरण शामिल हैं। हमें यह समझने में मदद मिलेगी कि अनुसंधान में कौन लोग शामिल होंगे और इसका दायरा क्या होगा।

इस अध्याय में अनुसंधान की विभिन्न प्रकारों पर चर्चा की गई है, जैसे व्यावहारिक, सैद्धांतिक, और अन्वेषणात्मक अनुसंधान। हमें यह समझने में मदद मिलेगी कि किस प्रकार का अनुसंधान हमारे अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार सबसे उपयुक्त होगा। कार्यकारी परिभाषाओं और वैज्ञानिक शब्दावली के उपयोग की आवश्यकता पर भी जोर दिया गया है, जिससे शोध में स्पष्टता और सटीकता बनी रहे।

अवधारणाओं (Concepts) और परिकल्पनाओं (Hypotheses) की व्याख्या के साथ-साथ, चरों (Variables) की अवधारणा पर भी चर्चा की गई है। हमें स्वतंत्र और आश्रित चरों के बीच का अंतर समझाया जाएगा, जिससे हम यह जान सकें कि चरों का चयन और परिभाषा कैसे की जाती है। चरों के प्रयोग से संबंधित ज्ञान शोध के परिणामों को प्रभावित करता है, और इसलिए, यह जानना आवश्यक है कि चरों को स्थिर रखा जाए या परिवर्तित किया जाए।

अध्याय का एक महत्वपूर्ण भाग अनुसंधान प्रक्रिया के चरणों पर केंद्रित है। इसमें शोध समस्या का निर्माण, उपलब्ध साहित्य का पुनरावलोकन, परिकल्पना का निर्माण, अध्ययन के उद्देश्य, शोध अध्ययन की संरचना, और अनुसंधान की प्रकृति एवं विषय क्षेत्र शामिल हैं। हमें यह सिखाया जाएगा कि कैसे एक सफल अनुसंधान परियोजना तैयार की जाती है। यह हमें डेटा संग्रहण की विधियों, आंकड़ों के विश्लेषण, परिकल्पनाओं की जांच, और प्रतिवेदन तैयार करने के तरीकों को समझने में मदद करेगा।

8.11 शब्दावली (Glossary)

- **शोध (Research):** शोध नए ज्ञान की खोज करने या मौजूदा ज्ञान का नए तरीके से उपयोग करके नई अवधारणाएँ, पद्धतियाँ और समझ बनाने की प्रक्रिया है। इसमें डेटा एकत्र करना, जानकारी का दस्तावेजीकरण करना और उस डेटा का विश्लेषण और व्याख्या करना शामिल है।
- **अवधारणा (Concept):** शोध में अवधारणाएँ अमूर्त विचार या घटनाएँ होती हैं जो अध्ययन का केंद्र होती हैं। वे अनुभवों पर आधारित होती हैं और वास्तविक घटनाओं पर आधारित हो सकती हैं। शोध विकसित करने और सिद्धांत बनाने के लिए अवधारणाएँ आवश्यक हैं।
- **उपकल्पना (Hypothesis):** कार्यकरण संबंधों का पूर्वानुमान।
- **चर (Variables):** चर एक विशेषता, संख्या या मात्रा है जिसे मापा या गिना जा सकता है, और जिसका मूल्य समय के साथ या डेटा इकाइयों के बीच बदल सकता है। उदाहरण के लिए, आय एक चर है क्योंकि यह प्रत्येक डेटा इकाई के लिए समय के साथ बदल सकती है, और यह जनसंख्या में डेटा इकाइयों के बीच भिन्न हो सकती है।
- **स्वतंत्र चर (Independent Variable):** स्वतंत्र चर बिल्कुल वैसा ही है जैसा कि यह लगता है। यह एक ऐसा चर है जो अकेला खड़ा होता है और आपके द्वारा मापे जाने वाले अन्य चरों द्वारा नहीं बदला जाता है। उदाहरण के लिए, किसी की आयु एक स्वतंत्र चर हो सकती है।
- **आश्रित चर (Dependent Variable):** आश्रित चर अन्य चरों पर निर्भर करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति अस्थमा पर प्रदूषण के प्रभावों का अध्ययन कर रहा है, तो अस्थमा की घटना आश्रित चर होगी।

8.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1.समस्या का कथन 2.पुनरावलोकन 3.निर्धारित

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1.सत्य 2. असत्य

8.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Goode and Hatt 1952 Methods of Social Research McGraw Hill Company New York.
2. Sartakosh S - Social Research, Macmillan London – 1998.
3. Young, P.V. - Scientific Social Survey and Research Indian Reprinter, Fourth Printing Prentice Hall of India. Private Limited New Delhi 1977.
4. Singh, Surendra - Social Research, Uttar Pradesh Hindi Granth Academy Lucknow.

8.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

1. Kothari K.R. – Research Methodology, Methods and Techniques 2004.
2. B. Sickner, The Operational Analysis of Psychological Terms.

8.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शोध समस्या के निर्धारण के आयामों का वर्णन कीजिए।
2. सामाजिक शोध के चरणों का वर्णन कीजिये।
3. अनुसन्धान से आप क्या समझते हैं अनुसन्धान में शोध समस्या की उपयोगिता पर विस्तार से चर्चा किजिये।

इकाई-9 परिकल्पना : अर्थ आवश्यकता और स्रोत
(Hypothesis: Meaning, necessity and source)

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

9.2 उद्देश्य (Objectives)

9.3 उपकल्पना का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Hypothesis)

9.4 उपकल्पना की विशेषताएँ (Characteristics of Hypothesis)

9.5 उपकल्पना के प्रकार (Types of Hypotheses)

9.6 उपकल्पना निर्माण के स्त्रोत (Sources of Hypothesis Formulation)

9.7 उपकल्पना का महत्व (Importance of Hypothesis)

9.8 उपकल्पना की सीमाएँ (Limitations of Hypothesis)

9.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

9.10 सारांश (Summary)

9.11 शब्दावली (Glossary)

9.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

9.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

9.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

9.15 निबन्धात्मक प्रश्न(Essay Type Questions)

9. 1 प्रस्तावना (Introduction)

उपकल्पना को अनेक बार प्राक्कल्पना, परिकल्पना, पूर्व कल्पना, आदि नामों से भी सम्बोधित किया जाता है। "किसी भी सामाजिक प्रघटना के वैज्ञानिक अध्ययन में अनुसंधानकर्ता वस्तुतः एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता, जब तक कि वह अपना अनुसंधान कार्य उपकल्पना से प्रारम्भ न करे।" उपकल्पना के अभाव में अनुसंधान की ना तो दिशा निर्धारित होती है एवं ना ही विषय-क्षेत्र का ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होता है।

अतः अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है। कि वह आँकड़ों के संकलन, अवलोकन के लिए अपनी कल्पना, अनुभव या अन्य किसी स्त्रोत के आधार पर एक कार्यकारी तर्क-वाक्य का निर्माण करे एवं बाद में, अनुसंधान के दौरान, इस तर्क वाक्य की परीक्षा करे। यही तर्क वाक्य, सामान्यतः उपकल्पना कहलाता है।

9.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन का मुख्य उददेश्य उपकल्पना के अर्थ, उपकल्पना की विशेषताओं एवं प्रकारों, सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना का क्या महत्व है तथा इसकी क्या सीमाएँ हैं इनके बारे में ज्ञान अर्जित करना है।

9.3 उपकल्पना का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Hypothesis)

किसी भी अनुसंधान और सर्वेक्षण के समस्या के चुनाव के बाद अनुसंधानकर्ता समस्या के बारे में कार्य-कारण सम्बन्धों का पूर्वानुमान लगा लेता है। या पूर्व चिन्तन कर लेता है। यह पूर्व चिन्तन या पूर्वानुमान ही प्राक्कल्पना, परिकल्पना या 'उपकल्पना' कहलाती **जॉर्ज लुण्डबर्ग (George Lundberg)** ने अपनी पुस्तक (Social Research) में उपकल्पना को परिभाषित करते हुए लिखा है। कि **"उपकल्पना एक सामयिक तथा काम चलाऊ सामान्यीकरण अथवा निष्कर्ष है। जिसकी सत्यता की परीक्षा करना शेष है। अपने बिल्कुल प्रारम्भिक चरणों में उपकल्पना कोई मनगढ़न्त अनुमान, कल्पनापूर्ण विचार अथवा सहजज्ञान, इत्यादि कुछ भी हो सकता है।, जो क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाता है।"**

एफ.एन. कर्लिंगर (F.N. Kerlinger) का कहना है **"एक उपकल्पना दो या दो से अधिक परिवर्त्यों के बीच सम्बन्ध प्रदर्शित करने वाला एक अनुमानात्मक कथन है।"**

पी.वी. यंग (P.V. Young) के अनुसार, **"एक कार्य वाहक उपकल्पना एक कार्य वाहक केन्द्रीय विचार है। जो उपयोगी अध्ययन का आधार बन जाता है।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह सुगमतापूर्वक विश्लेषित किया जा सकता है। कि उपकल्पना एक ऐसा कार्यकारी तर्क-वाक्य, कल्पनात्मक धारणा या पूर्वानुमान होता है। जिसे अनुसंधानकर्ता अनुसंधान की प्रकृति के आधार पर पहले से निर्मित कर लेता है। एवं अनुसंधान के दौरान उसकी वैधता की परीक्षा करता है। यह उपकल्पना सत्य एवं असत्य दोनों हो सकती है। यदि अनुसंधान में संकलित एवं विश्लेषित किए गए तथ्यों के आधार पर उपकल्पना प्रमाणित हो जाती है। एवं इसी प्रकार की उपकल्पनाएँ अनेक बार, अनेक स्थानों पर अर्थात् समय व काल से परे प्रमाणित होती जाती हैं तो वे धीरे-धीरे एक सिद्धान्त के रूप में प्रतिस्थापित हो जाती हैं।

9.4 उपकल्पना की विशेषताएँ (Characteristics of Hypothesis)

गुडे एवं हॉट (Goode and Hatt) ने सामाजिक अनुसंधान में उपयोगी उपकल्पना की विशेषताओं की विवेचना की है। जो निम्नलिखित है।-

स्पष्टत: उपकल्पनाओं का अवधारणात्मक रूप में स्पष्ट होना परमावश्यक है।उपकल्पना की स्पष्टता में, **गुडे तथा हॉट (Goode and Hatt)** के अनुसार, दो बातें सम्मिलित है। **पहली** यह कि उपकल्पना में निहित अवधारणाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाए ओर **दूसरी** यह कि परिभाषाऐं ऐसी स्पष्ट भाषा में लिखी जाएँ कि अन्य लोग भी सामान्यतः उसका सही अर्थ समझ सकें।

अनुभवाश्रित सन्दर्भ (Empirical Context)- इस विशेषता का तात्पर्य यह है। कि वही उपकल्पना वैज्ञानिक

अनुसंधान में प्रयुक्त की जा सकती है। जिसमें कि आदर्शात्मक निर्णय का पुट नहीं है। इसका अर्थ यह है कि वैज्ञानिक को अपनी उपकल्पना में किसी आदर्श को प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। अपितु उसका सम्बन्ध ऐसे विचार या ऐसी अवधारणा से होना चाहिए जिसकी सत्यता की परीक्षा वास्तविक प्रयोग अथवा वास्तविक तथ्यों के आधार पर की जा सके।

विशिष्टता (Specificity)- उपकल्पना अगर अत्यन्त सामान्य है। तो उससे यथार्थ निष्कर्ष तक पहुँचना संभव नहीं होता है। क्योंकि किसी विषय के सभी पक्षों का वैज्ञानिक अध्ययन हम एक ही समय पर नहीं कर सकते, अतः यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि उपकल्पना अध्ययन-विषय के किसी विशेष पहलू से सम्बद्ध होय अगर उसमें विशिष्टता का गुण नहीं हुआ तो उसकी सत्यता की जाँच करना भी कठिन हो जाता है और जो उपकल्पना जाँच से परे है। वह वैज्ञानिक के लिए निरर्थक भी है।

उपलब्ध प्रविधियों से सम्बद्ध (Related to Available Techniques)- उपकल्पना का निर्माण इस बात को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए कि उसकी सत्यता की जाँच उपलब्ध प्रविधियों द्वारा संभव हो। इसका तात्पर्य यह है। कि उपकल्पना इस प्रकार की हो कि वह अनुसंधान का एक सामयिक आधार भी बन सकती है। या नहीं, इसकी परीक्षा उपलब्ध प्रविधियों द्वारा की जा सके।

सिद्धान्त समूह से सम्बद्ध (Belong to The Theory Group)- उपकल्पना अध्ययन विषय से सम्बद्ध किसी पूर्वस्थापित सिद्धान्त के क्रम में हो क्योंकि असम्बद्ध उपकल्पनाओं की परीक्षा विस्तृत सिद्धान्तों के सन्दर्भ में ही की जा सकती है।

9.5 उपकल्पना के प्रकार (Types of Hypotheses)

एक अनुसंधानकर्ता के लिए इस बात की जानकारी भी आवश्यक है। कि सामाजिक विज्ञानों में किन-किन प्रकारों की उपकल्पनाओं का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक यथार्थ की जटिल एवं अमूर्त प्रकृति के कारण उपकल्पनाओं का कोई एक सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्तुत करना संभव नहीं है। अतः अनेक विद्वानों ने अपने-अपने मतानुसार उपकल्पनाओं को वर्गीकृत किया है।

मैक गुइगन (Mc Guigan) के अनुसार उपकल्पनाएँ हैं -

1. **सार्वभौमिक (Universal)-** इस वर्ग में वे उपकल्पनाऐं सम्मिलित की जाती है। जिनका अध्ययन किया जाने वाला सम्बन्ध सभी चरों से सभी समय तथा सभी स्थानों पर रहता है।
2. **अस्तित्वात्मक (Existential)-** ऐसी उपकल्पना जो कम से कम एक मामलें में चरों के अस्तित्व को उचित घोषित कर सके।

हेज (Hedge) ने दो प्रकार की उपकल्पनाएँ बताई है।-

1. **सरल उपकल्पना (Simple Hypothesis)-** इसमें किन्हीं दो चरों में सहसम्बन्ध ज्ञात करते हैं।
2. **जटिल उपकल्पना** (**Complex Hypothesis**)- इसमें एक से अधिक चर होते हैं तथा उनमें सहसम्बन्ध ज्ञात करने के लिये उच्च सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग करते हैं।

वैज्ञानिक अनुसंधान में उपकल्पना को सिद्ध करना वैज्ञानिक का मुख्य कार्य है। वैज्ञानिक अस्तित्वात्मक उपकल्पना द्वारा अपनी अनुसंधानिक उपकल्पना को सिद्ध करने में अधिक सफल रह सकता है। तथा वह किसी घटना के अस्तित्व को स्थापित करता है।तत्पश्चात् वह अध्ययन की जाने वाली घटना का सामान्यीकरण करना चाहता है। किसी विशिष्ट घटना का अस्तित्वात्मक उपकल्पना द्वारा अध्ययन अथवा निरीक्षण करना कठिन कार्य है। इसी कारण अति विशिष्ट उपकल्पना से सार्वभौमिक उपकल्पना बनाने में यह कठिनाई अनुभव करता है। वैज्ञानिक का मुख्य कार्य यह स्थापित करना होता है। कि किन विशेष दशाओं में कोई घटना उत्पन्न होती है। जिससे वह आवश्यक दशाओं को पाकर सार्वभौमिक उपकल्पनाओं का निर्माण कर सके। अनुसंधानों में सार्वभौमिक कथनों की भी आवश्यकता होती है। सार्वभौमिक कथनों में पुर्वानुमान मूल्य अधिक होता है। अतएव इस प्रकार के कथन अनुसंधान में अधिक महत्वपूर्ण है।

(क) सकारात्मक कथन (Positive Statement)- इसमें उपकल्पना का कथन सकारात्मक रूप में करते हैं। जैसे वर्ग 'अ' की बुद्धिलब्धि वर्ग 'ब' से अधिक है।

(ख) नकारात्मक कथन (Negative Statement)- इस प्रकार की उपकल्पना में कथन नकारात्मक होता है। जैसे वर्ग 'अ' की बुद्धिलब्धि वर्ग 'ब' से अधिक नहीं है।

इन दोनों प्रकार की उपकल्पनाओं को निर्देशित उपकल्पना कहते हैं। इनमें एक दोष यह होता है। कि जब अनुसंधानकर्ता एक कथन सकारात्मक अथवा नकारात्मक रूप में कर देता है। तो उसमें उनके स्वनिहित हो जाने की संभावना रहती है।

शून्य उपकल्पना (Null Hypothesis)- इसमें यह मानकर चलते हैं। कि दो चर जिनमें सम्बन्ध ज्ञात करने जा रहे हैं। उनमें कोई अन्तर नहीं है। नल (Null) जर्मन भाषा का शब्द है। जिसका अर्थ होता है। "शून्य"। अतः इस उपकल्पना को शून्य उपकल्पना भी कहते हैं उदाहरणार्थ वर्ग 'अ' और वर्ग 'ब' की बुद्धिलब्धि में कोई अंतर नहीं है। शून्य उपकल्पना को नकारात्मक उपकल्पना इस अर्थ में मानते हैं कि इसमें यह मानकर चलते हैं कि दो चरों में कोई सम्बन्ध नहीं है। अथवा दो समूहों में किसी विशेष चर के आधार का कोई अन्तर नहीं है।

गुडे एवं हॉट ने "Methods in Social Research" में उपकल्पनाओं के तीन प्रकारों का उल्लेख किया है।

1. **आनुभविक एकरूपताओं सम्बन्धी (Related to Empirical Uniformities):** समाज और संस्कृति में अनेक कहावतें, मुहावरें, लोकोक्तियाँ होती हैं जिनको उससे सम्बन्धित सभी लोग जानते हैं तथा सत्य मानते हैं। सामाजिक अनुसंधानकर्ता उन्हीं को उपकल्पना बनाकर अवलोकनों, आनुभविक तथ्यों तथा आँकड़ों को एकत्र करके उनकी जाँच करते हैं और निष्कर्ष के रूप में उन्हें प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार की उपकल्पनाएँ सामान्य ज्ञान पर आधारित कथनों का आनुभविक तथ्यों द्वारा परीक्षण करती हैं।
2. आदर्श प्रारूपों सम्बन्धी (Related to Complex Ideal Types) : कुछ उपकल्पनाएँ जटिल आदर्श प्रारूपों से सम्बन्धित होती है। इन उपकल्पनाओं का उद्देश्य आनुभविक समरूपताओं के बीच तार्किक आधार पर निकाले गये सम्बन्धों का परीक्षण करना है। इन उपकल्पनाओं का उद्देश्य तथा कार्य उपकरणों तथा समस्याओं का निर्माण करना है। इसमें आगे जटिल क्षेत्रों में अनुसंधान करने के लिए सहायता मिलती है। आदर्श प्रारूप से सम्बन्धित उपकल्पनाओं की जाँच, तथ्य एकत्र करके की जाती है और तत्पश्चात् निष्कर्ष निकाले जाते हैं।
3. **विश्लेषणात्मक चरों सम्बन्धी (Related to Analytical Variables)-** यह उपकल्पना चरों के तार्किक विश्लेषण के अतिरिक्त विभिन्न चरों में परस्पर क्या गुण सम्बन्ध हैं। उसका भी विशेष रूप से विश्लेषण करती है। विभिन्न चर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। इन प्रभावों का तार्किक आधार ढूढना इन उपकल्पनाओं का उद्देश्य है। विश्लेषणात्मक चरों से सम्बन्धित उपकल्पनाएँ अमूर्त प्रकृति की होती हैं। प्रयोगात्मक अनुसंधान में इन उपकल्पनाओं का विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है।

9.6 उपकल्पना निर्माण के स्त्रोत (Sources of Hypothesis Formulation)

सामान्यतः, सामाजिक विज्ञानों में उपकल्पनाओं के दो प्रमुख स्त्रोतों का उल्लेख किया गया है-

वैयक्तिक या निजी स्त्रोत (Personal or Private Source)- इसमें अनुसंधानकर्ता की अपनी स्वयं की अन्तर्दृष्टि, सूझ-बूझ, विचार, अनुभव कुछ भी हो सकता है। वह सामान्यतया अपनी प्रतिभा तथा अनुभवों के आधार पर उपकल्पना का निर्माण कर सकता है।

बाह्य स्त्रोत (External Sources)- इसमें कोई भी साहित्य, कल्पना, कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास आदि कुछ भी हो सकता है। जो कि उपकल्पना का स्त्रोत होता है।

गुडे एवं हॉट (Goode and Hatt) ने Methods in Social Research में उपकल्पना के चार स्त्रोतों का उल्लेख किया है।-

सामान्य संस्कृति (General culture)- व्यक्तियों की गतिविधियों को समझने का सबसे अच्छा तरीका उनकी

संस्कृति को समझना है। व्यक्तियों का व्यवहार एवं उनका सामान्य चिन्तन, एक सीमा तक उनकी अपनी संस्कृति के अनुरूप ही होता है। अतः अधिकांश उपकल्पनाओं का मूल स्त्रोत वह सामान्य संस्कृति होती है। जिसमें विशिष्ट विज्ञान का विकास होता है। सामान्य संस्कृति को तीन प्रमुख भागों में बाँटकर समझा जा सकता है-

पहला सांस्कृतिक पृष्ठभूमि **दूसरा** सांस्कृतिक चिन्ह तथा **तीसरी** सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन। सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का तात्पर्य है। कि जिस सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में हम रहते हैं उस संस्कृति की जो विशेषताएँ है। वह उपकल्पना का स्त्रोत बन सकती है। जैसे भारत व ब्रिटेन की पृथक-पृथक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि।

सांस्कृतिक चिन्ह के अन्तर्गत लोक विश्वास, लोक कथाएँ उपकल्पना का स्त्रोत हो सकती हैं।

सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण परिवर्तित सांस्कृतिक मूल्य भी उपकल्पना के स्त्रोत बन सकते हैं।

वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Theory)- वैज्ञानिक सिद्धान्त जो समय-समय पर वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं।उपकल्पना के स्त्रोत हो सकते हैं। प्रत्येक विज्ञान में अनेकों सिद्धान्त होते हैं। इन सिद्धान्तों से हमें एक विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार इन सिद्धान्तों के अन्तर्गत सम्मिलित पक्षों के सम्बन्ध में प्राप्त ज्ञान भी उपकल्पनाओं का स्त्रोत माना जा सकता है।

सादृश्यताएँ (Analogies)- जब कभी दो क्षेत्रों में कुछ समानताएँ या समरूपताएँ दिखाई देती हैं तो, सामान्यतया, इस आधार पर भी उपकल्पनाओं का निर्माण कर लिया जाता है अर्थात, ऐसी समरूपताएँ भी उपकल्पना के लिये स्त्रोत बन जाती हैं। कभी-कभी दो तथ्यों के मध्य समानता के कारण नई उपकल्पना का जन्म होता है और इनकी प्रेरणा का कारण सादृश्ताएँ होती हैं।

व्यक्तिगत अनुभव (Personal Experience)- व्यक्तिगत अनुभव भी उपकल्पना का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। न्यूटन ने पेड़ से गिरने वाले सेव को देखकर गुरूत्वाकर्षण के महान सिद्धान्त की रचना की। इसी प्रकार, डार्विन को जीवन संघर्ष एवं उपयुक्त व्यक्ति की जीवन क्षमता का सिद्धान्त स्थापित करने में अपने व्यक्तिगत अनुभवों पर ही उपकल्पनाओं का निर्माण करना पड़ा था।

9.7 उपकल्पना का महत्व (Importance of Hypothesis)

अनुसंधान में उपकल्पना के महत्व को अनेक प्रकार से दर्शाया गया है। विद्वान इसकी तुलना ध्रुवतारे एवं कुतुबनुमा से करते हैं।तो कुछ विद्वान समुद्र में जहाजों को रास्ता दिखलाने वाले प्रकाश स्तम्भ से जो वैज्ञानिकों को भटकने से बचाते हैं। इसी के द्वारा अनुसंधानकर्ता सत्य और असत्य की पुष्टि करता है। एवं विषय से सम्बन्धित वास्तविकता का पता लगाता है। उपकल्पना के महत्व की विवेचना हम इस प्रकार कर सकते हैं-

अध्ययन के उद्देश्य का निर्धारण (Determining The Purpose of The Study)- उपकल्पना हमारे अध्ययन के उद्देश्य को निर्धारित करती है। उपकल्पनाएँ हमें यह बताती है। कि हमें किन तथ्यों का संकलन करना है। और किनका नहीं, कौन से तथ्य हमारे उद्देश्य के अनुरूप और सार्थक है। तथा कौन से निरर्थक।

अध्ययन को उचित दिशा प्रदान करना (Provide proper direction to studies)- उपकल्पनाएँ अनुसंधानकर्ता का ध्यान अध्ययन-विषय के एक विशिष्ट पहलू पर केन्द्रित कर देती है। और अनुसंधानकर्ता उसी के अनुसार एक निश्चित दिशा की ओर बढ़ता चला जाता है। उपकल्पना के आधार पर अनुसंधानकर्ता यह जानता है। कि उसे क्या करना है। और क्या नहीं करना है। वास्तव में ठीक-ठीक उपकल्पना का निर्माण कर लेने से न केवल अध्ययन क्षेत्र का ही अपितु लक्ष्य का भी, स्पष्टीकरण हो जाता है। और अनुसंधानकर्ता का प्रत्येक प्रयास उद्देश्यपूर्ण हो जाता है।

अध्ययन क्षेत्र को सीमित करना (Limiting The Study Area)- तथ्यों की दुनियां बहुत बड़ी है। और किसी भी अनुसंधानकर्ता के लिये यह संभव नहीं है। कि वह एक विषय से सम्बद्ध सभी पहलुओं का एक ही समय पर अध्ययन करे, अगर ऐसा किया गया तो अध्ययन विषय के सम्बन्ध में कोई भी विशिष्ट व यथार्थ ज्ञान हमें प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में उपकल्पना अध्ययन क्षेत्र को सीमित कर अध्ययन विषय के एक विशिष्ट पहलू पर अनुसंधानकर्ता का ध्यान आकर्षित करती रहती है।

तथ्यों के संकलन में सहायक (Assisting in gathering facts)- उपकल्पना अनुसंधानकर्ता को समस्या से सम्बन्धित उपयुक्त तथ्यों को संकलित करने को प्रेरित करती है। प्रारम्भ में ऐसा भी हो सकता है। कि वैचारिक

अस्पष्टता के कारण हम सभी तथ्यों को एकत्रित कर लेते हैं किन्तु बाद में उनमें से हमें कुछ विशिष्ट तथ्यों का ही चुनाव करना पड़ता है। इस कार्य में उपकल्पना सहायक होती है।

निष्कर्ष निकालने में सहायक (Helpful in Drawing Conclusions)- जो भी वैज्ञानिक अध्ययन उपकल्पना के निर्माण में प्रारम्भ होता है। उसमें अध्ययन के अन्त में निष्कर्ष निकालने में उपकल्पना बहुत अधिक सहायक सिद्ध होती है। क्योंकि तथ्यों का संकलन, वर्गीकरण और सारणीयन उपकल्पना को ध्यान में रखकर किया जाता है। इसके बाद जब निष्कर्ष निकाले जाते हैं तो उसमें यह देखा जाता है। कि उपकल्पना सत्य है। अथवा असत्य। उपकल्पना में जिन तथ्यों का परस्पर गुण सम्बन्ध दिया होता है। उन्हीं की सत्यता की जॉच करके अध्ययनकर्ता निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करता है।

सिद्धान्त निर्माण में सहायक (Aids in Theory Building)- उपकल्पना तथ्यों व सिद्धान्तों के बीच की कड़ी है। क्योंकि जब उपकल्पना सत्य सिद्ध हो जाती है तथा स्थापित हो जाती है तो वह एक सिद्धान्त का भाग बन जाती है।

9.8 उपकल्पना की सीमाएँ (Limitations of Hypothesis)

उपकल्पनाएँ सामाजिक अनुसंधान में मार्ग दर्शन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। फिर भी यदि इसका प्रयोग सावधानी से नहीं किया गया तो यह अध्ययन के लिए खतरा भी पैदा कर सकती है। इसकी सीमाएँ निम्नलिखित है।-

अनुसंधान की असावधानियाँ (Research Absurdities)- अनुसंधानकर्ता उपकल्पना के निर्माण के समय स्वयं की भावनाओं, पूर्वाग्रहों तथा इच्छाओं पर नियन्त्रण नहीं कर पाता है। इस असावधानी के कारण उपकल्पना में पक्षपात आ जाता है। जिसके फलस्वरूप दोषपूर्ण परिणाम निकलते हैं।

मार्गदर्शक मानना (To Follow a Guide)- अध्ययनकर्ता उपकल्पना को अंतिम मार्गदर्शक मान बैठता है। और जैसी उपकल्पना होती है। उसी को ध्यान में रखकर तथ्यों को एकत्र करता है। अध्ययन क्षेत्र में स्वयं के विवेक को बिल्कुल काम में नहीं लेता है। इससे अध्ययन वैज्ञानिक नहीं रह पाता है।

अध्ययन में पक्षपात (Bias in the study)- कई बार अनुसंधानकर्ता अपनी किसी विशिष्ट रूचि और संवेग के कारण एक विशेष अध्ययन-विषय का चुनाव करता है और उसके प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाता है। तब उसके द्वारा किया जाने वाला अध्ययन अवैज्ञानिक हो जाता है।

उपकल्पना आधारित तथ्य (Hypothesis Based Facts)- प्रारम्भ में अध्ययकर्ता उपकल्पना के आधार पर ही तथ्यों का संकलन करता है। उसे चाहिये कि वह वास्तविक तथ्यों के आधार पर अपनी उपकल्पना में संशोधन एवं परिवर्तन कर लेय ऐसा न करने पर संकलित तथ्य असंगत एवं व्यर्थ सिद्ध होते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है। कि उपकल्पना अपने आप में अनुसंधान में महत्वपूर्ण कार्य करती है।य लेकिन थोड़ी सी असावधानी से वह हानिकारक सिद्ध हो सकती है। यंग का कहना है कि अध्ययनकर्ता को तथ्यों को सिद्ध करने की ओर ध्यान नहीं देना चाहियेय उसे तो परिस्थिती को सीखनें तथा समझने की ओर ध्यान रखना चाहिए अतः, उसे उपकल्पना के प्रति तटस्थ रहना चाहिए।

9.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. उपकल्पना का निर्माण..... द्वारा किया जाता है? (अनुसंधानकर्ता की स्वयं की विचारधारा और अनुभव **या** केवल सांस्कृतिक चिन्हों के आधार पर)
2. .....में यह माना जाता है कि दो चरों में कोई संबंध नहीं है?(शून्य उपकल्पना **या** सरल उपकल्पना
3. उपकल्पना का उद्देश्य किसी घटना या स्थिति के बारे में ..... प्रदान करना होता है। (पूर्वानुमान **या** परिणाम)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. उपकल्पना केवल आदर्श रूप से सिद्ध की जा सकती है, वास्तविक तथ्यों के आधार पर नहीं।
2. उपकल्पना के सिद्ध होने पर वह एक सिद्धांत का भाग बन सकती है। उत्तर: True

9.10 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हमने उपकल्पना (Hypothesis) के बारे में विस्तार से जाना, जो सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। उपकल्पना एक अस्थायी अनुमान होती है, जिसे अनुसंधानकर्ता अध्ययन से पहले करता है। यह अनुमान या विचार अनुसंधान को दिशा प्रदान करता है और अध्ययन के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। उपकल्पना का परीक्षण करना अनुसंधान के दौरान यह निर्धारित करने का एक तरीका है कि वह सही है या गलत। यदि यह बार-बार परीक्षण में सही सिद्ध होती है, तो यह एक सिद्धांत का रूप ले सकती है।

अध्याय में उपकल्पना की परिभाषा पर चर्चा की गई है। **जॉर्ज लंडबर्ग (Georg Lundberg)** के अनुसार, उपकल्पना एक प्रारंभिक सामान्यीकरण होती है, जिसे सत्यापित किया जाना **चाहिए। एफ.एन. कर्लिंगर (F.N. Kerlinger)** इसे दो या दो से अधिक चरों के बीच संबंध को प्रदर्शित करने वाला अनुमानात्मक कथन मानते हैं। **पी.वी. यंग (P.V. Young)** इसे अनुसंधान का आधार मानते हैं, जो अध्ययन की दिशा को निर्धारित करता है। उपकल्पना सत्य या असत्य हो सकती है, और यदि यह अनेक परीक्षणों में सही साबित होती है, तो यह धीरे-धीरे सिद्धांत का रूप ले सकती है।

अच्छी उपकल्पना की विशेषताएँ भी महत्वपूर्ण हैं। इसे स्पष्ट, अनुभव पर आधारित और विशिष्ट होना चाहिए, ताकि इसके परीक्षण की प्रक्रिया सरल हो सके। उपकल्पना को उपलब्ध अनुसंधान विधियों के अनुसार तैयार किया जाना चाहिए ताकि उसे सत्यापित किया जा सके। इसके अलावा, उपकल्पना को किसी स्थापित सिद्धांत से संबंधित होना चाहिए, ताकि इसे व्यापक संदर्भ में परखा जा सके।

अध्याय में उपकल्पना के प्रकार भी बताए गए हैं। **मैकगुइगन (McGuigan)** के अनुसार उपकल्पनाएँ सार्वभौमिक होती हैं, जो सभी समय और स्थान पर लागू होती हैं, और अस्तित्वात्मक होती हैं, जो किसी विशेष मामले में चरों के अस्तित्व को प्रमाणित करती हैं।

हेज (Hedge) के अनुसार उपकल्पनाएँ सरल होती हैं, जो दो चरों के बीच संबंध बताती हैं, और जटिल होती हैं, जिनमें एक से अधिक चर होते हैं। इसके अलावा, सकारात्मक और नकारात्मक उपकल्पनाएँ भी होती हैं, जो क्रमशः यह मानती हैं कि दो चरों में संबंध है या नहीं है। शून्य उपकल्पना वह होती है, जिसमें यह मानकर चलता है कि दो चरों में कोई संबंध नहीं है।

उपकल्पना के निर्माण के स्त्रोत भी महत्वपूर्ण हैं। यह व्यक्तिगत अनुभव, सामान्य संस्कृति, वैज्ञानिक सिद्धांत या सादृश्यताओं से उत्पन्न हो सकती है। उदाहरण स्वरूप, न्यूटन ने अपनी उपकल्पना गुरुत्वाकर्षण के बारे में अपने व्यक्तिगत अनुभव से बनाई। इसी प्रकार, सांस्कृतिक मान्यताएँ और वैज्ञानिक सिद्धांत भी उपकल्पना के स्त्रोत हो सकते हैं।

अंत में, उपकल्पना का महत्व भी समझाया गया है। उपकल्पना अध्ययन के उद्देश्य को निर्धारित करती है, अनुसंधान को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है, अध्ययन क्षेत्र को सीमित करती है, और तथ्यों के संकलन में सहायता करती है। यह अंततः अनुसंधानकर्ता को निष्कर्ष निकालने में मदद करती है और जब उपकल्पना सत्य सिद्ध हो जाती है, तो वह सिद्धांत निर्माण में सहायक बनती है।

9. 11 शब्दावली (Glossary)

- **उपकल्पना (Hypothesis):** किसी भी समस्या के बारे में कार्य-कारण संबंधों का पूर्वानुमान लगा लेना ही उपकल्पना कहलाती है।

- **चर (Variables):** यह एक संकेत है। जिससे अनेकों अंश (Numeral) अथवा मान (Value) निर्धारित किए जा सकते हैं।
- **सांस्कृतिक चिन्ह (Cultural Symbols):** किसी समाज या संस्कृति के लोक-ज्ञान के विभिन्न अंग जैसे लोककथाएँ सांस्कृतिक चिन्ह कहे जाते हैं।
- **शून्य उपकल्पना (Null Hypothesis):** जब कभी दो चरों के मध्य कोई अंतर नहीं होता तो उसे शून्य उपकल्पना कहते हैं।
- **सादृश्यताएँ (Analogies):** जब कभी दो वस्तुओं में समानता होती है तथा एक वस्तु पर पड़ने वाले प्रभाव के आधार पर दूसरी वस्तु पर भी उसी प्रभाव को जानने की कोशिश की जाती है। तब उसे सादृश्यताएँ कहते हैं। यही सादृश्यताएँ उपकल्पना का स्त्रोत बन जाती हैं।

9.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. अनुसंधानकर्ता की स्वयं की विचारधारा 2. शून्य उपकल्पना 3.पूर्वानुमान

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. असत्य 2. सत्य

9.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. ए. कॉफ, आर.. एल.: द् डिजाइन ऑफ सोशल रिसर्च: शिकागो, 1953. ऽ कोहन, एम. एण्ड नैगेल: एन इन्ट्रोडक्शन टू लॉजिक एण्ड साइन्टिफिक मैथड्स, न्यूयार्क, 1934.
2. गुडे, डब्ल्यू, जी. एण्ड हॉट, पी.के.: मैथ्ड्स इन सोशल रिसर्च: न्यूयार्क, 1952. ऽ लुण्डबर्ग , जी.ए.: सोशल रिसर्च, न्यूयार्क, 1942.
3. यंग, पी.वी.: साइन्टिफिक सोशल सर्वे एण्ड रिसर्च, न्यूयार्क, 1949.

9.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

9.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. उपकल्पना को परिभाषित कीजिए तथा इसके विभिन्न स्त्रोतों की व्याख्या कीजिए।
2. एक उत्तम उपकल्पना की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. सामाजिक अनुसंधान में उपकल्पना का क्या महत्व है इसके विभिन्न प्रकारों को समझाइए।
4. उपकल्पना की सीमाओं का विवेचन कीजिये।

इकाई: 10 अनुसंधान हेतू प्रस्ताव तैयार करने का प्रारूप
(Preparing the Research Proposal)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

10.2 उद्देश्य (Objectives)

10.3 शोध प्रस्ताव का अर्थ (Meaning of Research Proposal)

10.4 शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पद (Different Terms of Research Proposal Format)

10.5 शोध प्रस्ताव का आदर्श प्रारूप (Ideal Format of Research Proposal)

10.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

10.7 सारांश (Summary)

10.8 शब्दावली (Glossary)

10.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

10.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

10.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

शोधकार्य को आरम्भ करने के पूर्व उसकी योजना व विस्तृत रूपरेखा तैयार की जाती है। उस योजना व विस्तृत रूपरेखा को शोध प्रस्ताव कहा जाता है। शोध प्रस्ताव किसी भी शोधकार्य को करने का ब्लू प्रिंट होता है। शोध प्रस्ताव जितना स्पष्ट होगा शोधकार्य उतना ही वैज्ञानिक कार्यविधि पर आधारित होगा। वास्तव में शोध निष्कर्ष की विश्वसनीयता व वैधता शोध प्रस्ताव पर ही निर्भर करता है। शोध प्रस्ताव, शोधकार्य के लिए दिशा-निर्देशन प्रदान करता है। शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता द्वारा किसी शोध समस्या के समाधान के लिए विशेष कार्यविधि, संभावित समय एवं संभावित धन का व्यय आदि का उल्लेखों का ब्यौरा रहता है। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि शोध कार्य का समस्त भविष्य शोध प्रस्ताव पर आधारित होता है। प्रस्तुत इकाई में आप शोध प्रस्ताव तैयार करने के प्रारूप का बृहत अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ✓ शोध प्रस्ताव का अर्थ स्पष्ट कर पाएंगे।
- ✓ शोध प्रस्ताव के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ शैक्षिक अनुसंधान में शोध प्रस्ताव के महत्व की व्याख्या कर सकेंगे।
- ✓ शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पदों की व्याख्या कर सकेंगें।
- ✓ किसी शोध समस्या को लेकर शोध प्रस्ताव का निर्माण कर सकेंगे।

10.3 शोध प्रस्ताव का अर्थ (Meaning of Research Proposal)

शोधकार्य को पूर्ण करने की विस्तृत रूपरेखा को शोध प्रस्ताव की संज्ञा दी जाती है। प्रस्तावित शोधकार्य की रूपरेखा का निर्धारण, अनुसंधान का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पद है परन्तु यह एक कठिन कार्य है। इसके तैयार करने में अनुसंधानकर्ता जितना ही अध्ययन, चिन्तन एवं विशेषज्ञों से विचारों का आदान-प्रदान करता है, अनुसंधान कार्य उतना ही सरल व सहज हो जाता है। वास्तव में शोध प्रस्ताव अनुसंधान कार्य का 'एक्स रे प्लाण्ट' है जिसमें प्रस्तावित अनुसंधान के सभी अवयवों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इसकी अस्पष्टता एवं भ्रामक होना संपूर्ण अनुसंधान कार्य को अव्यवस्थित तथा असफल बना देता है। शोध प्रस्ताव तैयार करने की अनेक विधियाँ तथा प्रारूप हैं। अलग-अलग संस्थानों द्वारा सामान्यतः अलग-अलग प्रारूप के अंतर्गत शोध प्रस्ताव मांगे जाते हैं, अर्थात शोध प्रस्ताव का कोई सार्वत्रिक प्रारूप (Universal form) नहीं हैं। यहां पर एक सुव्यवस्थित शोध प्रस्ताव का प्रारूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ताकि आपको इसकी आधारभूत रूपरेखा समझने में आसानी हो।

10.4 शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पद (Different Terms of Research Proposal Format)

एक आदर्श शैक्षिक शोध प्रस्ताव का विकास आपको निम्नलिखित पदों के अन्तर्गत करना चाहिए। यहाँ पर शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न पदों को प्रस्तुत किया गया है-

1. अध्ययन शीर्षक (Title of the study): आमुख पृष्ठ (Cover page) पर प्रस्तावित अध्ययन का शीर्षक दिया जाता है ताकि शोध समस्या के बारे में शीर्षक से पता चल जाए।

2. **शोध कार्य जिस उपाधि को प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है, (The Name of The Degree for Which the Research is to be Carried Out)**: उसका नाम आमुख पृष्ठ (Cover page) पर होना चाहिए।

3. संस्था का नाम जहाँ प्रस्तुत करना है (The name of the institute where the research work is to be submitted): आमुख पृष्ठ पर उस संस्था का नाम का जिक्र अवश्य होना चाहिए जहाँ शोध कार्य को प्रस्तुत व

जमा करना है।

4. पर्यवेक्षक का नाम (Name of supervisor): शोध कार्य जिसके निर्देशन में सपन्न किया जाएगा उनका नाम आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए।

5. शोधकर्ता का नाम (Name of Researcher): शोध कार्य जिनके द्वारा संपन्न किया जाता है, उनका नाम भी आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए। स्पष्टता के लिए शोध प्रस्ताव आमुख पृष्ठ का प्रारूप नीचे दिया गया है।

6. शोध समस्या (Research Problem) : वैज्ञानिक शोध की शुरूआत शोध समस्या के चयन से होती है। समस्या के बिना शोध कार्य शुरू हो ही नहीं सकता। शोध की समस्या का उल्लेख घोषणात्मक कथन के रूप में किया जाता है परंतु उसे प्रश्नवाचक **कथन** के रूप में भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। सामान्यत: शोध की समस्या का उल्लेख इस ढंग से किया जाता है कि उससे शोध के विशिष्ट लक्ष्य का स्पष्ट रूप से अनुमान लगाया जा सके। शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता न केवल शोध समस्या का उल्लेख करता है बल्कि वह उसके महत्व पर भी बल डालता है। दूसरे शब्दों में, शोधकर्ता यह भी बतलाने की कोशिश करता है कि इस समस्या का समाधान किस तरह से शैक्षिक या मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रभावित करेगा और उसका विशेष लाभ शिक्षाविदों और मनोवैज्ञानिकों को कैसे मिलेगा।

7. समस्या का कथन (Statement of the problem): इस बिन्दु पर शोध की मूल समस्या को निश्चित एवं स्पष्ट शब्दावली दी जाती है ताकि शोध समस्या को समझने में किसी तरह की संदिग्धता न रहे।

8. शोध उद्देश्य (Research objectives): शोध प्रस्ताव में शोध समस्या को हल करने हेतु, शोध उद्देश्य लिखने होते हैं। शोध एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। बिना उद्देश्य के शोध कार्य में सफलता नहीं मिल सकती। शोध उद्देश्य को **दो** वर्गों में विभक्त किया जा सकता है. मुख्य उद्देश्य व गौण उद्देश्य । इन दोनों के अलावा सहवर्ती उद्देश्य (Concomitant objectives) भी होता है। एक शोध प्रस्ताव में मुख्य उद्देश्य, गौण उद्देश्य व सहवर्ती उद्देश्य का स्पष्टतापूर्वक उल्लेख होना चाहिए।

9. प्राक्कल्पना (Hypothesis): शोध प्रस्ताव में शोध समस्या पर आधारित प्राक्कल्पनाओं का उल्लेखन अनिवार्य है। शोध की इस अवस्था में परिकल्पना अथवा परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। परिकल्पना का अर्थ वह अनुमानित कथन है जो शोध के परिणामों के संबंध में भविष्यवाणी की जाती है। वास्तविक शोध के बाद जो परिणाम प्राप्त होते हैं उनके आधार पर यह भविष्यवाणी सही भी हो सकती है और गलत भी। परिकल्पनाओं का निर्माण करते समय शोधकर्ता या अनुसंधानकर्ता को कई बातों पर ध्यान देना आवश्यक है -

1) परिकल्पनाओं को बहुत विशिष्ट होना चाहिए।
2) परिकल्पना इस प्रकार की हो कि वह शोधकर्ता को शोध के लिए दिशा निर्देशित कर सके।
3) परिकल्पना को शोधकर्ता के चितंन को ज्यादा तीक्ष्ण बनाने वाला तथा शोध समस्या के प्रमुख तत्वों पर जोर देने वाला होना चाहिए।
4) इसे विवेकी होना चाहिए।
5) परिकल्पना का कथन ऐसा होना चाहिए जिसमें समस्या से संबंधित दो या दो से अधिक चरों के बीच संबंध के बारे में पूर्वकथन किया गया हो, और इसका स्वरूप जाँचनीय होना चाहिए। एक उपयुक्त परिकल्पना समस्या समाधान के लिए हमें स्पष्ट मार्गदर्शन करती है।

10. शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषायें, पूर्वधारणा, परिसीमाएं तथा सीमांकन (Definition of the words used in research, assumptions, limitations, and delimitations): शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता प्रस्तावित शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषा, पूर्वधारणा, परिसीमा तथा सीमांकन का जिक्र करता है।

परिभाषा (Definitions): शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध में सम्मिलित होने वाले सभी चरों को शोधकर्ता संक्रियात्मक (Operationally) रूप से परिभाषित करता है । चरों की संक्रियात्मक परिभाषा से तात्पर्य किसी संप्रत्यय (Concept) को मापने तथा उत्पन्न करने के लिए आवश्यक संक्रियाओं (Operations) के कथन (Statements) से होता है। दूसरे शब्दों में, संक्रियात्मक परिभाषा में किसी संप्रत्यय को उसे किस तरह से मापा जा सकता है, के रूप में परिभाषित किया जाता है। इन परिभाषाओं से शोधकर्ता का शोध में प्रयुक्त चरों के मापन हेतु अपना दृष्टिकोण स्पष्ट होता है तथा उसे शोध प्रस्ताव का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है।

पूर्वधारणा (Assumptions): पूर्वधारणा का अर्थ उस कथन से होता है जिसमें शोधकर्ता विश्वास तो करता है परंतु जिसकी जाँच नहीं कर सकता है, ऐसे पूर्वकल्पनाओं का उल्लेख भी शोध प्रस्ताव में महत्वपूर्ण माना जाता है।

परिसीमा (Limitation): जो अवस्था शोधकर्ता के नियंत्रण से बाहर होता है तथा जो अध्ययन के निष्कर्ष एवं उसका अन्य परिस्थितियों में अनुप्रयोग पर प्रतिबंध लगाता है शोध की **परिसीमा** कहलाती है। यह भी शोध प्रस्ताव का एक महत्वपूर्ण अंग होता है।

सीमांकन (Delimitations) : सीमांकन शोध अध्ययन के फैलाव क्षेत्र से संबंधित होता है। यह शोध अध्ययन के चहारदीवारी के रूप में कार्य करता है। प्रस्ताव में इस तथ्य का भी उल्लेख होता है कि अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष किन व्यक्तियों या स्थितियों पर लागू होगा तथा उस विशिष्ट प्रतिदर्श के बाहर निष्कर्ष को सही नहीं ठहराया जा सकता है। इस प्रक्रिया को सीमांकन की संज्ञा दी जाती है।

a. शोध समस्या के संबंध में शोधकर्ता को जानकारी मिलती है कि यह शोध कहाँ तक सार्थक है।
b. शोध समस्या के समाधान से संबंधित अध्ययन की दिशा निर्धारित करने में सुविधा होती है। परिकल्पनाओं का निर्माण करना आसान हो जाता है।
c. अध्ययन करने के बाद जो परिणाम प्राप्त होते हैं उसकी विवेचना करने तथा परिकल्पनाओं के स्वीकृत तथा अस्वीकृत होने के संबंध में जो व्याख्या की जाती है उसमें साहित्य सर्वेक्षण से काफी मदद मिलती है।

11. संबंधित साहित्य की समीक्षा (Review of Related Literature): शोध समस्या से संबंधित साहित्य की समीक्षा प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शोध कार्य में सहायता पहुँचाती है, जिसका उल्लेख अवश्य रूप से शोध प्रस्ताव में होना चाहिए। यह समीक्षा शोध कार्य को एक निश्चित दिशा देने में सहायक होता है। शोध समस्या से संबंधित साहित्य की समीक्षा के कई लाभ हैं।

12. अध्ययन के चर (Variables Under Study): शोध प्रस्ताव में अध्ययन के चरों का वर्णन किया जाता है। किन चरों का अध्ययन किया जाता है तथा किन चरों का नियंत्रण किस प्रकार करना है?

13. अध्ययन विधि (Study Methods): शोध प्रस्ताव में शोध अध्ययन विधि का उल्लेखन आवश्यक है। अध्ययन विधि में प्रतिदर्श, अध्ययन अभिकल्प (Design of the study) उपकरण (Tools) तथा परीक्षण (Tests) और सांखिकीय विधियों की चर्चा की जाती है।

प्रतिदर्श (Sample): शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता को अपने अध्ययन के प्रतिदर्श के संबंध में निर्णय करना होता है। वास्तविक शोध कार्य शुरू करने के पहले यह निश्चित करना होता है कि प्रस्तुत अध्ययन में किस प्रकार का प्रतिदर्श होगा इसका आकार क्या होगा, किस आयु एवं वर्ग के प्रयोज्य होंगे, प्रतिदर्श किस जनसंख्या से लिए जायेंगे तथा किस विधि के द्वारा चुने जायेंगे। प्रतिदर्श या तो संभाव्यता प्रतिचयन (Probability sampling) या असंभाव्यता प्रतिचयन तकनीक (Non-probability Technique) द्वारा चुने जाते हैं। किस विधि के द्वारा प्रतिदर्श का चयन

किया जाएगा यह शोध के उद्देश्य एवं शोधकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है।

अध्ययन अभिकल्प (Design of the study): किसी भी शोध प्रस्ताव में शोध से संबंधित अभिकल्प (design) का उल्लेख करना आवश्यक होता है। किसी भी शोध का एक प्रमुख चरण अध्ययन के लिए किसी उचित अभिकल्प का चयन करना होता है। सामान्यतः अभिकल्प दो तरह के होते हैं जिन्हें प्रयोगात्मक अभिकल्प (Experimental design) तथा अप्रयोगात्मक अभिकल्प (Non-experimental design) कहते हैं। शोधकर्ता आवश्यकतानुसार, किसी एक अभिकल्प का चयन कर लेता है। प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में वातावरण को नियंत्रित (control) करने की आवश्यकता होती है साथ ही साथ यादृच्छिक (randomly) रूप से प्रतिदर्श (sample) का चयन किया जाता है। इसके विपरित अप्रयोगात्मक शोध अभिकल्प में वातावरण को नियंत्रित करने की आवश्यकता नहीं होती है तथा शोधकर्ता अपनी आवश्यकता के अनुसार किसी अभिकलप का चयन कर लेता है। इस भाग का सबसे प्रमुख अवयव, क्रियाविधि (procedure) होती है। इस भाग में शोधकर्ता को उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करना होता है जिनसे होकर अभी तक की शोध प्रक्रिया हुई है। यहाँ यह बताना होता है कि किस प्रकार प्रयोज्यों को विभिन्न समूहों में बाँटा गया, किस समूह को क्या निर्देश दिया गया। i

उपकरण तथा परीक्षण (Tools and Tests) - शोध प्रस्ताव के इस भाग में उन उपकरणों तथा परीक्षणों के संबंध में निर्णय लिया जाता है जिसका उपयोग शोध कार्य में करना होता है। प्रत्येक शोध में आंकड़ों के संग्रह के लिए कुछ विशेष उपकरणों तथा परीक्षणों को प्रयोग में लाया जाता है। उपकरणों एवं परीक्षणों का चयन, शोध समस्या एवं परिकल्पना के अनुसार किया जाता है। कभी-कभी आवश्यकता के अनुसार कोई उपकरण या परीक्षण उपलब्ध नहीं होता हैं तो शाधकर्ता स्वयं किसी परीक्षण का निर्माण करता है एवं उनका उपयोग करता है।

सांखियकीय विधि (Statistical Device) - शोध प्रस्ताव में शोध कार्य के दौरान प्राप्त होने वाले आंकड़ों के विश्लेषण के लिए व्यवहार की जाने वाली सांख्यिकीय विधियों के संबंध में निर्णय लिया जाता है। इसमें सिर्फ वैसी विधियों का ही इस्तेमाल किया जाता है जो आंकड़ों के अनुकूल तथा शोध के उद्देश्य को पूरा करने के लिए उपयुक्त हों। कुछ प्रमुख सांख्यिकीय विधियाँ है जो आंकड़ों के विश्लेषण के लिए आमतौर पर उपयोग में लायी जाती है, वे हैं माध्य (Mean), माध्यिका (Median), टी- अनुपात (t-ratio), काई-वर्ग (Chi square), सहसंबंध विधि (Correlation method), प्रसरण विश्लेषण (ANOVA) आदि। आवश्यकतानुसार ग्राफीय विधियों (Graphical methods) का भी व्यवहार किया जाता है। इसमें बारंबारता बहुभुज (Frequency polygon), आयत चित्र (Histogram) दंड आरेख (Bar diagram) संचयी बारंबारता वक्र (Cumulative frequency curve) आदि मुख्य हैं।

14. समय अनुसूची (Time Schedule): शोध प्रस्ताव के इस भाग में शोध कार्य को पूरा करने की अनुमानित समयावधि का जिक्र किया जाता है। इसमें सामान्यत: शोध कार्य को छोटी-छोटी इकाइयों में बॉट दिया जाता है और प्रत्येक इकाई को पूरा किए जाने के समय सीमा का उल्लेख किया जाता है।

15. संभावित परिणाम (Expected Results): एक आदर्श शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध के संभावित परिणाम का संक्षिप्त रूप से वर्णन कर दिया जाता है तथा उन तथ्यों पर भी प्रकाश डाला जाता है जो शोध के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। इसमें संभावित परिणाम का उचित विकल्प का भी वर्णन होता है तथा उन समस्याओं का भी उल्लेख होता है जिसका जन्म उन परिस्थितियों में हो सकता है जब वास्तविक परिणाम संभावित परिणाम से भिन्न होंगे।

16. संभावित अध्याय (Probable Chapters): एक उत्तम शोध प्रस्ताव में संभावित अध्यायों की रूपरेखा भी प्रस्तुत की जाती है।

17. संदर्भ ग्रन्थों की सूची (References): इस भाग में शोध प्रस्ताव में सम्मिलित किए गए विज्ञानियों के नामों

को तथा उनके शोध लेख के प्रकाशन से संबंधित संपूर्ण विवरण होता है। यह बहुत कुछ शोध के अंतिम रिपोर्ट जो शोध पूरी होने के बाद तैयार किया जाता है, के ही समान होता है।

18. परिशिष्ट (Appendix): शोध प्रस्ताव में परिशिष्ट का होना आवश्यक है। इसमें उन सभी सामग्रियों की सूची होती है जिसे शोध में उपयोग किया जाता है। इसमें उपयोग में लाये जाने वाले परीक्षण तथा मापनी का एक-एक कॉपी, उद्दीपन सामग्रियों, तथा अन्य शोध उपकरणों की सूची तथा मानक निर्देश की सूची आदि को संलग्नित किया जाता है। अत: यह स्पष्ट है कि एक उत्तम शोध प्रस्ताव के कई चरण होते हैं। इन चरणों को मद्देनजर रखकर यदि शोधकर्ता शोध प्रस्ताव तैयार करता है तो निश्चित रूप से वह अपने शोध उद्देश्यों को पूरा कर लेगा।

10.5 शोध प्रस्ताव का आदर्श प्रारूप (Ideal Format of Research Proposal)

(लघु शोध प्रस्ताव नमूनार्थ)

बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की अभिवृत्ति, जागरूकता और तत्परता का अध्ययन
(नैनीताल जनपद के सन्दर्भ में)

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय के शिक्षाशास्त्र विषय में स्नातकोत्तर उपाधि की प्रतिपूर्ति हेतु प्रस्तुत लघु शोध प्रस्ताव

शोध निर्देशक का नाम
डा० दिनेश कुमार
सहायक प्राचार्य, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

शोधकर्ता का नाम
शुभम सिंह
नामांकन संख्या: 20120319

अकादमिक सत्र (2020-21)
शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी (नैनीताल)
उत्तराखण्ड

बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की अभिवृत्ति, जागरूकता और तत्परता का अध्ययन

प्रस्तावना-

किसी भी देश का भविष्य उस राष्ट्र के बालक होते हैं। किसी भी राष्ट्र की आर्थिक और भौतिक समृद्धि तब तक चिरस्थायी नहीं रह सकती जब तक नई पाढ़ी का सर्वांगीण विकास न हो। अत: देश के भविष्य को सुरक्षित करने के लिए वर्तमान संतति का सम्यक् पालन-पोषण एवं विकास किया जाना आवश्यक ही नहीं अपरिहार्य है।

हमारे देश के संविधान में उल्लिखित नीति-निर्देशक तत्वों में भी बचपन को कुंठाओं और उत्पीड़न से बचाने के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश प्रदान किये गए है। भारतीय संविधान की धारा 39 (च) में स्पष्ट उल्लेख है कि शैशव और किशोरावस्था का शोषण से संरक्षण हो । संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों में से एक शोषण के विरूद्ध अधिकार के अन्तर्गत अनुच्छेद 24 में व्यवस्था की गई है कि 14 वर्ष तक की आयु वाले किसी बच्चे को जोखिमपूर्ण

काम में न लगाया जाए। इस परिप्रेक्ष्य में यह धारणा है कि इस अवस्था तक बच्चों को उपयोगी, उत्तरदायी एवं योग्य नागरिक बनने की शिक्षा दी जाए। अल्पायु में बच्चों के खेलकूद व शिक्षा के अवसर उपलब्ध कराने के स्थान पर जोखिमपूर्ण कार्यों में उनका नियोजन, शोषणपूर्ण अमानवीय कार्य है।

संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 20 नवम्बर 1989 को बच्चों के अधिकारों की घोषणा की गई थी। इस घोषणा पत्र में 54 अनुच्छेद हैं।

अनुच्छेद 27 के अनुसार, इस समझौते में शामिल देश मानते हैं कि हर बच्चे को उसके भौतिक, मानसिक, अध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिए समुचित जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 28 के अनुसार समझौते में शामिल देश के बच्चों के शिक्षा के अधिकार को मान्यता देते हैं और समान अवसर के आधार पर इस अधिकार को उपलब्ध कराने में निरन्तर प्रगति के लिए अग्रांकित उपय करेंगें-

1. प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाकर सभी बच्चों को निःशुल्क शिक्षा उपलब्ध कराना।

2. सभी बच्चों को शैक्षिक तथा व्यावसायिक सूचना और दिशा-निर्देश उपलब्ध कराना।

3. स्कूलों में बच्चों की नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करने तथा पढ़ाई के बीच में ही बच्चों के स्कूल छूट जाने की दर को कम करना ।

4. यह सुनिश्चित करने के उपाय करना कि स्कूल में अनुशासन लागू करने के तरीके बच्चे की मानवीय गरिमा के अनुरूप हों।

यह बच्चों का अधिकार है कि राष्ट्र उनके प्रति अपनी जिम्मेदारी निभाए। हमें यह भी समझना होगा कि बच्चे वयस्कों का अविकसित संस्करण नहीं हैं वे "विशेष" व्यक्ति हैं जिनकी स्वतन्त्र सत्ता है, अपनी आवश्यकताएं हैं। यह दूसरी बात है कि वे जीवन के प्रारम्भिक वर्षो में पूरी तरह और किशोरावस्था में बहुत हद तक वयस्कों पर निर्भर हैं और अपना पक्ष और अपनी माँगें सबके सामने रखने तथा अपने अधिकारों पर स्वयं न्यायालयों और अभिकरणों अथवा किसी अन्य उपयुक्त मंच के माध्यम से प्राप्त कर सकने में असमर्थ हैं। इसीलिए जब हम बच्चों के अधिकारों की बात सोचते हैं तो इसका अर्थ माता- पिता, अध्यापक, समाज और सरकार के दायित्वों से होता है। अतः आवश्यक है कि बाल अधिकारों की प्राप्ति के लिए यह जाना जाए कि जिनके कंधों पर बाल अधिकारों की लड़ाई लड़ने का दायित्व है। वे बाल अधिकारों के प्रति क्या अभिवृत्ति रखते हैं? कितने जागरूक हैं? और कितने तत्पर?

सम्बधित शोध साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन:

प्रस्तुत अध्ययन से पूर्व अन्य शोधकर्ताओं का ध्यान बालकों की समस्याओं की ओर केन्द्रित हुआ और उन्होंनें निम्न अध्ययन किए -

1. माहस्कर (1978) ने आश्रय विहीन बच्चों का सर्वेक्षण किया।

2. आईकर (1979) ने धारावी झुग्गी झोपड़ी में रहने वाले बच्चों का सर्वेक्षण किया और स्कूल जाने वाले तथा न जाने वाले बच्चों का तुलनात्मक अध्ययन किया।

3. डिसूजा (1980) ने अनुसूचित जाति की शैक्षिक असमानताओं पर अध्ययन किया।

4. गुप्ता (1980) ने मुसलमान बच्चों के शैक्षिक अवसरों की समानता पर ध्यान केन्द्रित किया।

5. ओ0आर0जी0 सर्वेक्षण (1993) ने स्लेट पेन्सिल उद्योग में लगे बाल श्रमिकों का मध्यप्रदेश के मदसौर जिले में अध्ययन किया।

पूर्वोक्त सभी विद्वानों ने बाल श्रमिकों, घुमन्तू बालकों की शैक्षिक व सामाजिक समस्याओं को ध्यान में रखकर अध्ययन किया है परन्तु किसी भी शोधकर्ता ने समग्र रूप से बाल अधिकारों पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं

किया है। अतः बालकों के समग्र विकास को दृष्टिगत रखते हुए बाल अधिकारों के सन्दर्भ में उन्हें लागू करने वालों की अभिवृत्ति, जागरूकता और तत्परता जानना ही इस शोधकार्य का विनम्र उद्देश्य है जिससे कि बाल अधिकारों की सम्यक्, प्राप्ति के सन्दर्भ में दिशा बोध प्राप्त कर कार्ययोजना में सुधार किया जा सके।

समस्या कथन:-

"बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों की अभिवृत्ति जागरूकता और तत्परता का अध्ययन (हल्द्वानी जनपद के विशेष सन्दर्भ में) " **समस्या का परिभाषीकरण-**

i. **बाल अधिकार-** बाल अधिकारों से तात्पर्य संयुक्त राष्ट्रसंघ के दिसम्बर 1989 में जारी घोषणा पत्र और भारत सरकार द्वारा, पालन-पोषण संरक्षण, विकास, शोषण से बचाव आदि सम्बन्धी अधिकार शामिल है।

ii. **विद्यार्थी-** विद्यार्थियों से तात्पर्य प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ने वाले 6-14 वर्ष तक के बालक एवं बालिकाओं से है।

iii. **अभिवृत्ति-** अभिवृत्ति से तात्पर्य उस संवेगात्मक प्रवृत्ति से है जो अनुभवों द्वारा व्यवस्थित होती है तथा किसी व्यक्ति, संस्था, वस्तु या विचार के प्रति सकारात्मक या नकारात्मक रूप से कार्य करती है।

iv. **जागरूकता-** जागरूकता से तात्पर्य प्राप्त किए जा सकने योग्य लाभों, हितों या सुविधाओं के प्रति सतर्कता एवं आवश्यक जानकारी रखने से है। प्रस्तुत शोध में जागरूकता से तात्पर्य बाल अधिकारों के प्रति शिक्षकों की सतर्कता या जानकारी है।

V. **तत्परता-** तत्परता से तात्पर्य उपलब्ध लाभों को प्राप्त करने हेतु उत्सुकता या चेष्टा से है। प्रस्तुत शोध में सरकार द्वारा प्राथमिक विद्यालयों में दी गई सुविधाओं के प्रति विद्यार्थियों के शिक्षकों की चेष्टा की तत्परता है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक शिक्षकों की जागरूकता का अध्ययन करना।
3. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक शिक्षकों की तत्परता का अध्ययन करना।
4. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक शिक्षकों की अभिवृत्ति और जागरूकता के मध्य अन्तर का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएँ-

1. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की सकारात्मक और नकारात्मक अभिवृत्ति के मध्य कोई अन्तर नहीं है।
2. बाल अधिकारों के प्रति सकारात्मक और नकारात्मक अभिवृत्ति रखने वाले प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की संख्या के मध्य कोई अन्तर नहीं है।
3. बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की सकारात्मक और नकारात्मक जागरूकता के मध्य कोई अन्तर नहीं है।
4. बाल अधिकारों के प्रति सकारात्मक और नकारात्मक जागरूकता रखने वाले प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की संख्या के मध्य कोई अन्तर नहीं है।

शोध प्रविधि (Research Methodology):

शोध विधि: प्रस्तुत अनुसंधान विश्लेषणात्मक प्रकृति का सर्वेक्षण आधारित सूक्ष्म अनुसंधान है। इसके अन्तर्गत नैनीताल जनपद में आने वाले पांच विकास क्षेत्रों - समस्त सरकारी प्राथमिक विद्यालयों के स्थायी शिक्षकों की बाल

अधिकारों के प्रति अभिवृत्ति, तत्परता और जागरूकता का स्वनिर्मित प्रश्नावली द्वारा सर्वेक्षण किया जाए गा। सर्वेक्षण के द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आधार पर समंक निर्मित किए जाए में तथा अनुसंधान के उद्देश्यों एवं परिकल्पनाओं के अनुरूप उन्हें वर्गीकृत एवं सारणीबद्ध करके उपयुक्त सांख्यिकीय तकनीकों जैसे माध्य, प्रतिशत, प्रमाप विचलन, क्रान्तिक अनुपात, सहसम्बन्ध गुणांक, काई वर्ग परीक्षण आदि के द्वारा मूक समंकों को भाषा प्रदान करके निष्कर्ष प्राप्त किए जायेंगे।

समग्र (जनसंख्या): प्रस्तुत अनुसंधान में जनसंख्या से अभिप्राय जनपद नैनीताल के 15 विकास खण्डों के समस्त सरकारी प्राथमिक विद्यालयों में स्थायी रूप से कार्यरत सहायक अध्यापकों (पुरूष तथा महिला) से है। **न्यादर्श एवं निदर्शन तकनीक:** प्रस्तुत अध्ययन हेतु न्यादर्श का चयन दैव निदर्शन (लाटरी विधि) से किया गया है। प्रतिचयन प्रक्रिया दो चरणों में पूर्ण होगी। **प्रथम चरण का प्रतिदर्श:** सर्वप्रथम जनपद नैनीताल की चारों तहसीलों से लाटरी पद्धति द्वारा 25 प्रतिशत विकास खण्डों का चयन किया जाएगा। इस प्रकार प्रथम स्तर पर 4 विकास खण्डों का चयन किया जाएगा।

द्वितीय चरण का प्रतिदर्श: द्वितीय स्तर पर इन चयनित विकास खण्डों में से 25 प्रतिशत विद्यालयों का चयन दैव प्रतिदर्श विधि द्वारा किया जाएगा। इस प्रकार इन चयनित विद्यालयों के समस्त स्थायी रूप से कार्यरत अध्यापकों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया जाएगा।

प्रयुक्त उपकरण: बाल अधिकारों के प्रति प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों की अभिवृत्ति जागरूकता एवं तत्परता का मापन करने हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया जाएगा। शोधकर्ता जहाँ तक सम्भव होगा स्वयं प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों से सम्पर्क कर अभिवृत्ति, जागरूकता एवं तत्परता के मापन हेतु आँकड़ों का संग्रह प्रश्नावली द्वारा करेगी। सर्वेक्षण में कुछ प्रशिक्षित लोगों का सहयोग भी आँकड़ों के संग्रहण के लिए किया जा सकता है। विद्यालयों की संख्या, उनके शिक्षकों की संख्या, लिंग, क्षेत्र आदि से सम्बन्धित आँकड़े द्वितीयक स्रोतों से एकत्र किए जायेंगे।

आकड़ों का विश्लेषण एवं परिकल्पना परीक्षण: विश्लेषण हेतु माध्य, सहसंबंध का प्रयोग किया जाएगा जबकि परिकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए टी-परीक्षण, काई वर्ग परीक्षण, आसंग वर्ग परीक्षण, सम्भाव्य विभ्रम आदि उपयुक्त विधियों का प्रयोग किया जाएगा।

सीमाकंन: अध्ययन केवल नैनीताल जनपद के परिषदीय प्राथमिक विद्यालयों में कार्यरत स्थायी अध्यापकों (पुरूष तथा महिला) तक सीमित हैं।

सन्दर्भ (References) :

1. सुकुमार अवस्था में कठोर श्रम (गृह आधारित उद्योगों में बाल श्रम): रूमा घोष सिंह, निखिल राम-योजना मई 1993

2. आंध्र प्रदेश में बाल श्रम और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, परिप्रेक्ष्य, नीपा, नई दिल्ली, दिसम्बर 1999

3. बालकों के मानवाधिकार, विनोद बिहारी लाल, नया ज्ञानोदय, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, अक्टूबर 2006

4. जगमोहन सिंह राजपूत (सं०) विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली 2001

5. Aikara, J.; Educating out of School Children. A survey of Dharavi Slum. Unit for Research the sociology of Education, Tata Institute of Social Science, Bombay. Third

Survey of Education 1978-83 P. 106 (1979)

6. D'Souza, V.S., Educational Inequalities among schedules castes, A case study in the Punjab, Deptt. of Soc., Pun. U., 1980

7. Gupta, B.S., Equality of Educational Opportunity and Muslims, Ph.D. Edu. Bhopal Uni. 1980

8. Mhaskar, V. M., Survey of Institutions of homeless children in Maharashtra State, Bombay Division, Ph.D. Edu. Bombay U., 1978

10.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. शोध कार्य को पूरा करने की अनुमानित समयावधि.....कहलाती है। (समय अनुसूची **या** शोध प्रस्ताव)
2. प्रस्तावित शोध में ..... का उल्लेख महत्वपूर्ण होता है, जिससे समस्या के समाधान में मदद मिलती है। (साहित्य की समीक्षा **या** संभाव्यता)
3. शोध कार्य को पूरा करने के लिए एक ..... अनुसूची बनाना आवश्यक होता है। (समय **या** मांग)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सीमांकन शोध अध्ययन के फैलाव क्षेत्र को परिभाषित करता है।
2. परिकल्पना का निर्माण शोध के निष्कर्षों के संबंध में नहीं किया जाता है।

10.7 सारांश (Summary)

शोधकार्य को पूर्ण करने की विस्तृत रूपरेखा को शोध प्रस्ताव की संज्ञा दी जाती है। प्रस्तावित शोधकार्य की रूपरेखा का निर्धारण, अनुसंधान का एक अत्यंत महत्वपूर्ण पद है। वास्तव में शोध प्रस्ताव अनुसंधान कार्य का 'एक्स रे प्लाण्ट' है जिसमें प्रस्तावित अनुसंधान के सभी अवयवों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। एक आदर्श शैक्षिक शोध प्रस्ताव का विकास निम्नलिखित पदों के अन्तर्गत करना होता है।

1. अध्ययन शीर्षक (Title of the study): आमुख पृष्ठ (Cover page) पर प्रस्तावित अध्ययन का शीर्षक दिया जाता है ताकि शोध समस्या के बारे में शीर्षक से पता चल जाए।

2. उपाधि का नाम (The name of the degree for which the research is to be carried out): शोध कार्य जिस उपाधि को प्राप्त करने के लिए किया जा रहा है, उसका नाम आमुख पृष्ठ (Cover page) पर होना चाहिए।

3. संस्था का नाम जहाँ प्रस्तुत करना है (The name of the institute where the research work is to be submitted): आमुख पृष्ठ पर उस संस्था का नाम का जिक्र अवश्य होना चाहिए जहाँ शोध कार्य को प्रस्तुत व जमा करना है।

4. पर्यवेक्षक का नाम (Name of supervisor): शोध कार्य जिसके निर्देशन में सपन्न किया जाए गा उनका नाम

आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए।

5. शोधकर्ता का नाम (Name of Researcher): शोध कार्य जिनके द्वारा संपन्न किया जाता है, उनका नाम भी आमुख पृष्ठ पर होना चाहिए। स्पष्टता के लिए शोध प्रस्ताव आमुख पृष्ठ का प्रारूप नीचे दिया गया है।

6. शोध समस्या (Research Problem): वैज्ञानिक शोध की शुरूआत शोध समस्या के चयन से होती है। समस्या के बिना शोध कार्य शुरू हो ही नहीं सकता। एक शोध प्रस्ताव में शोध समस्या को वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत करना चाहिए।

7. समस्या का कथन (Statement of the problem): इस बिंदु पर शोध की मूल समस्या को निश्चित एवं स्पष्ट शब्दावली दी जाती है ताकि शोध समस्या को समझने में किसी तरह की संदिग्धता न रहे।

8. शोध उद्देश्य (Research objectives): शोध एक सोद्देश्य प्रक्रिया है। शोध प्रस्ताव में शोध समस्या को हल करने हेतु, शोध उद्देश्य लिखने होते हैं।

9. प्राक्कल्पना (Hypothesis): शोध प्रस्ताव में शोध समस्या पर आधारित परिकल्पना अथवा परिकल्पनाओं का निर्माण किया जाता है। एक उपयुक्त परिकल्पना समस्या समाधान के लिए स्पष्ट मार्गदर्शन करती है।

10. शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषायें, पूर्वधारणा, परिसीमाएं तथा सीमांकन (Definition of the words used in research, assumptions, limitations, and delimitations): शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता प्रस्तावित शोध में प्रयुक्त शब्दों की परिभाषा, पूर्वधारणा, परिसीमा तथा सीमांकन का जिक्र करता है।

a. परिभाषा (Definitions): शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध में सम्मिलित होने वाले सभी चरों को शोधकर्ता संक्रियात्मक (Operationally) रूप से परिभाषित करता है। इन परिभाषाओं से शोधकर्ता का शोध में प्रयुक्त चरों के मापन हेतु अपना दृष्टिकोण स्पष्ट होता है तथा उसे शोध प्रस्ताव का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है।

b. पूर्वधारणा (Assumptions): पूर्वधारणा का अर्थ उस कथन से होता है जिसमें शोधकर्ता विश्वास तो करता है परंतु जिसकी जाँच नहीं कर सकता है, ऐसे पूर्वकल्पनाओं का उल्लेख भी शोध प्रस्ताव में महत्वपूर्ण माना जाता है।

c. परिसीमा (Limitation): जो अवस्था शोधकर्ता के नियंत्रण से बाहर होता है तथा जो अध्ययन के निष्कर्ष एवं उसका अन्य परिस्थितियों में अनुप्रयोग पर प्रतिबंध लगाता है शोध की परिसीमा कहलाती है। यह भी शोध प्रस्ताव का एक महत्वपूर्ण अंग होता है।

d. सीमांकन (Delimitations): सीमांकन शोध अध्ययन के फैलाव क्षेत्र से संबंधित होता है। यह शोध अध्ययन के चहारदीवारी के रूप में कार्य करता है।

11. संबंधित साहित्य की समीक्षा (Review of related literature): शोध समस्या से संबंधित साहित्य की समीक्षा प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शोध कार्य में सहायता पहुँचाती है, जिसका उल्लेख अवश्य रूप से शोध प्रस्ताव में होना चाहिए।

12. अध्ययन के चर (Variables under study): शोध प्रस्ताव में अध्ययन के चरों का वर्णन किया जाता है। किन चरों का अध्ययन किया जाता है तथा किन चरों का नियंत्रण किस प्रकार करना है ?

13. अध्ययन विधि (Study methods): शोध प्रस्ताव में शोध अध्ययन विधि का उल्लेखन आवश्यक है। अध्ययन विधि में प्रतिदर्श, अध्ययन अभिकल्प (Design of the study) उपकरण (Tools) तथा परीक्षण (Tests) और सांखिकीय विधियों की चर्चा की जाती है।

14. प्रतिदर्श (Sample): शोध प्रस्ताव में शोधकर्ता को अपने अध्ययन के प्रतिदर्श के संबंध में निर्णय करना होता

है। किस विधि के द्वारा प्रतिदर्श का चयन किया जाएगा यह शोध के उद्देश्य एवं शोधकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है।

15. अध्ययन अभिकल्प (Design of the study): किसी भी शोध प्रस्ताव में शोध से संबंधित अभिकल्प (design) का उल्लेख करना आवश्यक होता है। इस भाग का सबसे प्रमुख अवयव, क्रियाविधि (procedure) होती है। इस भाग में शोधकर्ता को उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करना होता है जिनसे होकर अभी तक की शोध प्रक्रिया हुई है।

16. उपकरण तथा परीक्षण (Tools and Tests) - शोध प्रस्ताव के इस भाग में उन उपकरणों तथा परीक्षणों के संबंध में निर्णय लिया जाता है जिसका उपयोग शोध कार्य में करना होता है। सांख्यिकीय विधि (**Statistical Device)** - शोध प्रस्ताव में शोध कार्य के दौरान प्राप्त होने वाले आंकड़ों के विश्लेषण के लिए व्यवहार की जाने वाली सांख्यिकीय विधियों के संबंध में निर्णय लिया जाता है।

17. समय अनुसूची (Time Schedule): शोध प्रस्ताव के इस भाग में शोध कार्य को पूरा करने की अनुमानित समयावधि का जिक्र किया जाता है।

18. संभावित परिणाम (Expected Results): एक आदर्श शोध प्रस्ताव में प्रस्तावित शोध के संभावित परिणाम का संक्षिप्त रूप से वर्णन कर दिया जाता है।

19. संभावित अध्याय (Probable Chapters): एक उत्तम शोध प्रस्ताव में संभावित अध्यायों की रूपरेखा भी प्रस्तुत **की** जाती है।

20. संदर्भ ग्रन्थों की सूची (References): इस भाग में शोध प्रस्ताव में सम्मिलित किए गए विज्ञानियों के नामों को तथा **उनके** शोध-लेख के प्रकाशन से संबंधित संपूर्ण विवरण होता है।

21. परिशिष्ट (Appendix): शोध प्रस्ताव में परिशिष्ट का होना आवश्यक है। अतः यह स्पष्ट है कि एक उत्तम शोध प्रस्ताव के कई चरण होते हैं। इन चरणों को मद्देनजर रखकर यदि शोधकर्ता शोध प्रस्ताव तैयार करता है तो निश्चित रूप से वह अपने शोध उद्देश्यों को पूरा कर लेगा।

10.8 शब्दावली (Glossary)

- **शोध प्रस्ताव (Research proposal):** शोधकार्य को पूर्ण करने की विस्तृत रूपरेखा को शोध प्रस्ताव की संज्ञा दी जाती है।
- **संक्रियात्मक परिभाषा (Operational Definition)**: शोधकर्ता शोध में प्रयुक्त चरों के मापन हेतु अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करता है तथा उसे उस शोध के लिए चरों की अपनी परिभाषा तय करता है ताकि शोध कार्य का मूल्यांकन करने में सहायता मिलती रहे, यही चरों की संक्रियात्मक परिभाषा कहलाती है।
- **पूर्वधारणा (Assumptions)**: पूर्वधारणा का अर्थ उस कथन से होता है जिसमें शोधकर्ता विश्वास तो करता है परंतु जिसकी जाँच नहीं कर सकता है।
- **परिसीमा (Limitation)**: जो अवस्था शोधकर्ता के नियंत्रण से बाहर होता है तथा जो अध्ययन के निष्कर्ष एवं उसका अन्य परिस्थितियों में अनुप्रयोग पर प्रतिबंध लगाता है शोध की परिसीमा कहलाती है।
- **सीमांकन (Delimitations)**: सीमांकन शोध अध्ययन के फैलाव क्षेत्र से संबंधित होता है। यह शोध अध्ययन के चहारदीवारी के रूप में कार्य करता है।

- **अध्ययन अभिकल्प (Design of the study) :** शोध अभिकल्प (design) में शोधकर्ता को उन सभी प्रक्रियाओं का वर्णन करना होता है जिनसे होकर शोध प्रक्रिया को गुजरनी है। इस भाग का सबसे प्रमुख अवयव, क्रियाविधि (procedure) होती है।
- **समय अनुसूची (Time Schedule)** : शोध कार्य को पूरा करने की अनुमानित समयावधि।

10.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. समय अनुसूची 2. साहित्य की समीक्षा 3. समय

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2. असत्य

10.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Best, John W. & Kahn (2008). Research in Education, New Delhi, PHI.
2. Good, Carter, V. (1963). Introduction to Educational Research, New York, Rand Mc Nally and company.
3. Koul, Lokesh (2002). Methodology of Educational Research New Delhi, Vikas Publishing Pvt. Ltd.
4. Kerlinger, Fred N. (2002). Foundations of Behavioural Research, New Delhi, Surjeet Publications.
5. Tuckman Bruce W. (1978). Conducting Educational Research New York: Harcourt Bruce Jovanovich Inc.
6. Van Dalen, Deo Bold V. (1979). Understanding Educational Research, New York MC Graw Hill Book Co.

10.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

1. सिंह, ए.के. (2007): मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास
2. शर्मा, आर. ए. (2001): शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया, मेरठ, आर०लाल० पब्लिकेशन्स
3. राय, पारसनाथ (2001): अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन्स

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शोध प्रस्ताव का अर्थ स्पष्ट करते हुए शैक्षिक अनुसंधान में शोध प्रस्ताव के महत्व की व्याख्या कीजिए।
2. शोध प्रस्ताव के उद्देश्यों की व्याख्या कीजिए।
3. शोध प्रस्ताव प्रारूप के विभिन्न **पदों** की व्याख्या कीजिए।
4. किसी शोध समस्या को लेकर एक शोध प्रस्ताव का निर्माण कीजिए।

इकाई- 12 शोध प्रारूप

(Research Design)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

12.2 उद्देश्य (Objectives)

12.3 शोध प्रारूप का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Research Design)

12.4 शोध प्रारूप का उद्देश्य (Objective of Research Design)

12.5 शोध प्रारूप के घटक अंग (Components of Research Design)

12.6 शोध प्रारूप का महत्व (Importance of Research Design)

12.7 शोध प्रारूप बनाम तथ्य संकलन की पद्धति (Research Design versus Method of Data Collection)

12.8 शोध प्रारूप के प्रकार (Types of Research Design)

12.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

12.10 सारांश (Summary)

12.11 शब्दावली (Glossary)

12.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

12.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

12.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

12.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक शोध के सफल एवं उचित क्रियान्वयन के लिए सटीक एवं स्पष्ट शोध प्रारूप का होना आवश्यक है। शोध प्रारूप से तात्पर्य सम्पूर्ण शोध योजना के निर्धारण से है। शोध के वास्तविक क्रियान्वयन के पूर्व ही यह तय कर लिया जाता है। कि विविध विषयों पर किस तरह से चरणबद्ध ढंग से कार्य करते हुए अन्तिम स्तर (निष्कर्ष) तक पहुँचा जायेगा। शोध की स्पष्ट रूपरेखा पर ही यह निर्भर करता है। कि शोधकर्त्ता इधर-उधर अनावश्यक समय एवं संसाधन बरबाद नही करता है। उसे शोध की सीमा और कार्यक्षेत्र का ज्ञान रहता है और वह अपने शोध कार्य को निरन्तर समस्याओं का पूर्वानुमान लगाते हुए आगे बढ़ाता जाता है। प्रस्तुत इकाई में शोध प्रारूप के अर्थ, परिभाषाओं, उद्देश्यों, महत्व, घटक अंगों को बताते हुए संक्षेप में इसके विविध प्रकारों को विश्लेषित किया गया है।

12.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपके लिए यह सम्भव होगा कि- ऽ सामाजिक अनुसंधान में शोध प्रारूप के अर्थ एवं महत्व को बताना। ऽ शोध प्रारूप के उद्देश्यों एवं घटक अंगों को स्पष्ट करना, तथा
ऽ शोध प्रारूप के विविध प्रकारों का वर्णन करना।

12.3 शोध प्रारूप का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Research Design)

प्रस्तावित सामाजिक शोध की विस्तृत कार्य योजना अथवा शोधकार्य प्रारम्भ करने के पूर्वसम्पूर्ण शोध प्रक्रियाओं की एक स्पष्ट संरचना 'शोध प्रारूप' या 'शोध अभिकल्प' के रूप में जानी जाती है। शोध प्रारूप के सम्बन्ध में यह स्पष्ट होना चाहिए कि यह शोध का कोई चरण नहीं है। क्योंकि शोध के जो निर्धारित या मान्य चरण हैं, उन सभी पर वास्तविक कार्य प्रारम्भ होने के पूर्व ही विस्तृत विचार होता है और तत्पश्चात् प्रत्येक चरण से सम्बन्धित विषय पर रणनीति तैयार की जाती है। जब सम्पूर्ण कार्य योजना विस्तृत रूप से संरचित हो जाती है। तब वास्तविक शोध कार्य प्रारम्भ होता है।

करलिंगर (curlinger), के अनुसार, **"शोध प्रारुप अनुसंधान के लिए कल्पित एक योजना, एक संरचना तथा एक प्रणाली है, जिसका एकमात्र प्रयोजन शोध सम्बन्धी प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना तथा प्रसरणों का नियंत्रण करना होता है।"**

पी. वी. यंग (P.V. Young) के अनुसार, **"क्या, कहाँ, कब, कितना, किस तरीके से इत्यादि के सम्बन्ध में निर्णय लेने के लिए किया गया विचार अध्ययन की योजना या अध्ययन प्रारूप का निर्माण करता है।"**

ए. कॉफ (A. coff) के अनुसार, **"निर्णय लिये जाने वाली परिस्थिति उत्पन्न होने के पूर्व ही निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्रारुप कहते हैं।"**

विविध वेबसाइटों पर भी शोध प्रारूप की परिभाषाएँ दी गयी है।उनमें से कुछ परिभाषाएँ इस प्रकार हैं-

"शोध प्रारुप को शोध की संरचना के रुप में विचार किया जा सकता है- यह 'गोंद' होता है। जो किसी शोध कार्य के सभी तत्वों को बाँधे रखता है।"

(www.socialresearchmethods.netèkbèdesign.php) **"शोध उद्देश्यों के उत्तर देने के लिए शोध की योजना है विशिष्ट समस्या के समाधान की संरचना या खाका है।"** (www.decisionanalyst.comèglosary)

"ऐसी योजना जो शोध प्रश्नों को परिभाषित करें, परीक्षण की जाने वाली उपकल्पनाओं और अध्ययन किये जाने वाले परिवर्त्यों की संख्या और प्रकार स्पष्ट करें। यह वैज्ञानिक जाँच के सुविकसित सिद्धान्तों का प्रयोग करके

परिवर्त्यो में सम्बन्धों का आँकलन करती है।" (www.decisionanalyst.comèglosary) **"क्या तथ्य इकट्ठा करना है। किनसे, कैसे और कब तक इकठ्ठा करना है। और प्राप्त तथ्यों को कैसे विश्लेषित करना है कि योजना शोध प्रारुप है।"**

(www.ojp.usdoj.govèBJAèevaluationèglossary) स्पष्ट है। कि शोध प्रारूप प्रस्तावित शोध की ऐसी रूपरेखा होती है। जिसे वास्तविक शोध कार्य को प्रारम्भ करने के पूर्व व्यापक रूप से सोच-समझ के पश्चात् तैयार किया जाता है। शोध की प्रस्तावित रूपरेखा का निर्धारण अनेकों बिन्दुओं पर विचारोपरान्त किया जाता है। इसे सरलतम रूप में पी. वी. यंग (1977) ने शोध सम्बन्धित विविध प्रश्नों के द्वारा इस तरह स्पष्ट किया है-

1. अध्ययन किससे सम्बन्धित है और आँकड़ों का प्रकार जिनकी आवश्यकता है?
2. अध्ययन क्यों किया जा रहा है?
3. वांछित आँकड़े कहाँ से मिलेंगे?
4. कहाँ या किस क्षेत्र में अध्ययन किया जायेगा?
5. कब या कितना समय अध्ययन में सम्मिलित होगा?
6. कितनी सामग्री या कितने केसों की आवश्यकता होगी?
7. चुनावों के किन आधारों का प्रयोग होगा?
8. आँकड़ा संकलन की कौन सी प्रविधि का चुनाव किया जायेगा?

इस तरह, निर्णय लेने में जिन विविध प्रश्नों पर विचार किया जाता है। जैसे क्या, कहाँ, कब, कितना, किस साधन से अध्ययन की योजना निर्धारित करते है।

न्यूयार्क यूनिवर्सिटी की फैकल्टी क्लास वेबसाईट (वॉट इज सोशल रिसर्च, चैप्टर 1: 9-10) में शोध प्रारूप और शोध प्रारूप बनाम पद्धति विषय पर विधिवत विचार व्यक्त किया गया है। उसे हम यहाँ प्रस्तुत कर रहे है।उसके अनुसार शोध प्रारूप को भवन निर्माण से सम्बन्धित एक उदाहरण के द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। भवन निर्माण करते समय सामाग्री का आर्डर देने या प्रोजेक्ट पूर्ण होने की तिथि निर्धारित करने का कोई औचित्य नहीं है। जब तक कि हमें यह ना मालूम हो कि किस प्रकार का भवन निर्मित होना है। पहला निर्णय यह करना है। कि क्या हमें अति ऊँचे कार्यालयी भवन की, या मशीनों के निर्माण के लिए एक फैक्टरी की, एक स्कूल, एक आवासीय भवन या एक बहुखण्डीय भवन की आवश्यकता है। जब तक यह नहीं तय हो जाता हम एक योजना का खाका तैयार नहीं कर सकते, कार्य योजना तैयार नहीं कर सकते या सामाग्री का आर्डर नहीं दे सकते है। इसी तरह से, सामाजिक अनुसन्धान को प्रारूप या अभिकल्प की आवश्यकता होती है या तथ्य संकलन के पूर्व या विश्लेषण शुरू करने के पूर्व एक संरचना की आवश्यकता होती है। एक शोध प्रारूप मात्र एक कार्य योजना (वर्क प्लान) नहीं है। यह प्रोजेक्ट को पूर्ण करने के लिए क्या करना है। कि कार्य योजना का विस्तृत विवरण है। शोध प्रारूप का प्रकार्य यह सुनिश्चित करना है कि प्राप्त साक्ष्य हमें प्रारम्भिक प्रश्नों के यथासम्भव सुस्पष्ट उत्तर देने में सक्षम बनाये।

कार्य योजना बनाने के पूर्व या सामग्री आर्डर करने के पूर्व भवन निर्माता या वास्तुविद् को प्रथमतः यह निर्धारित करना जरूरी है कि किस प्रकार के भवन की जरूरत है। इसका उपयोग क्या होगा और उसमें रहने वाले लोगों की क्या आवश्यकताएं है। कार्य योजना इससे निकलती है। इसी तरह से, सामाजिक अनुसन्धान में निदर्शन, तथ्य संकलन की पद्धति (उदाहरण के लिए प्रश्नावली, अवलोकन, दस्तावेज विश्लेषण) प्रश्नों के प्रारूप के मुद्दे सभी इस विषय के कि 'मुझे कौन से साक्ष्य इकट्ठे करने हैं', के सहायक या पूरक होते है।

गेराल्ड आर. लेस्ली (Gerald R. Leslie) का कहना है कि, **"शोध प्रारूप ब्लू प्रिन्ट है। जो परिवत्यों को पहचानता और तथ्यों को एकत्र करने तथा उनका विवरण देने के लिए की जाने वाली कार्य प्रणालियों को अभिव्यक्त करता है।"** शोध प्रारुप को अत्यन्त विस्तार से समझाते हुए सौमेन्द्र पटनायक (2006 : 31) ने लिखा है कि, "शोध प्रारुप एक प्रकार की रूपरेखा है।जिसे आपको शोध के वास्तविक क्रियान्वयन से पहले तैयार करना है। योजनाबद्ध रूप

से तैयार एक खाका होता है। जो उस रीति को बतलाता है। जिसमें आपने अपने शोध की कार्य योजना तैयार की है। आपके पास अपने शोध कार्य पर दो पहलुओं से विचार करने का विकल्प है। नामतः अनुभवजन्य पहलू और विश्लेषणपरक पहलू। ये दोनों ही पहलू एक साथ आपके मस्तिष्क में रहते हैं, जबकि व्यवहार में आपको अपना शोध कार्य दो चरणों में नियोजित करना है एक चरण सामग्री एकत्र करने का है और दूसरा चरण उस सामग्री का विश्लेषण करने का है। आपकी मनोगत सैद्धान्तिक उन्मुखता और अवधारणात्मक प्रतिदर्शताएँ आपको इस शोध सामग्री के स्वरूप को निर्धारित करने में मदद करती हैं जो आपको एकत्र करनी है और कुछ हद तक यह समझने में भी कि आपको उन्हें कैसे एकत्र करना है। तदोपरान्त, अपनी सामग्री का विश्लेषण करते समय फिर से आमतौर पर सामाजिक यथार्थ सम्बन्धी सैद्धान्तिक और अवधारणात्मक समझ के सहारे आपको अपने शोध परिणामों को स्पष्ट करने में और प्रस्तुत करने के वास्ते शोध सामग्रीको वर्गीकृत करने में और विन्यास विशेष को पहचानने में दिशानिर्देशन मिलता है।

यंग (Young) (1977: 131) का कहना है कि, **"जब एक सामान्य वैज्ञानिक मॉडल को विविध कार्यविधियों में परिणत किया जाता है तो शोध प्रारुप की उत्पत्ति होती है। शोध प्रारुप उपलब्ध समय, कर्म शक्ति एवं धन, तथ्यों की उपलब्धता उस सीमा तक जहाँ तक यह वांछित या सम्भव हो उन लोगों एवं सामाजिक संगठनों पर थोपना जो तथ्य उपलब्ध करायेंगे, के अनुरूप होना चाहिए।"**

ई.ए. सचमैन (E.A. Suchman 1954 :254) का कहना है। कि, **"एकल या 'सही' प्रारुप जैसा कुछ नही है शोध प्रारुप सामाजिक शोध में आने वाले बहुत से व्यावहारिक विचारों के कारण आदेशित समझौते का प्रतिनिधित्व करता है। साथ ही अलग-अलग कार्यकर्त्ता अलग-अलग प्रारुप अपनी पद्धतिशास्त्रीय एवं सैद्धान्तिक प्रतिस्थापनाओं के पक्ष में लेकर आते हैं एक शोध प्रारुप विचलन का अनुसरण किए बिना कोई उच्च विशिष्ट योजना नही है। अपितु सही दिशा में रखने के लिए मार्गदर्शक स्तम्भों की श्रेणी है।"** दूसरे शब्दों में, एक शोध प्रारुप काम चलाऊ होता है। अध्ययन जैसे-जैसे प्रगति करता है। नये पक्ष, नई दशाएं और तथ्यों में नयी सम्बन्धित कड़ियाँ प्रकाश में आती हैं और परिस्थितियों की माँग के अनुसार यह आवश्यक होता है। कि योजना परिवर्तित कर दी जाये। योजना का लचीला होना जरूरी होता है। लचीलेपन का अभाव सम्पूर्ण अध्ययन की उपयोगिता को समाप्त कर सकता है। (उद्धृत पी.वी. यंग 1977 :131)

12.4 शोध प्रारूप का उद्देश्य (Objective of Research Design)

मैनहाईम (Mannheim 1977 : 142) के अनुसार शोध प्रारुप के निम्नांकित पाँच उद्देश्य होते हैं-

1. अपनी उपकल्पना का समर्थन करने और वैकल्पिक उपकल्पनाओं का खण्डन करने हेतु पर्याप्त साक्ष्य इकठ्ठा करना।
2. एक ऐसा शोध करना जिसे शोध की विषयवस्तु और शोध कार्यविधि की दृष्टि से दोहराया जा सके।
3. परिवर्त्यों के मध्य सहसम्बन्धों को इस तरह से जाँचने में सक्षम होना जिससे सहसम्बन्ध ज्ञात हो सके।
4. एक पूर्ण विकसित शोध परियोजना की भावी योजनाओं को चलाने के लिए एक मार्ग दर्शी अध्ययन की आवश्यकता को दिखाना।
5. शोध सामग्रियों के चयन की उचित तकनीकों के चुनाव द्वारा समय और साधनों के अपव्यय को रोकने में सक्षम होना।

6. एक अन्य विद्वान ने शोध प्रारूप के निम्नांकित उद्देश्यों का उल्लेख किया है-

A. शोध विषय को परिभाषित, स्पष्ट एवं व्याख्या करना।

B. दूसरों को शोध क्षेत्र स्पष्ट करना।

C. शोध की सीमा एवं परिधि प्रदान करना।

D. शोध के सम्पूर्ण परिदृश्य को प्रदान करना।

E. तरीकों (modes) और परिणामों को बतलाना

F. समय और संसाधनों की सुनिश्चितता।

12.5 शोध प्रारूप के घटक अंग (Components of Research Design)

शोध प्रारुप के उद्देश्यों से यह स्पष्ट है कि, यह शोध की वह युक्तिपूर्ण योजना होती है। जिसके अन्तर्गत विविध परस्पर सम्बन्धित अंग होते हैं, जिनके द्वारा शोध सफलतापूर्वक सम्पादित होता है।

पी.वी. यंग (1977 :13) ने शोध प्रारुप के अन्तर्ग त निम्नांकित घटक अंगों का उल्लेख किया है। जो अन्तर्सम्बन्धित होते हैं तथा परस्पर बहिष्कृत नही होते हैं-

1. प्राप्त किये जाने वाले सूचनाओं के स्रोत, (Sources of information to be obtained)
2. अध्ययन की प्रकृति (Nature of the study)
3. अध्ययन के उद्देश्य (Objectives of the study)
4. अध्ययन का सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्श (Socio-cultural perspective of the study)
5. अध्ययन द्वारा समाहित भौगोलिक क्षेत्र (Geographical area covered by the study)
6. लगने वाले समय के काल का निर्धारण (Determination of the period of time to be covered)
7. अध्ययन के आयाम (Dimensions of the study)
8. आँकड़ा संकलन का आधार(Basis of data collection)
9. आंकड़ा संकलन हेतु प्रयोग की जाने वाली प्रविधियाँ। (Techniques to be used for data collection.)

उपरोक्त शोध प्रारूप के अन्तर्सम्बन्धित और परस्पर समावेषित अंगों की संक्षिप्त विवेचना यहाँ आवश्यक प्रतीत होती है।

1. **सूचना के स्रोत (Sources of Information)-** कोई भी शोध कार्य सूचना के अनेकों स्रोत पर निर्भर करता है। मोटे तौर पर सूचना के इन स्रोतों को हम दो भागों में रख सकते है। **पहला** प्राथमिक स्रोत और **दूसरा** द्वितीयक स्रोत।
    a. प्राथमिक स्रोत वे हैं जिनका शोधकर्ता पहली बार स्वयं प्रयोग कर रहा है। यानि शोधकर्ता ने अपने अध्ययन क्षेत्र में जाकर जिस तकनीक या उपकरण अथवा विधि का प्रयोग कर मौलिक तथ्य प्राप्त किया है। वह प्राथमिक तथ्य कहलाता है। वही दूसरों के द्वारा जो सूचना प्रकाशित या अप्रकाशित अथवा अन्य तरीकों से सर्व उपलब्ध हो, और जिसका उपयोग शोधकर्ता कर रहा हो वह द्वितीयक सूचना का स्रोत होता है।उल्लेखनीय है। कि बहुधा द्वितीयक सूचना का स्रोत एक समय में किसी शोधकर्ता का प्राथमिक सूचना स्रोत होता है।
    b. अर्थपूर्ण तथ्यों की खोज में लगे समाजशास्त्री उस प्रत्येक सूचना के स्रोत का उपयोग करने में हिचकिचाहट महसूस नहीं करते हैं जिनसे भी शोध कार्य में जरा भी प्रमाण या सहायता मिलने की संभावना होती है। सूचना के इन स्रोत को विधिक विद्वानों ने अलग-अलग प्रकारों में रखकर विश्लेषित किया है।

बैगले (1938: 202) ने सूचना के दो प्रमुख स्रोत का उल्लेख किया है- प्राथमिक स्रोत और द्वितीयक स्रोत।

पी. वी. यंग (1977: 136) का कहना है। कि सामान्यतः सूचना के स्रोत दो होते हैं- प्रलेखीय और क्षेत्रीय स्रोत। सूचना के प्रलेखीय (डॉक्यूमेन्टरी) स्रोत वे होते हैं, जो कि प्रकाशित और अप्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्टों, सांख्यिकी, पाण्डुलिपियों, पत्रों, डायरियों इत्यादि में निहित होते है। दूसरी तरफ, क्षेत्रीय स्रोत के अन्तर्गत वे जीवित लोग सम्मिलित होते हैं, जिन्हें उस विषय का पर्याप्त ज्ञान होता है या जिनका सामाजिक दशाओं और परिवर्तनों के लम्बे समय तक का घनिष्ठ सम्पर्क होता है। ये लोग ना केवल वर्तमान घटनाओं को विश्लेषित करने की स्थिति में होते हैं अपितु सामाजिक प्रक्रियाओं की अवलोकनीय प्रवृत्तियों और सार्थक मील का पत्थर को

बताने की स्थिति में भी होते हैं।

लुण्डबर्ग (1951 : 122) ने सूचनाओं के दो स्रोत का उल्लेख किया है- (1) ऐतिहासिक स्रोत, और (2) क्षेत्रीय स्रोत।

ऐतिहासिक स्रोत के अन्तर्गत प्रलेख, विविध कागजातों एवं शिलालेखों, भूर्तत्त्वीय स्तरों, उत्खनन से प्राप्त वस्तुओं को सम्मिलित करते हुए लुण्डबर्ग (1951:122) का कहना है कि, **"ऐतिहासिक स्रोत उन अभिलेखों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो भूतकाल की घटनाएं अपने पीछे छोड़ गई हैं, जिनकों की उन साधनों द्वारा सुरक्षित रखा गया है जो मनुष्य से परे हैं।"** उदाहरण के लिए हम उल्लेख कर सकते हैं उन विविध स्थानों का जहाँ पुरातत्त्वीय उत्खनन के पश्चात तत्कालीन समाज की विविध सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं, या विविध पुरातात्त्विक संग्रहालयों में सुरक्षित रखे दस्तावेजों (सरकारी एवं गैर सरकारी) का जिनका आज भी शोधकर्ता अपने शोध कार्यों में व्यापक रूप से प्रयोग करते है। क्षेत्रीय स्रोत के अन्तर्गत लुण्डबर्ग ने जीवित मनुष्यों से प्राप्त विशिष्ट सूचनाओं तथा क्रियाशील व्यवहारों के प्रत्यक्ष अवलोकन को सम्मिलित किया है। उपरोक्त समस्त विवरण स्पष्ट करता है कि सूचनाओं के कई स्रोत होते हैं, इन समस्त स्रोत को विद्वानों ने अपनी-अपनी तरह से विश्लेषित किया है। जो कुछ भी हो सूचनाओं के स्रोत जिन्हें प्रयोग में लाया जाता है। शोध प्रारूप का अंग होते है।

2. **अध्ययन की प्रकृति (Nature of the study)-** पी. वी. यंग (1977: 14) का कहना है कि, "अध्ययन की विशिष्ट प्रकृति का निर्धारण शुरू में और ठीक-ठीक कर लेना चाहिए, विशेषकर जब सीमित समय और कर्मशक्ति गलत शुरूआत को रोक रहे हों। शोध केस की प्रकृति पर ही अपने को केन्द्रित करते हुए उन्होंने मटिल्डा वाइट रिले (1963: 3&31) की पुस्तक में विविध विद्वानों के अध्ययनों के उल्लेख का उदाहरण देते हुए उन्होंने इस विषय को स्पष्ट किया है। क्या यह अध्ययन एक व्यक्ति से सम्बन्धित है। (जैसा शॉ की 'दी जैक रोलर' में है) कई लोगों से सम्बन्धित है। (विलियम वाईट की पुस्तक 'स्ट्रीट कार्नर सोसायटी' के विश्लेषण में डॉक, माईक और डैनी) या क्या अध्ययन किसी छोटे समूह पर संकेन्द्रित है। जैसा कि पॉल हैरे एवं अन्य के अध्ययन 'स्माल ग्रुप' या बहुत अधिक केसों पर संकेन्द्रित है। जैसा कि यौन व्यवहार सम्बन्धित किन्से का अध्ययन। इस अनुभव के साथ की प्रत्येक शोध अध्ययन जटिल होता है। उसकी विशिष्ट प्रकृति का यथाशीघ्र निर्धारण कर लेना चाहिए।
3. **शोध अध्ययन का उद्देश्य (Objective of the research study)-** अध्ययन के उद्देश्यों का निर्धारण शोध प्रारूप का महत्वपूर्ण अंग है। अध्ययन की प्रकृति और प्राप्त किये जाने वाले लक्ष्यों के अनुसार उद्देश्य भिन्न-भिन्न होते है। कुछ शोध अध्ययनों का उद्देश्य विवरणात्मक तथ्य, या व्याख्यात्मक तथ्य या तथ्य जिनसे सैद्धान्तिक रचना की व्युत्पत्ति हो, या तथ्य जो प्रशासकीय परिवर्तन या तुलना को बढ़ावा दे, को इकट्ठा करना होता है। (पी. वी. यंग यंग, ;1977: 14) अध्ययन का जो भी उद्देश्य हो अपने शोध की प्रकृति के अनुरूप शोध कार्य की तैय्यारी आवश्यक है। शोध उद्देश्य के अनुरूप उपकल्पना का निर्माण और उसके परीक्षण की तैयारी या शोध प्रश्नों का निर्माण किया जाता है।
4. **सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थिति (Socio-Cultural Situation)-** क्षेत्रीय अध्ययनों में उत्तरदाताओं की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थिति को जानना आवश्यक होता है। हम सभी जानते हैं कि स्थानीय आदर्श भिन्न-भिन्न होते है। इनमें इतनी ज्यादा भिन्नत सम्भव है। जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते है। व्यवहार प्रतिरूपों को समझने के लिए स्थानीय आदर्शों को जानना जरूरी है। पी.वी. यंग (1977: 15) ने इस सन्दर्भ में उचित ही लिखा है। कि "एक व्यक्ति का निवास स्थान (प्राकृतिक वास) उसके जीवन के एक भाग से इतना घनिष्ठ होता है। कि उसकी उपेक्षा करने का मतलब शून्य में अध्ययन करना है।" उनका यह भी सुझाव महत्त्वपूर्ण है कि, "प्रत्येक सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्र का अध्ययन उसके प्राकृतिक और भौगोलिक पक्ष के सन्दर्भ में भी किया जाना चाहिए।" पी. वी. यंग, (1977: 16)

5. **सामाजिक-कालिक सन्दर्भ (Socio-Temporal Context)-** यह निर्विवाद सत्य है कि किसी व्यक्ति पर, समुदाय पर, समाज पर ऐतिहासिक काल विशेष का प्रभाव व्यापक रूप से पड़ता है। किसी देश के कुछ निश्चित ऐतिहासिक काल को ही यहां सामाजिक-कालिक सन्दर्भ शब्द से सम्बोधित किया जा रहा है। कई बार भारतीय अध्ययनों में औपनिवेशिक काल के प्रभावों का उल्लेख इसी का उदाहरण माना जा सकता है। अण्डमान-निकोबार द्वीप समूहों में बन्दी उपनिवेश काल या भारतवर्ष में वैदिक काल, मुगल काल इत्यादि कुछ विशिष्ट ऐतिहासिक कालों का समाज पर प्रभाव से हम सभी परिचित है। इसलिए व्यक्ति को उसके सामाजिक-कालिक सन्दर्भ यानि समय और स्थान के ऐतिहासिक विन्यास में देखा जाना चाहिए। पी. वी. यंग, (P. V. Young 1977: 16)

6. **अध्ययन के आयाम और निदर्शन कार्यविधि (Study Dimensions and Sampling Procedure)**- सामाजिक शोध में अक्सर यह सम्भव नहीं होता है। कि सम्पूर्ण समग्र से प्राथमिक तथ्य संकलन का कार्य किया जाये। ऐसी परिस्थिति में समग ्र की कुछ इकाईयों का वैज्ञानिक आधार पर चयन कर लिया जाता है और तथ्य संकलन की उपयुक्त विधि के द्वारा उनसे प्राथमिक तथ्य इकट्ठे कर लिये जाते है। ये कुछ चुनी हुई इकाईयां ही निदर्शन कहलाती है।अच्छे निदर्शन को सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधित्व करना चाहिए ताकि प्राप्त सूचनायें विश्वसनीय हों तथा सम्पूर्ण समग्र का प्रतिनिधित्व कर सकें (यद्यपि निदर्शन के कुछ प्रकारों में इसकी कुछ कम संभावना होती है)।

इकाईयों का चयन निष्पक्ष रूप से पूर्वाग्रह रहित होकर करना चाहिए। सम्पूर्ण समूह जिसमें से निदर्शन लिया जाता है। 'पापुलेशन', 'यूनिवर्स' (समग्र) या 'सप्लाई' के नाम से जाना जाता है। (पी.वी. यंग 1977: 325)

निदर्शन के कई प्रकार होते है। मोटे तौर पर निदर्शन को दो प्रकारों- संभावनात्मक और असंभावनात्मक में रखा जाता है। जब समग्र की प्रत्येक इकाई के चुने जाने की समान सम्भावना हो तो उसे संभावनात्मक निदर्शन कहते हैं और यदि ऐसी समान संभावना ना हो तो उसे असंभावनात्मक निदर्शन कहते है।

संभावनात्मक और असंभावनात्मक निदर्शन के अन्तर्ग त आने वाले विविध प्रकारों को निम्नवत् प्रस्तुत किया जा सकता है-

निदर्शन

संभावनात्मक निदर्शन	असंभावनात्मक निदर्शन
(क) दैव निदर्शन	(क) सुविधानुसार निदर्शन (या देखा और साक्षात्कार लिया निदर्शन)
(ख) क्रमबद्ध दैव निदर्शन	(ख) सोद्देशपूर्ण निदर्शन (नियत मात्रा)
(ग) स्तरीत दैव निदर्शन	(ग) कोटा निदर्शन
(घ) समूह दैव निदर्शन	(घ) स्नोबाल निदर्शन
	(ङ) स्वनिर्णय निदर्शन

निदर्शन, इसके प्रकार, निदर्शन आकार, गुण एवं सीमाओं पर विस्तृत चर्चा अन्यत्र अध्याय में की गई है। यहाँ यह उल्लेखनीय है। कि शोध प्रारूप को बनाते समय निदर्शन तथा उसके आकार पर उपलब्ध समय और साधनों की सीमाओं के अन्तर्ग त व्यापक सोच-विचार किया जाता है। अध्ययन के उद्देश्यों के अनुसार तथा समग्र की संख्या तथा विशेषताओं के अनुसार निदर्शन का प्रकार तथा आकार अलग-अलग होता है। उत्तम एवं विश्वसनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए यथेष्ट एवं उत्तम निदर्शन का होना जरूरी होता है।

सामाजिक शोध कार्यों में सबसे जटिल प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि निदर्शन का आकार क्या होगा? कितने लोगों को उत्तरदाताओं के रूप में चयनित किया जायेगा? सम्पूर्ण समग्र का अध्ययन अक्सर समय और साधनों की

सीमाओं के चलते सम्भव नहीं होता है। समुचित निदर्शन के निर्धारण की समस्या एक जटिल समस्या है। यद्यपि कई विद्वानों ने इस सन्दर्भ में अपने-अपने सुझावों को दिया है। तथा सांख्यिकीविदों ने तो इसका सूत्र भी बना रखा है। परन्तु इसके बावजूद भी समस्या किसी न किसी रूप में बनी ही रहती है। **पी. वी. यंग** (1977: 17) यह मानती हैं कि, **"एक परिपक्व शोधकर्ता द्वारा भी इस प्रश्न के उत्तर को देना कठिन है। कि कितने केसों की जरूरत है।"**

पी. वी. यंग (1977:17) ने अपनी पुस्तक में सांख्यिकीविद मारग्रेट हगुड़ (1953) द्वारा सुझाये निदर्शन के आधारों का उल्लेख किया है। हगुड़ (1953: 272) ने निदर्शन चयन के निम्नांकित सुझाव दिए हैं-

1. निदर्शन को समग्र का प्रतिनिधित्व करना चाहिए- अर्थात् उसे पूर्वाग्रह रहित होना चाहिए
2. विश्वसनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए निदर्शन पर्याप्त आकार का होना चाहिए (अर्थात् दोष की विशिष्ट सीमा तक जैसे मापा जाय)
3. निदर्शन इस तरह से संरचित किया जाये कि कुशल हो (अर्थात वैकल्पिक प्रारूप की तुलना में।)

तथ्य संकलन के लिए प्रयुक्त तकनीक- शोध प्रारूप का एक महत्वपूर्ण अंग तथ्य संकलन की तकनीक है। शोध कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व ही इस महत्वपूर्ण विषय पर शोध की प्रकृति और उत्तरदाताओं की विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य में व्यापक सोच-विचार के पश्चात् यह निर्णय लिया जाता है। कि प्राथमिक तथ्य संकलन का कार्य किस प्रविधि के द्वारा किया जायेगा। उल्लेखनीय है कि तथ्य संकलन की विविध प्रविधियां हैं- जैसे अवलोकन, साक्षात्कार, प्रश्नावली, अनुसूची, वैयक्तिक अध्ययन (केस स्टडी) इत्यादि। इन सभी प्रविधियों की अपनी-अपनी विशेषताएँ तथा सीमाएँ है। तथ्य संकलन की सही तकनीक का प्रयोग शोध की गुणवत्ता, विश्वसनीयता तथा वैज्ञानिकता निर्धारित करता है। उल्लेखनीय है कि इन प्रविधियों का प्रयोग प्रत्येक समाज एवं उत्तरदाताओं पर नहीं किया जा सकता है।

12.6 शोध प्रारूप का महत्व (Importance of Research Design)

उपरोक्त विस्तृत व्याख्या से शोध प्रारूप के महत्व का स्पष्ट अनुमान हो जाता है। ब्लैक और चैम्पियन (1976:76-77) के शब्दों में कहा जाये तो-

1. शोध प्रारुप से शोध कार्य को चलाने के लिए एक रूप रेखा तैयार हो जाती है।
2. शोध प्रारूप से शोध की सीमा और कार्य क्षेत्र परिभाषित होता है।
3. शोध प्रारूप से शोधकर्ता को शोध को आगे बढ़ाने वाली प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का पूर्वानुमान लगाने का अवसर प्राप्त होता है।

12.7 शोध प्रारूप बनाम तथ्य संकलन की पद्धति (Research Design versus Method of Data Collection)

शोध प्रारूप और तथ्य संकलन की पद्धतियों के सन्दर्भ में उल्लेखनीय है। कि शोध प्रारूप आँकड़े या तथ्य इकट्ठे किये जाने वाली पद्धति से अलग होता है। "यह देखना असामान्य नहीं है। कि शोध प्रारूप को तथ्य संकलन के तरीके के रूप में देखा जाता है। बजाये इसके कि जाँच की तार्किक संरचना के।" (एन.वाई.यू. 2010: 1: 9)

शोध प्रारूप और तथ्य संकलन की पद्धति में समानता का भ्रम होने का कारण कुछ विशेष प्रारूपों को किसी विशेष तथ्य संकलन की पद्धति से जोड़कर देखना है। उदाहरण के लिए वैयक्तिक अध्ययनों को सहभागी अवलोकन और क्रास सेक्शनल सर्वे को प्रश्नावलियों से समीकृत किया जाता है। वास्तविकता यह है। कि किसी भी प्रारूप के लिए तथ्य किसी भी तथ्य संकलन की पद्धति से इकट्ठा किया जा सकता है। विश्वसनीय तथ्य महत्वपूर्ण होते हैं न कि उन्हें इकट्ठा करने का तरीका। तथ्य कैसे इकट्ठा किया गया, यह प्रारूप की तार्किकता के लिए अप्रासंगिक या असम्बद्ध है।

न्यूयार्क यूनिवर्सिटी की फैकल्टी क्लास वेबसाइट (पृ. 10) में 'शोध प्रारूप क्या है?' अध्याय के अन्तर्ग त शोध प्रारूप और तथ्य संकलन की पद्धतियों में सम्बन्ध को इस तरह दर्शाया गया-

शोध प्रारुप और विशिष्ट तथ्य संकलन की पद्धतियों के मध्य सम्बन्ध

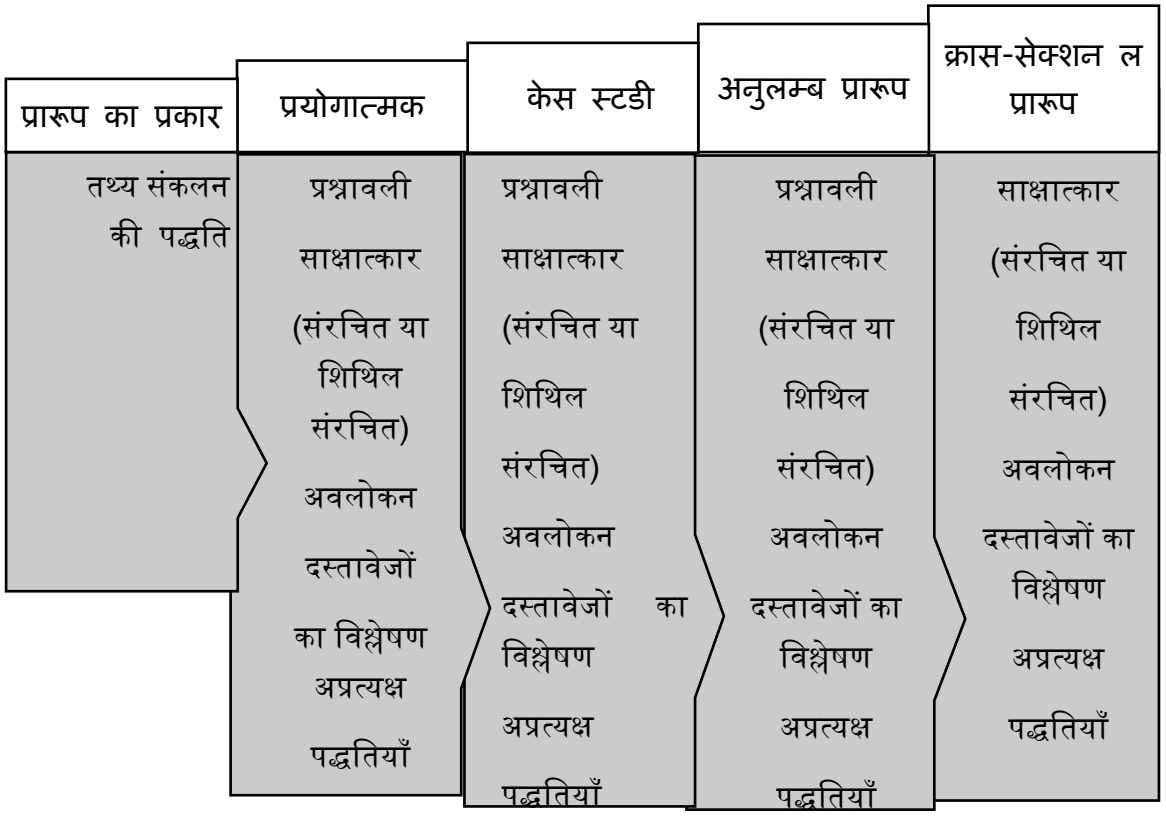

इसी तरह से प्रारुपों को अक्सर गुणात्मक और गणनात्मक शोध पद्धतियों से जोड़ा जाता है। सामाजिक सर्वेक्षण और प्रयोगों को अक्सर गुणात्मक शोध के मुख्य उदाहरणों के रुप में देखा जाता है। और उनका मूल्यांकन सांख्यिकीय, गुणात्मक शोध पद्धतियों और विश्लेषण की क्षमता और कमजोरियों के विरुद्ध किया जाता है। दूसरी तरफ वैयक्तिक अध्ययन को अक्सर गुणात्मक शोध के मुख्य उदाहरण के रूप में देखा जाता है- जोकि तथ्यों के विवेचनात्मक उपागम का प्रयोग करता है।'चीजों' का अध्ययन उनके सन्दर्भ के अन्तर्गत करता है। और लोग अपनी परिस्थितियों का जो वस्तुगत अर्थ लगाते हैं को विचार करता है। किसी विशिष्ट शोध प्रारुप को गुणात्मक या गणनात्मक पद्धति से जोड़ना भ्रान्तिपूर्ण या गलत है। वैयक्तिक अध्ययन प्रारुप की एक सम्मानित हस्ती **यिन (1993)** ने वैयक्तिक अध्ययन के लिए गुणात्मक या गणनात्मक विभेद की अप्रासंगिकता पर जोर दिया है। उनका कहना है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति तथ्य संकलन के किसी विशिष्ट स्वरूप को अन्तर्निहित नहीं करती है। वह गुणात्मक या गणनात्मक कोई भी हो सकती है। (1993:32) न्यूयार्क यूनिवर्सिटी की फैकल्टी क्लास वेबसाइट (पृ. 11.12) में 'शोध प्रारूप क्या है'? अध्याय के अन्तर्गत व्याख्या में संशयवादी उपागम को अपनाने की आवश्यकता का उल्लेख करते हुए लिखा गया है कि, "शोध प्रारुप की आवश्यकता शोध के संशयवादी उपागम के तने और इस दृष्टिकोण से कि वैज्ञानिक ज्ञान हमेशा अस्थायी होता है। से निकलती है। शोध प्रारुप का उद्देश्य शोध के बहु साक्ष्यों की अस्पष्टता को कम करना होता है।

हम हमेशा कुछ साक्ष्यों को लगभग सभी सिद्धान्तों के साथ निरन्तर पा सकते है। जबकि हमें साक्ष्यों के प्रति संशयपूर्ण होना चाहिए और बजाये उन साक्ष्यों को प्राप्त करना जो हमारे सिद्धान्त के साथ निरन्तर उपलब्ध हों। हमें ऐसे साक्ष्यों को प्राप्त करना चाहिए जो सिद्धान्त के अकाट्य परीक्षण को प्रदान करते हों।

शोध प्रारुप निर्मित करते समय यह आवश्यक है। कि हमें आवश्यक साक्ष्यों के प्रकारों को चिन्हित कर लेना चाहिए जिससे कि शोध प्रश्नों का उत्तर विश्वासोंत्पादक हो। इसका तात्पर्य यह है कि हमें मात्र उन साक्ष्यों को इकट्ठा नहीं करना चाहिए जो किसी विशिष्ट सिद्धान्त या व्याख्या के साथ लगातार बने हुए हों। शोध इस प्रकार से संरचित किया जाना चाहिए कि उससे साक्ष्य वैकल्पिक प्रतिद्वन्दी व्याख्या दें और हमें यह चिन्हित करने में सक्षम बनाये कि कौन सी प्रतिस्पर्द्धी व्याख्या आनुभविक रूप से ज्यादा अकाट्य है। इसका यह भी तात्पर्य है। कि हमें अपने प्रिय सिद्धान्त के समर्थन वाले साक्ष्यों को ही मात्र नहीं देखना चाहिए। हमें उन साक्ष्यों को भी देखना चाहिए जिनमें यह क्षमता हो कि वे हमारी वरीयतापूर्ण व्याख्या को नकार सकें।

12.8 शोध प्रारूप के प्रकार (Types of Research Design)

शोध प्रारुपों के कई प्रकार होते है।विविध विद्वानों ने शोध प्रारुपों के कुछ तो एक समान और कुछ अलग प्रकार के प्रकारों का उल्लेख किया है। उदाहरण के लिए सुसन कैरोल (2010:1) ने शोध प्रारुप के आठ प्रकारों का उल्लेख किया है। ये हैं-

1. ऐतिहासिक शोध प्रारुप (Historical Research Design)
2. वैयक्तिक और क्षेत्र शोध प्रारुप (Case and Field Research Design)
3. विवरणात्मक या सर्वेक्षण शोध प्रारुप (Descriptive or Survey Research Design)
4. सह सम्बन्धात्मक या प्रत्याशित शोध प्रारुप (Correlational or Prospective Research Design)
5. कारणात्मक, तुलनात्मक या एक्स पोस्ट फैक्टों शोध प्रारुप (Causal Comparative or Ex-Post Facto Research Design)
6. विकासात्मक या समय श्रेणी शोध प्रारुप (Developmental or Time Series Research Design)
7. प्रयोगात्मक शोध प्रारुप (Experimental Research Design)
8. अर्द्ध प्रयोगात्मक शोध प्रारुप (Quasi Experimental Research Design) न्यूयार्क यूनिवर्सिटी की फैकल्टी क्लास वेबसाइट (2010) में 'शोध प्रारूप क्या है ?' अध्याय के अन्तर्गत चार प्रकार के शोध प्रारुपों का उल्लेख किया गया है-

1. प्रयोगात्मक (Experimental)
2. वैयक्तिक अध्ययन (Case Study)
3. अनुलम्ब प्रारूप (Longitudinal)
4. अनुप्रस्थ काट प्रारुप (Cross-Sectional Design)

कुछ विद्वानों ने अनेकों प्रकारों का उल्लेख किया है। जो कुछ भी हो मोटे तौर पर शोध प्रारुपों को चार महत्वपूर्ण प्रकारों में विभक्त किया जा सकता है-

1. विवरणात्मक प्रारुप या वर्णनात्मक शोध प्रारुप।
2. व्याख्यात्मक प्रारुप
3. अनवेषणात्मक प्रारुप, और
4. प्रयोगात्मक प्रारुप

किसी विशिष्ट प्रारूप का चयन शोध की प्रकृति पर मुख्यतः निर्भर करता है। कौन सी सूचना चाहिए, कितनी विश्वसनीय सूचना चाहिए, प्रारूप की उपयुक्तता क्या है।लागत कितनी आयेगी, इत्यादि कारकों पर भी प्रारूप चयन निर्भर करता है।

1. **विवरणात्मक या वर्णनात्मक शोध प्रारूप (Descriptive or Narrative Research Design)-** जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है। इस प्रारुप में अध्ययन विषय़ के सम्बन्ध में प्राप्त सभी प्राथमिक तथ्यों का यथावत् विवरण प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रारुप का मुख्य उद्देश्य अध्ययन की जा रही इकाई, संस्था, घटना, समुदाय या समाज इत्यादि से सम्बन्धित पक्षों का हूबहू वर्णन किया जाता है। यह प्रारूप वैसे तो अत्यन्त सरल लगता है। किन्तु यह दृढ़ एवं अलचीला होता है। इसमें विशेष सावधानी अपेक्षित होती है। इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए कि निदर्शन पर्याप्त एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण हो। प्राथमिक तथ्य संकलन की प्रविधि सटीक हो तथा प्राथमिक तथ्य संकलन में किसी भी प्रकार से पूर्वाग ्रह या मिथ्या झुकाव न आने पाये। अध्ययन समस्या के विषय में व्यापक तथ्यों को इकठ्ठा किया जाता है।इसलिए ऐसी सतर्कता बरतनी चाहिए कि अनुपयोगी एवं अनावश्यक तथ्यों का संकलन न होने पाये। अध्ययन पूर्ण एवं यथार्थ हो और अध्ययन समस्या का वास्तविक चित्रण हो इसके लिए विश्वसनीय तथ्यों का होना नितान्त आवश्यक है।

वर्णनात्मक शोध का उद्देश्य मात्र अध्ययन समस्या का विवरण प्रस्तुत करना होता है। इसमें नवीन तथ्यों की खोज या कार्य-कारण व्याख्या पर जोर नहीं दिया जाता है। इस प्रारुप में किसी प्रकार करके प्रयोग भी नही किए जाते है।इसमें अधिकांशतः सम्भावित निदर्शन का ही प्रयोग किया जाता है। इसमें तथ्यों के विश्लेषण में क्लिष्ट सांख्यिकीय विधियों का भी प्रयोग सामान्यतः नहीं किया जाता है।

इसमें शोध विषय के बारे में शोधकर्ता को अपेक्षाकृत यथेष्ट जानकारी रहती है। इसलिए वह शोध संचालन सम्बन्धी निर्णयों को पहले ही निर्धारित कर लेता है। वर्णनात्मक शोध प्रारूप के अलग से कोई चरण नही होते है।सामान्यतः सामाजिक अनुसंधान के जो चरण हैं, उन्हीं का इसमें पालन किया जाता है। सम्पूर्ण एकत्रित प्राथमिक सामग्रीके आधार पर ही अध्ययन सम्बन्धित निष्कर्ष निकाले जाते हैं एवं आवश्यकतानुसार सामान्यीकरण प्रस्तुत किये जाने का प्रयास किया जाता है।

2. **व्याख्यात्मक शोध प्रारूप (Explanatory Research Design)-** शोध समस्या की कारण सहित व्याख्या करने वाला प्रारूप व्याख्यात्मक शोध प्रारुप कहलाता है। व्याख्यात्मक शोध प्रारुप की प्रकृति प्राकृतिक विज्ञानों की प्रकृति के समान ही होती है।जिसमें किसी भी वस्तु, घटना या परिस्थिति का विश्लेषण ठोस कारणों के आधार पर किया जाता है। सामाजिक तथ्यों की कार्य-कारण व्याख्या यह प्रारूप करता है। इस प्रारुप में विविध उपकल्पनाओं का परीक्षण किया जाता है। तथा परिवर्त्यों में सम्बन्ध और सहसम्बन्ध ढूढने का प्रयास किया जाता है।
3. **अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप (Exploratory Research Design)-** जब सामाजिक अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य अध्ययन समस्या के सम्बन्ध में नवीन तथ्यों को उद्घाटित करना हो तो इस प्रारुप का प्रयोग किया जाता है। इसमें अध्ययन समस्या के वास्तविक कारकों एवं तथ्यों का पता नही होता है। अध्ययन के द्वारा उनका पता लगाया जाता है। चूँकि इसमें कुछ 'नया' खोजा जाता है। इसलिए इसे अन्वेषणात्मक शोध प्रारुप कहा जाता है। इस प्रारूप द्वारा सिद्धान्त का निर्माण होता है।

कभी-कभी अन्वेषणात्मक और व्याख्यात्मक शोध प्रारुप को एक ही मान लिया जाता है।कई विद्वानों ने तो व्याख्यात्मक शोध प्रारुप का उल्लेख तक नहीं किया है। सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाये तो यह कहा जा सकता है। कि जिस सामाजिक शोध में कार्य- कारण सम्बन्धों पर बल देने की कोशिश की जाती है, वह व्याख्यात्मक शोध प्रारुप के अन्तर्ग त आता है। और जिसमें नवीन तथ्यों या कारणों द्वारा विषय को स्पष्ट किया जाता है, उसे अन्वेषणात्मक शोध प्रारुप के अन्तर्ग त रखते है।इसमें शोधकर्ता को अध्ययन विषय के बारे में सूचना नही रहती है। द्वितीयक स्रोतों के द्वारा भी वह उसके विषय में सीमित ज्ञान ही प्राप्त कर पाता है। अज्ञात तथ्यों की खोज करने के कारण या विषय के सम्बन्ध में अपूर्ण ज्ञान रखने के कारण इस प्रकार के शोध प्रारुप में सामान्यतः उपकल्पनाएँ निर्मित नहीं की जाती है।उपकल्पनाओं के स्थान पर शोध प्रश्नों का निर्माण किया जाता है। और उन्हीं शोध प्रश्नों के उत्तरों की खोज द्वारा शोध कार्य सम्पन्न किया जाता है।

विलियम जिकमण्ड (1988) ने अन्वेषणात्मक शोध के तीन उद्देश्यों का वर्णन किया है।

a. परिस्थिति का निदान करना

b. विकल्पों को छाँटना तथा,

c. नये विचारों की खोज करना।

सरन्ताकोस (1988) के अनुसार सम्भाव्यता, सुपरिचितिकरण, नवीन विचार, समस्या के निरुपण तथा परिचालनीकरण के कारण अन्वेषणात्मक शोध प्रारुप को अपनाया जाता है।वास्तव में जहोदा तथा अन्य (1959) ने ठीक ही कहा है। कि, **"अन्वेषणात्मक अनुसन्धान अनुभव को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। जो कि अधिक निश्चित खोज के लिए उपयुक्त उपकल्पना के निर्माण में सहायक हो।"**

सामाजिक समस्या के अन्तर्निहित कारणों को खोजने के कारण कारण इस प्रारुप में लचीलापन होना जरुरी है। इसमें तथ्यों की प्रकृति अधिकांशतः ग ुणात्मक होती है।इसलिए अधिक से अधिक तथ्यों एवं सूचनाओं को प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। तथ्य संकलन की प्रविधि इसकी प्रकृति के अनुरूप ही होनी चाहिए। समय और साधन का भी ध्यान रखना चाहिए।

4. **प्रयोगात्मक शोध प्रारुप (Experimental Research Design)-** ऐसा शोध प्रारुप जिसमें अध्ययन समस्या के विश्लेषण हेतु किसी न किसी प्रकार का 'प्रयोग' समाहित हो, प्रयोगात्मक शोध प्रारुप कहलाता है। यह प्रारुप नियंत्रित स्थिति में जैसे कि प्रयोगशालाओं में ज्यादा उपयुक्त होता है। सामाजिक अध्ययनों में सामान्यतः प्रयोगशालाओं का प्रयोग नही होता है। उनमें नियंत्रित समूह और अनियंत्रित समूहों के आधार पर प्रयोग किये जाते है।इस प्रकार के प्रारुप का प्रयोग ग ्रामीण समाजशास्त्र और विशेषकर कृषि सम्बन्धी अध्ययनों में ज्यादा होता है। वैसे औद्योगिक समाजशास्त्र में वेस्टन इलेक्ट्रिक कम्पनी के हाथोर्न वर्क्स में ह ुए प्रयोग काफी चर्चित रहे है।ग ्रामीण प्रयोगात्मक अध्ययनों में प्रयोगों के आधार पर यह पता लगाया जाता है। कि संचार माध्यमों का क्या प्रभाव पड़ रहा है।योजनाओं का लाभ लेने वालों और न लेने वालों की सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति में क्या अन्तर आया है, इत्यादि इत्यादि। इसी प्रकार के बह ुत से विषयों याप्रभावों को इस प्रारूप के द्वारा स्पष्ट करने की कोशिश की जाती है। परिवर्त्यों के बीच कारणात्मक सम्बन्धों का परीक्षण इसके द्वारा प्रामाणिक तरीके से हो पाता है।

12.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिये

1. सामाजिक शोध में एक व्यक्ति का निवास स्थान ..... उसके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा होता है। (भौतिक या प्राकृतिक)
2. सामाजिक-कालिक संदर्भ में, किसी व्यक्ति या समाज पर ऐतिहासिक काल का प्रभाव ..... होता है। (स्थायी या व्यापक)
3. शोध प्रारूप का उद्देश्य शोध के ..... को स्पष्ट करना होता है। (सवालों या उद्देश्य)

निम्नलिखित में से सत्य - असत्य कथन का चयन किजिये

1. शोध प्रारूप के द्वारा शोध कार्य को चलाने के लिए रूपरेखा तैयार की जाती है।
2. संभावनात्मक निदर्शन में समग्र की प्रत्येक इकाई को चुने जाने की समान संभावना होती है।

12.10 सारांश (Summary)

उपरोक्त समस्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है। कि शोध प्रारूप सामाजिक अनुसन्धान की एक वृहत् योजना, एक संरचना तथा प्रणाली है। जो शोध सम्बन्धी प्रश्नों का न केवल उत्तर देती है। अपितु प्रसरणों का नियन्त्रण भी करती है। यह शोध के एक महत्वपूर्ण अंश की तार्किक एवं सुव्यवस्थित योजना तथा निर्देशन है। यह किसी जाँच

की संरचना होती है। तथा यह तार्किक विषय होता है। सम्पूर्ण शोध प्रक्रिया में प्रश्नों के गठन से लेकर, निदर्शन प्रक्रिया, तथ्य संकलन की प्रविधियों के चयन तथा प्राथमिक तथ्यों के संकलन और तत्पश्चात् विश्लेषण में शोध प्रारूप की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

शोध प्रारूप का उद्देश्य शोध को स्पष्ट एवं निश्चित दिशा में निर्देशित करते ह ुए क्रियान्वित करना होता है। यह न केवल शोध प्रश्नों के सटीक उत्तर देता अपितु अध्ययन समस्या से सम्बन्धित आनुभविक प्रमाणों को वैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा उपलब्ध भी कराता है।शोध प्रारूप के अनेकों प्रकारों का विद्वानों ने उल्लेख किया है। चार प्रमुख प्रकारों यथा- विवरणात्मक या वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक, अन्वेषणात्मक और प्रयोगात्मक का संक्षिप्त विश्लेषण यह स्पष्ट करता है। कि विवरणात्मक शोध प्रारूप का मुख्य उद्देश्य अध्ययन विषय का पूर्ण एवं यथार्थ विवरण प्रस्तुत करना होता है। व्याख्यात्मक प्रारूप में कार्य-कारण सम्बन्ध पर बल दिया जाता है।वहीं अन्वेषणात्मक शोध प्रारूप का मुख्य उद्देश्य किसी सामाजिक घटना यापरिस्थिति के अन्तर्निहित कारणों को ढूढना होता है। इसमें अध्ययन समस्या के अन्जान पक्षों को उद्घाटित किया जाता है। सिद्धान्त निर्माण में यह प्रारूप सहायक होता है। सामान्यतः इस प्रकार के प्रारूप में उपकल्पना का निर्माण न करके शोध प्रश्नों को रखा जाता है। प्रयोगात्मक शोध प्रारूप में नियन्त्रित परिस्थिति में अवलोकन करते ह ुए मानवीय सम्बन्धों का क्रमबद्ध अध्ययन किया जाता है। इसमें विषय की आवश्यकतानुसार स्वतन्त्र और आश्रित चरों का परीक्षण भी किया जाता है। इसके लिए मानवीय हस्तक्षेप द्वारा प्रभाव स्थितियों को निर्मित किया जाता है। तत्पश्चात् आश्रित चरों पर इसके प्रभाव का अवलोकन किया जाता है।

शोध प्रारूप की केन्द्रीय भूमिका तथ्यों से गलत कारणानात्मक निष्कर्षों को निकालने की सम्भावना को न्यूनतम करना होता है। इसके द्वारा यह सुनिश्चित होता है। कि जो साक्ष्य इकट्ठे किये गये हैं वे प्रश्नों के उत्तर देने में या सिद्धान्तों के परीक्षण में यथासम्भव स्पष्ट होंगे।

12.11 शब्दावली (Glossary)

शोध प्रारूपरू शोध प्रारूप प्रस्तावित शोध की ऐसी रूपरेखा होती है।जिसे वास्तविक शोध कार्य को प्रारम्भ करने के पूर्व व्यापक रूप से सोच-समझ के पश्चात् तैयार किया जाता है।

12.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिये-

1. प्राकृतिक 2. व्यापक 3. उद्देश्य

निम्नलिखित में से सत्य - असत्य कथन का चयन किजिये-

1. सत्य 2. सत्य

12.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. मुकर्जी, पी.एन. (2000) मैथडोलॉजी इन सोशल रिसर्च: डिलेमाज् एण्ड पर्सपैक्टिव्स, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

2. सारन्ताकोस, एस. (1988) सोशल रिसर्च, मैकमिलन, लन्दन

3. यंग, पी.वी. (1977) साईन्टिफिक सोशल सर्वेस एण्ड रिसर्च, प्रेन्टिस हाल, नई दिल्ली

4. ऽ डाबी, जॉन टी. (1954) एन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल रिसर्च (सम्पादित), द स्टेकवेल कम्पनी, लन्दन

5. करलिंगर, एफ.एन. (1964) फाउण्डेशन ऑफ विह ैवियरल रिसर्च, हाल्ट रिनेहार्ट एण्ड विन्सटन, न्यूयार्क

6. ब्लैक जेम्स ए. एण्ड डी.जे. चैम्पियन (1976) मैथेड्स एण्ड ईश्यूज इन सोशल रिसर्च, जॉन विले, न्यूयार्क

7. यिन, आर.के. (1991) केस स्टडी रिसर्च: डिजाइन एण्ड मैथड, सेज पब्लिकेशन्स, न्यूवरी पार्क, सी.ए.

8. वेबसाइट: न्यूयार्क यूनिवर्सिटी फैकल्टी क्लास वेबसाइट्स ूूूूण्दलनण्मकनध्बसंेेमेध् इाहध्उमजीवकेध्005847ध्बींचजमत1 ;ूीिंज पे ेवबपंस तमेमंतबीघ्द्धध्चकण्

12.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

12.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शोध प्रारूप किसे कहते है अर्थ व परिभाषाओं सहित विस्तार से चर्चा किजिये?
2. शोध प्रारूप के विभिन्न प्रकारों की विस्तार से व्याख्या कीजिए?
3. शोध प्रारूप के महत्वों पर विस्तार से चर्चा किजिये?

इकाई 13. शोध अभिकल्प के प्रकार

(Types of Research Design)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)
13.2 उद्देश्य (Objectives)
13.3 अभिकल्प के प्रकार (Types of Designs)
13.4 समूहअन्तर्गत अभिकल्प (Within-Group Design)
13.5 समूहान्तर अभिकल्प (Inter-Group Design)
13.6 कारकीय अभिकल्प (Factorial Design)
13.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
13.8 सारांश (Summary)
13.9 शब्दावली (Glossary)
13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)
13.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
13.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
13.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

विभिन्न विद्वानों ने शोध का वर्गीकरण अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर किया है, जिन्हें दो प्रकारों में बाँटा गया है - प्रयोगात्मक शोध तथा अप्रयोगात्मक शोध । प्रयोगात्मक शोध में जिन प्रारूप एवं अभिकल्पों का प्रयोग होता है उन्हें प्रयोगात्मक शोध अभिकल्प तथा अप्रयोगात्मक शोध में जिन शोध प्रारूपों का उपयोग होता है, उन्हें अप्रयोगात्मक शोध अभिकल्प कहते हैं । प्रायोगिक अभिकल्पों में कई अभिकल्प ऐसे हैं जिनका उपयोग अप्रयोगात्मक शोधों में भी किया जा सकता है। अतः समग्रता के दृष्टि से शोध अभिकल्प का प्रयोग करना उचित प्रतीत होता है। इस इकाई में मुख्य रूप से तीन अनुसंधान अभिकल्पों समूह अंतर्गत, समूहान्तर एवं कारकीय अभिकल्पों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

13.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के **पश्चात** आप जान सकेंगे-

- ✓ शोध अभिकल्प के कौन-कौन से प्रकार हैं।
- ✓ समूह अन्तर्गत अभिकल्प क्या है और कब इसका उपयोग करते हैं ।
- ✓ समूहान्तर अभिकल्प क्या है और कब इसका उपयोग करते हैं ।
- ✓ कारकी अभिकल्प का उपयोग कब किया जाता है।

13.3 अभिकल्प के प्रकार (Types of Designs)

विभिन्न विद्वानों ने अनुसंधान अभिकल्पों का वर्गीकरण अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर किया है। इनमें से कुछ विद्वानों द्वारा दिए गए दृष्टिकोण को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

मैग्यूगन ने निम्नांकित प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है -

1. यादृच्छिकीकृत द्विसमूह अभिकल्प (Randomized Two-Group Design)- इसमें प्रतिदर्श का चयन समष्टि से यादृच्छिकीकृत ढंग से किया जाता है। प्रत्येक इकाई का समूहों में भी वर्गीकरण यादृच्छिक ढंग से ही किया जाता है। इसमें स्वतंत्र **चर** की शून्य मात्रा तथा एक निश्चित मात्रा होती है। किस समूह को शून्य मात्रा तथा किस समूह को एक निश्चित मात्रा देनी है इसका भी निर्धारण यादृच्छिक ढंग से किया जाता है। जिस समूह को स्वतंत्र चर की शून्य मात्रा दी जाती है उसे नियंत्रित समूह तथा जिस समूह को एक निश्चित मात्रा दी जाती है उसे प्रायोगिक समूह कहते हैं। दोनों समूहों के आश्रित चर का मापन कर अंतर की सार्थकता ज्ञात किया जाता है।

2. समेलित द्विसमूह अभिकल्प (Matched Two-Group Design)- इस अभिकल्प में प्रयोज्यों का वर्गीकरण दो समूहों में उनकी उन विशेषताओं के आधार पर किया जाता है जो आश्रित चर से प्रभावपूर्ण ढंग से सहसम्बन्धित होते हैं। इन समेलित समूहों का वर्गीकरण प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित समूह के रूप में यादृच्छिक आधार पर ही किया जाता है। बाकी सभी प्रक्रियाएँ यादृच्छिक द्विसमूह अभिकल्प के आधार पर ही पूरी की जाती हैं।

3. दो से अधिक यादृच्छिकीकृतसमूह अभिकल्प (More Than Two Randomized Group Design)- इसमें भी अपेक्षित संख्या में प्रयोज्यों का चुनाव समष्टि से यादृच्छिक ढंग से किया जाता है। प्रतिदर्श से समूहों में प्रयोज्यों का वितरण भी यादृच्छिक ढंग से किया जाता है। इतना ही नहीं किस तीन या इससे अधिक समूह पर स्वतंत्र चर के मूल्यों का उपयोग किया जाय इसका भी निर्धारण यादृच्छिक ढ़ंग से ही किया जाता है। स्वतंत्र चर की न्यूनतम या शून्य मात्रा वाला समूह इसमें नियंत्रित समूह कहा जाता है। इसमें स्वतंत्र चर दो से अधिक संख्या में दिया जाता है। आश्रित चर के जो मूल्य प्राप्त होते हैं उनकी आपस में तुलना की जाती है।

4. कारकीय अभिकल्प (Factorial Design)- इसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों को एक ही प्रयोग में अध्ययन हेतु प्रयुक्त करते हैं। इसमें दो या अधिक चरों के प्रभाव के साथ-साथ उनकी अंतः क्रियाओं का भी अध्ययन किया जाता है।

5. प्रयोजानान्तर्गत या समूहान्तर्गत अभिकल्प (Within-Group or Within-Group Design)- इस अभिकल्प में एक ही समूह पर प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रत्येक का प्रयोज्य को विभिन्न प्रायोगिक मूल्य या दशाएँ प्रस्तुत की जाती हैं और उन भिन्न-भिन्न दशाओं में प्राप्त प्रदत्तों की आपस में तुलना किया जाता है। इसमें स्वतंत्र चर वही होते हैं जिसका सक्रिय रूप से नियोजन किया जा सकता है। इसी से मिलते-जुलते अन्य वर्गीकरण के अनुसार शोध प्रारूपों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से किया गया है।

1. समूहों के अंतर वाले अभिकल्प (Designs with Differences Between Groups)

(i) **यादृच्छिकृत समूहों वाले अभिकल्प (Designs with Randomized Groups)-** इसके अंतर्गत मैग्यूगन द्वारा वर्णित यादृच्छिकीकृत दो समूह तथा दो से अधिक समूहों वाले अभिकल्प आते हैं।

(ii) **समेलित समूह वाले अभिकल्प (Designs with Matched Groups)-** इस प्रकार के अभिकल्प में दो या दो से अधिक समेलित समूहों का उपयोग किया जाता है।

Send feedback

Side panels

History

Saved

(iii) यादृच्छिकीकृत खण्ड़ों वाले अभिकल्प (Designs with Randomized Blocks)- इस प्रकार के अभिकल्प में उपर्युक्त दोनों अभिकल्पों का समन्वय निहित है। इसमें प्रयोज्यों को कई खण्डों या समूहों में बाँट दिया जाता है।

(iv) **लैटिन वर्ग वाले अभिकल्प (Latin Square Designs)-** जब प्रायोगिक दशाएँ 4 से 9 के बीच होती है तब इस प्रकार के अभिकल्प का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रयोगात्मक दशाओं के वर्ग निर्मित किए जाते हैं। जिसमें प्रत्येक दशा, प्रत्येक वर्ग में एक बार उपस्थित होती है।

(v) **कारकीय अभिकल्प (Factorial Designs)-** इसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के प्रभावों तथा अंतक्रियात्मक प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

2. समूहान्तर्गत अभिकल्प (Within-Group Designs)- इस प्रकार के अभिकल्प में प्रत्येक प्रयोज्य को प्रत्येक प्रायोगिक मूल्य दिया जाता है।इस अभिकल्प को एक समूह अभिकल्प या प्रयोजनान्तर्गत अभिकल्प भी कहते हैं।

3. अर्द्ध प्रायोगिक अभिकल्प (Quasi-Experimental Designs)- इसमें दो या दो से अधिक समूहों वाले तथा एकल समूह वाले अभिकल्पों के आधारभूत तत्वों का उपयोग किया जाता है।

जहोदा आदि ने प्रायोगिक अभिकल्पों को आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के पूर्व या पश्चात कब किया गया है के आधार पर विभाजित किया है-

(1) केवल पश्चात प्रयोग (Post-Only Experiments)- इसमें आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के प्रयोग के बाद ही किया जाता है।

(2) पूर्व-पश्चात प्रयोग (Pre-Post Experiments)- इसमें आश्रित चर का मापन स्वतंत्र चर के उपयोग के पूर्व तथा पश्चात दोनों ही दशाओं में किया जाता है। इसमें कई प्रकार के अभिकल्पों का प्रयोग किया जाता है।

लिण्डक्विस्ट ने मूलभूत छः प्रायोगिक अभिकल्पों का वर्णन किया है-

(1) सरल यादृच्छिक अभिकल्प (Simple random design)- इसमें यादृच्छिकीकृत रूप से समष्टि से चुने गए सभी प्रतिदर्श पर प्रत्येक प्रायोगिक मूल्य का उपयोग किया जाता है।

(2) समुपचार स्तर अभिकल्प (Group level design)- इसमें स्वतंत्र चर के विभिन्न मूल्यों का उपयोग समेलित समूहों पर किया जाता है।

(3) समुचार प्रयोज्य अभिकल्प (Group usability design)- इस प्रकार के अभिकल्पों में सभी समुपचारों को क्रमिक रूप से उन्हीं प्रयोज्यों पर प्रयुक्त किया जाता है।

(4) यादृच्छिक पुनरावृत्ति अभिकल्प (Randomized Repetition Design)- इसमें सरल यादृच्छिक प्रकार के प्रयोग को दोहराया जाता है। इसमें प्रत्येक पुनरावृत्ति हेतु एक समष्टि से प्रतिदर्श का चयन किया जाता है।

(5) कारकीय अभिकल्प (Factorial Design) - इसमें दो या अधिक स्वतंत्र चरों का एक साथ प्रयोग किया जाता है तथा उनके प्रभावों एवं अंतः क्रियाओं का साथ-साथ निरीक्षण किया जाता है।

(6) समुपचार-समूह अंतर्गत अभिकल्प (Group-Within-Group Design)- इस प्रकार के अभिकल्प में प्रत्येक समुपचार का उपयोग एक स्वतंत्र यादृच्छिक प्रतिदर्श **पर** किया **जाता** है। करलिंगर ने भी प्रायोगिक अभिकल्प के प्रकारों का वर्णन किया है। परन्तु जो विभिन्न विद्वानों द्वारा अनुसंधान अभिकल्पों का प्रतिपादन किया गया है सबका मूल्यांकन अनुसंधान समस्या के प्रश्नों के वैध, वस्तुनिष्ठ, परिशुद्ध उत्तरों के आधार पर सामान्यीकरण करना है।

13.4 समूहअन्तर्गत अभिकल्प (Within-Group Design)

जब अधिक संख्या में प्रयोज्य उपलब्ध नहीं होते हैं तब ऐसी परिस्थिति में समूहान्तर अभिकल्पों का उपयोग करना कठिन होता है। इसके अलावा भी अनेक ऐसी समस्याएँ होती है जिनके अध्ययन में समूहान्तर अभिकल्पों का उपयोग करना उचित नहीं होता है। एक और कारण यह है कि समूहान्तर अभिकल्पों में विभिन्न समुपचारों के लिए अलग-अलग प्रयोज्य हों जो यादृच्छिक ढंग से चुने गए हों और समूहों में वर्गीकरण भी यादृच्छिक ढंग से किया गया हो। **ऐसा** इसलिए किया जाता है कि प्रासंगिक विशेषताओं में एक दूसरे के समान हो जाँच, परन्तु ऐसा वास्तव में हो नहीं पाता है। प्रायोगिक उपचारों में प्रयोज्य समूहों का समान होना आवश्यक होता है। **ऐसा** यदि सावधानी पूर्वक किया भी जाय तब भी अनेक कारणें से प्रयोज्य समूहों में समतुल्यता नहीं रहती है, जिसके कारण प्रदत्तों में त्रुटि-प्रसरण की मात्रा अधिक होती है। इसीलिए इन कठिनाइयों को देखते हुए समूह अंतर्गत अभिकल्प का उपयोग अध्ययनों में किया जाता है। इस प्रकार के अभिकल्पों में सभी समुपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सभी प्रयोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग गरने से प्रतिदर्श चयन भी उच्चावच की सम्भावना नहीं होती है। प्रयोगिक अध्ययन में प्रारम्भ से अंत तक प्रयोज्य प्रासंगिक चरों में स्थिरता की सम्भावना बनी रहती है।

समूह अंतर्गत अभिकल्पों में मुख्य रूप से दो प्रारूपों का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जाता है। इन अभिकल्पों में एक समूहः दो दशाएँ तथा एक समूहः बहुल दशाएँ प्रमुख हैं।

एक समूहः दो दशाएँ अभिकल्प (One Group: More Than Two-Condition Design)- यह अभिकल्प दो यादृच्छिक समूह का एक विकल्प है। इसमें एक समूह का प्रत्येक प्रयोज्य का उपयोग स्वतंत्र **चर** के दो अलग स्तरों पर या दो प्रायोगिक दशाओं में किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य से दो प्राप्तांक प्राप्त होते हैं। ये दोनों ही प्राप्तांक आपस में सहसम्बन्धित होते हैं। इस अभिकल्प का उपयोग स्वतंत्र चर और आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक

सम्बन्ध के अस्तित्व का सत्यापन करने के लिए किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत उद्दीपक, संदर्भ एवं संकल्प संबंधित चरों में से किसी एक को स्वतंत्र चर के रूप में लेकर प्रयोज्यों के किसी अनुक्रिया, व्यवहार या निष्पादन पर उसके प्रभाव का निर्धारिण किया जाता है। स्वतंत्र चर के मूल्यों को लेकर दो प्रायोगिक दशाएँ बनाई जाती हैं। पहली दशा में स्वतंत्र चर का मूल्य कम तथा दूसरी दशा में उससे अधिक मूल्य रखा जाता है। कभी कभी प्रथम दशा में स्वतंत्र चर को अनुपस्थित रखकर या शून्य मूल्य पर और दूसरी दशा में पर्याप्त मूल्य रखकर इस अभिकल्प का उपयोग करते हैं । इनको अ और या प्रयोगिक दशा प्रथम एवं द्वितीय नाम दिया दिया जाता है। इस अभिकल्प के अर्न्तगत पहले आश्रित चर का मापन दशा अ या ब में फिर पूर्व निर्धारित अंतराल के बाद दशा ब या अ में किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत क्रम प्रभाव एवं संवहन प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए समूह के आधे प्रयोज्यों से पहले अ दशा तथा बाद में ब दशा में प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है। शेष आधे प्रयोज्यों को पहले ब दशा फिर अ दशा में रखकर प्राप्तांक प्राप्त किया जाता है। प्राप्त प्राप्तांकों को निम्नलिखित सारिणी के प्रारूप में लिख लेते हैं ।

एक समूह: दो **से** अधिक दशाएँ अभिकल्प (**One group: two-condition design**)-

इस अभिकल्प में एक ही समूह के प्रयोज्यों का उपयोग करके तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचारों के अंतर्गत आश्रित चर का मापन किया जाता है। इस अभिकल्प को दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प के विकल्प के रूप में अपनाया जाता है। अंतर केवल इतना होता है कि इस अभिकल्प के अंतर्गत एक ही प्रयोज्य समूह तीन या तीन से अधिक प्रायोगिक उपचारों में भाग लेता है और इस प्रकार प्रत्येक प्रयोज्य की लक्षित अनुक्रिया का मापन पुनरावृत्त होता है। इसके कारण इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों में त्रुटि प्रसरण की मात्रा कम होती है।

इस प्रकार के अभिकल्प में जो अध्ययन किए जाते हैं उसमें वातावरण जनित प्रासंगिक चरों के नियंत्रण पर विशेष ध्यान रखना आवश्यक होता है क्योंकि प्राणीगत प्रासंगिक चरों का नियंत्रण तो प्रत्येक दशा में उन्हीं प्रयोज्यों के प्रयोग के उपयोग के कारण स्वतः समाप्त हो जाता है। इस अभिकल्प में सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु या यादृच्छिकीकृत खण्ड अभिकल्प हेतु प्रयुक्त एक दिशा प्रसरण विश्लेषण का उपयोग किया जाता है। जब आश्रित चर का स्वरूप कोटिक्रमिक या नामित होता है या अंतराली प्रकार का होते हुए भी प्रसरण विश्लेषण में निहित मान्यताओं की पूर्ति नहीं होती है तो अप्राचलिक सांख्यिकी परीक्षणों का उपयोग किया जाता है।

मूल्यांकन (Evaluation)- समूह अंतर्गत अभिकल्प का उपयोग काफी बचतपूर्ण है, क्योंकि **इसमें** सभी प्रयोज्यों के सभी दशाओं में प्राप्तांक उपलब्ध हो जाते हैं । जब प्रयोगात्मक परिस्थिति ऐसी होती है जिसमें प्रयोज्यों के मापन हेतु पर्याप्त व्यवस्था करनी पड़ती है, जिसमें व्याख्या के लिए समय, श्रम तथा उपकरणों आदि की अधिक व्यवस्था करनी पड़ती है तो ऐसी स्थिति में यह अभिकल्प अधिक उपयुक्त होता है। क्योंकि एक ही समूह के प्रयोज्यों पर सभी दशाओं में अध्ययन करना सरल होता है। इस अभिकल्प का उपयोग त्रुटि - प्रसरण को कम करता है। क्योंकि इस अभिकल्प में उन्हीं प्रयोज्यों के उपयोग के कारण त्रुटि-प्रसरण से व्यक्तिगत भिन्नता के अंश को कम कर दिया जाता है।

1 प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण: सांख्यिकी विश्लेषण के सभी प्रयोज्यों के लब्धांकों को स्तम्भ अ तथा ब में व्यवस्थित कर इसका परीक्षण किया जाता है कि स्वतंत्र चर में परिवर्तन के कारण आश्रित चर पर प्रयोज्यों के प्राप्तांकों के मध्मानों में सार्थक अंतर प्राप्त हुआ है या नहीं। इसमें शून्य परिकल्पना यह होती है कि स्वतंत्र चर का सार्थक प्रभाव नहीं पड़ा है तथा दोनों दशाओं में (अ एवं ब) प्राप्त मध्यमानों का अंतर शून्य है। प्रायोगिक परिकल्पना यह होती है कि दोनों माध्यमानों का अंतर शून्य से सार्थक स्तर पर अधिक या शून्य से कम है I

- Ho: Ma - Mb = 0 या Ma = Mb

- HA : Ma Mb # 0 या Ma Mb > 0 या Ma Mb < 0

इसमें टी-अनुपात की गणना कर देखा जाता है कि शून्य परिकल्पना को अस्वीकृत किया जा सकता है या नहीं । टी-अनुपात की गणना के लिए इस सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है-

ΣO

√[NZD± - {ZD)] / N-1

-

D= प्रत्येक प्रयोज्य के प्राप्तांक युग्मों का अंतर

D 2 = प्राप्तांक युग्म के अंतर का वर्ग

N= प्रयोज्यों की संख्या

यदि मापे जाने वाले आश्रित चर का वितरण सामान्य नहीं है तथा अध्ययन गत समूह बहुत छोटा है तो फिर सांख्यिकीय विश्लेषण हेतु अप्राचलिक सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता है। इस स्थिति में चिह्न परीक्षण या बिल काक्सन के कोटि परीक्षण का उपयोग करना उचित होता है।

अनेक विशेषताओं के बावजूद इस अभिकल्प की कुछ परिसीमाएँ भी हैं: एक प्रायोगिक दशा के उपयोग का प्रभाव दूसरी प्रायोगिक दशा के आश्रित चर के मापन पर पड़ता है। इस अभिकल्प में प्रयोग समूह जब बहुत छोटा होता है तब प्रतिनिधित्वपूर्णता की कमी रहती है, इसके कारण परिणामों के सामान्यीकृत करने की सापेक्षिक रूप से कम क्षमता रहती है। इसमें एक दशा के उपयोग का अनुभव दूसरे समुपचारों के प्रभावों को त्रुटिपूर्ण बनाता है। इस अभिकल्प में वातावरणजनित प्रासंगिक चरों का प्रभाव सापेक्षिक रूप से अधिक रहता है।

13.5 समूहान्तर अभिकल्प (Inter-Group Design)

समूहान्तर अभिकल्प यादृच्छिक समूह अभिकल्प का ही रूप है। इस अभिकल्प को द्विसमूह या दो स्वतंत्र समूह अभिकल्प भी कहते हैं। इसमें प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए एक अलग प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जता है। दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में दो प्रयोज्य समूहों की जरूरत पड़ती है। दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में कम से कम तीन या चार या पाँच या इससे अधिक प्रयोज्य समूहों का उपयोग किया जाता है। इन अभिकल्पों का उपयोग करने के पूर्व अध्ययन की समस्या के अनुसार लक्षित समष्टि से वांछित संख्या में यादृच्छिक रीति से प्रयोज्यों को चयन कर पुनः यादृच्छिक ढंग से समूहों में विभक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक उप समूह में अध्ययन की जाने वाली अनुक्रिया या उसके व्यवहार का मापन पूर्व निर्धारित प्रायोगिक उपचार करने के बाद किया जाता है। प्रायोगिक उपचारों में भिन्नता के आधार पर इसका परीक्षण किया जाता है कि मापी गई अनुक्रियाओं में सार्थक भिन्नता उत्पन्न हुई या नहीं ।

दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प (Two Randomized Group Design)- इस अभिकल्प में शोध के इस आधारभूत प्रश्न का उत्तर देने के लिए किया जाता है कि कोई निश्चित पूर्ववर्ती घटना या दशा पश्च घटना या दशा को उत्पन्न करती है या नहीं। इसमें पूर्ववर्ती घटना या दशा, स्वतंत्र चर एवं परिवर्ती घटना या दशा को आश्रित चर कहा जाता है। इसमें स्वतंत्र चर के दो मूल्यों का उपयोग किया जाता है। प्रत्येक मूल्य के उपयोग को प्रायोगिक उपचार कहा जाता है। सामान्यतः स्वतंत्र चर के दो मूल्यों में एक का मूल्य या स्तर शून्य तथा **दूसरे** की एक निश्चित मात्रा होती है। जिस समूह पर शून्य मूल्य के स्वतंत्र चर को दिया जाता है उसे नियंत्रित समूह एवं जिस समूह पर स्वतंत्र चर का एक निश्चित मूल्य दिया जाता है उसे प्रायोगिक समूह कहते हैं । कभी-कभी एक समूह के लिए स्वतंत्र चर की एक छोटी मात्रा तथा दूसरे समूह के लिए उसकी बड़ी मात्रा रखी जाती है। ऐसी दशा में प्रत्येक प्रयोज्य समूह एक दूसरे के लिए नियंत्रित समूह का कार्य करता है। वैसे इन्हें प्रायोगिक समूह प्रथम एवं प्रयोगिक समूह द्वितीय कहा जाता है। अक्सर ऐसा करते हैं कि दोनों समूहों में प्रयोज्यों की समान संख्या हैं। वैसे दोनों समूहों में थोड़ी कम एवं अधिक संख्या भी रह सकती है। स्वतंत्र चर के विभिन्न मूल्यों का परीक्षण प्रयोग स्थिति से अन्य प्रासंगिक चरों को नियंत्रित या स्थिर रखकर प्रेक्षण या मापन किया जाता है। इस अभिकल्प से प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकी के माध्यम से किया जाता है।

इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए उपयुक्त सांख्यिकी विधियों के चयन के लिए तीन मुख्य आधार होते हैं। प्रथम यह कि आश्रित चर का मापन अन्तराली पर कोटिक्रम या नामिक स्तर पर किया गया है। दूसरा यह है कि प्रत्येक समूह में लिए जाने वाले प्रयोज्यों की संख्या छोटी है या बड़ी । क्योंकि छोटी संख्या होने पर एक प्रकार की सांख्यिकी तथा बड़ी होने पर दूसरे प्रकार की सांख्यिकी विधियों का उपयोग किया जाता है। तीसरा यह है कि स्वतंत्र चर के प्रभावशाली होने पर दोनों समूहों के प्रदत्तों में सार्थक भिन्नता अवश्य होगी जिसके आधार पर प्रायोगिक परिकल्पना की पुष्टि हो जाती है। किन्तु सांख्यिकी विशेष का उपयोग करते समय शोधकर्ता शून्यय परिकल्पना को आधार बनाकर विश्लेषण की प्रक्रिया को आगे बढाता है।

इस अभिकल्प में दोनों प्रयोज्य समूहों को आश्रित चर का लब्धांक अलग-अलग प्राप्त होता है। इन लब्धांकों के मध्यमानों की गणना कर ली जाती है। जब दोनों मध्यमानों के मूल्यों में अंतर पाया जाता है तब इसकी सार्थकता की जाँच की जाती है। इसमें विशेष रूप से दोनों मध्यमानों के अंतर को ही सार्थकता की जाँच के लिए विशेष रूप से टी-अनुपात की गणना की जाती है। जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र का उपयोग किया जाता है।

my - m2

t - अनुपात = SS+SS2

n - 1) + (n2 -1)

n1

n2

m - m2 = दो प्रयोज्य समूहों के मध्यमानों का अंतर

SS = प्रथम समूह के मध्यमान से लब्धांकों के विचलन वर्गों का योग

SS2 द्वितीय समूह के मध्यमान से लब्धांकों के विचलन वर्गों का योग

=

n। तथा n2 = प्रथम **समूह** एवं द्वितीय समूह में प्रयोज्यों की संख्या = SS Zx

(2x) 2

n

Zx 2 = समूह के लब्धांक वर्गों का योग

(Zx) 2 = समूह के लब्धांक के योग का वर्ग

टी-अनुपात की गणना के बाद उसकी सार्थकता की जाँच के लिए स्वायत्तता अंशों का निर्धारण किया जाता है। स्वायत्तता अंश (df) = (n-1) + (n2-1)। पुनः सारिणी से प्राप्त स्वायत्तता अंश पर टी -मूल्य को . 05 या .01 पर देखते हैं कि यह मूल्य जो प्राप्त हुआ है वह अधिक है या कम | अधिक होने पर वह टी-मूल्य सार्थक होगा और कम होने पर प्राप्त टी-मूल्य सार्थक नहीं होगा। इसी के आधार पर प्रयोगात्मक या शून्य परिकल्पना को स्वीकृत या अस्वीकृत करते हैं ।

मूल्यांकन (Evaluation)- इस अभिकल्प में किए गए अध्ययन से यह जानकारी प्राप्त होती है कि कोई स्वतंत्र चर किसी आश्रित चर को प्रभावित करता है या नहीं। परन्तु इस अभिकल्प के माध्यम से किसी स्वतंत्र चर और आश्रित चर विशेष के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के स्वरूप का स्पष्ट निरूपण नहीं किया जा सकता है। अनेक स्थितियों में दो यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प में किए गए प्रायोगिक अध्ययनों से चरों के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के बारे में भ्रामक प्रदत्त भी प्राप्त होते हैं। इसमें स्वतंत्र चर के मात्र एक मूल्य या अधिक से अधिक दो मूल्यों का ही प्रयोग किया जा सकता है। प्रयोज्य समूहों की संख्या के कम होने पर दोनों में प्रारम्भिक समतुल्यता भी संदिग्ध हो

जाती है।

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प **इस** अभिकल्प के अंतर्गत यादृच्छिक रीति से गठित तीन या चार या इससे अधिक समूहों का उपयोग होता है। इसके अंतर्गत लक्षित समष्टि से यथेष्ट संख्या में प्रयोज्यों का चयन करके यादृच्छिक ढंग से 3,4,5 या 7 समूहों में बाँट लिया जाता है। प्रथम समूह को स्वतंत्र चर का शून्य मूल्य, **दूसरे** को अल्प मात्रा में और इसी प्रकार बढ़ाते हुए अंतिम समूह को अधिकतम मूल्य को उपचार हेतु दिया जाता है। उपचार के बाद प्रत्येक समूह में आश्रित चर का मापन किया जाता है। अनेक दृष्टिकोणों से यह अभिकल्प महत्वपूर्ण है। इस अभिकल्प में एक ही साथ स्वतंत्र चर के कई मूल्यों के सापेक्षिक प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। दो से अधिक समूहों वाले अभिकल्प के माध्यम से स्वतंत्र चर और आश्रित चर के प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के सही स्वरूप का निरूपण सम्भव होता है। यह अभिकल्प इस दृष्टिकोण से भी अधिक उपयोगी है कि स्वतंत्र चर के दो से अधिक मूल्यों को लिया जा सकता है और देखा जा सकता है कि स्वतंत्र चर में कितनी वृद्धि पर किस तरह का परिवर्तन आश्रित चर पर होता है।

दो से अधिक यादृच्छिकीकृत समूह अभिकल्प के अंतर्गत किए गए प्रायोगिक अध्ययन से प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर स्वतंत्र चर एवं आश्रित चर के बीच प्रकार्यात्मक सम्बन्ध के विषय में अनेक प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए जाते हैं। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए अलग-अलग प्रकार की सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया जाता है। प्रमुख रूप से एक दिश प्रसरण विश्लेषण, कोटि परीक्षण, चिह्न परीक्षण आदि सांख्यिकीय विधियों का उपयोग इस अभिकल्प में प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु किया जाता है। जब प्राप्त प्रदत्तों के वितरण प्रकृत होते हैं तो एकदिश प्रसरण विश्लेषण ही किया जाता है।

13.6 कारकीय अभिकल्प (Factorial Design)

कारकीय अभिकल्प शोध प्रारूपों का अति विकसित एवं महत्वपूर्ण स्वरूप है, जिसमें एक से अधिक स्वतंत्र चरों के प्रभावों तथा अंतः क्रियाओं का एक ही प्रयोग में अध्ययन होता है। अर्थात् जब एक से अधिक स्वतंत्र चरों प्रभावों तथा उनकी आपसी अंतः क्रियाओं का एक ही प्रयोग या अनुसंधान में अध्ययन **करना** है तो हमें कारकीय अभिकल्प का उपयोग करना पड़ता है।

मैग्यूगन (Maguigan) के अनुसार - "एक ही प्रयोग में दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों के अध्ययन के लिए एक संभव अभिकल्प कारकीय अभिकल्प है। एक पूर्ण कारकीय अभिकल्प वह है जिसमें प्रत्येक स्वतंत्र चर के चुने गए मूल्यों की सभी संभावित संयुक्तियों का उपयोग किया जाता है।"

करलिंगर (Kerlinger) ने कारकीय अभिकल्प को स्पष्ट करते हुए कहा है कि – **"कारकीय अभिकल्प एक अनुसंधना संरचना है, जिसमें दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों को साथ-साथ जोड़ा जाता है जिससे आश्रित चर पर उनके द्वारा डाले गए स्वतंत्र तथा पारस्परिक अंतः क्रियाओं के प्रभावों को अध्ययन किया जा सके।"**

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि -

1. कारकीय अभिकल्प में एक साथ दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का अध्ययन किया जाता है।

2. प्रत्येक स्वतंत्र चरों के बीच पारस्परिक अंतः क्रिया के कारण आश्रित चर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है।

कारकीय अभिकल्प में कारक से तात्पर्य स्वतंत्र चर से होता है। स्वतंत्र चर के संचालन के आधार पर दो प्रकार के स्वतंत्र चर (कारक) होते हैं।

A. वे कारक जिन्हें सक्रिय रूप से संचालित किया जा सकता है।

B. वे कारक जिनका सक्रिय संचालन न होकर चयन किया जाता है। इन्हें चयन, वर्गीकरण या गुण कारक का नाम दिया जाता है। कारकीय अभिकल्पों में इन दोनों ही प्रकार के कारकों का उपयोग होता है। कारकीय अभिकल्प की प्रक्रिया पर प्रयुक्त कारकों की सक्रिय तथा चयन होने का प्रभाव पड़ता है।

कारकीय अभिकल्प में **कम** से कम दो **कारक** अवश्य होते हैं। वैसे **इसमें** अनेक कारकों को लेकर अध्ययन किया जा सकता है। कारकों की संख्या बढ़ा देने से अतः क्रिया प्रभावों की संख्या बहुत बढ़ जाती है। दो **कारकों** के होने पर मात्र एक अंतः क्रिया पंभाव होता है, जिसे द्विविध अंतः क्रिया कहा जाता है। तीन कारकों के होने **पर** त्रिविधि अ X ब, अ X स तथा ब X स और एक त्रिविध अंतः क्रिया प्रभाव अ X ब X स प्राप्त होते हैं।

इस अभिकल्प में प्रत्येक कारक के कम से कम दो मूल्य स्तर अवश्य होते हैं। कभी कभी एक कारक के दा या तीन तथा दूसरे कारक के तीन या चार या पाँच मूल्य या स्तर हो सकते हैं । कारकों की संख्या अध्ययनों के उद्देश्यों पर निर्भर करती है। अक्सर अध्ययनों में दा या तीन कारकों को लेकर प्रत्येक कारक के दो या तीन स्तर लिए जाते हैं ।

कारकीय अभिकल्पों में प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर प्रत्येक काकक के अलग-अलग प्रभाव के साथ-साथ उनके संयुक्त या उनकी अंतः क्रिया से उत्पन्न प्रभाव की जानकारी प्राप्त होती है। अंतःक्रिया का तात्पर्य है एक कारक के किसी स्तर के प्रभाव पर दूसरे **कारक** के प्रभाव का निर्भर होना । कारकों के बीच सार्थक अंतः क्रिया के कई रूप हो सकते हैं ।

गुणनफल के कारकीय अभिकल्प में उपचारों की सभी सम्भव संयुक्तियों का योग कारकों के मूल्यों के बराबर होता हैं । जब कारक दो हैं और प्रत्येक के मूल्य दो हैं तब चार सम्भव उपचार संयुक्तियाँ होती हैं । इसी प्रकार दो कारकों में एक के दो और दूसरे के तीन मूल्य होंगे तब 6 संयुक्तियाँ होंगी। जब दोनों के ही तीन-तीन मूल्य होंगे तो कुल 9 संयुक्तियाँ होंगी।

सामान्यतः कारकीय अभिकल्प में प्रत्येक संयुक्ति के लिए एक अलग उपसमूह का उपयोग किया जाता है। कारकीय अभिकल्पों में लिए जाने वाले उपसमूह में प्रयोज्यों की संख्या समान होती है।

कारकीय अभिकल्पों के प्रारूप (Formats of Factorial Designs)- कारकीय अभिकल्पों के प्रारूप कारकों की संख्या और प्रत्येक कारक के स्तरों की संख्या पर निर्भर करते हैं । कारकीय अभिकल्प में सामान्यतः दो या तीन कारकों को शामिल किया जाता है-

1. द्विकारकीय अभिकल्प (Two Factor Design)- कारकीय अभिकल्प का सरलतम रूप 2 x 2 कारकीय अभिकल्प है। इसमें दो स्वतंत्र चर तथा इनके दो-दो मूल्य या समुपचार निहित होते हैं ।

2. द्वि X त्रि कारकीय अभिकल्प (Two X Three factor design)- इसके अंतर्गत किसी भी कारके के दो और दूसरे के तीन स्तर लिए जाते हैं। इसमें प्रयोग उपचार की 6 संयुक्तियाँ बनती हैं। प्रयोज्यों के 6 यादृच्छिकीकृत समूहों की जरूरत पड़ती है।

3. के X एल कारकीय अभिकल्प (K X L factor design)- द्विकारकीय अभिकल्प में किसी भी एक कारक के आवश्यकतानुसार 2, 3, 4, 5 स्तर और दूसरे **कारक** के 3,4 या 5 स्तर लिए जा सकते हैं।

4. त्रिकारकीय अभिकल्प (Three factor design)- इसमें कभी-कभी तीन कारकों का उपयोग किया जाता है। इसके लिए एक **कारक** के 2, 3 या 4 स्तर तथा दूसरे कारक 2 या 3 स्तर और तीसरे कारक के भी 2 या 3 स्तर लिए जाते हैं । इनसे 2 X 2 X 2, 2 X 2 X 3, 2 X 3 X 3 X 3 और 2 X 3 X 4 कारकीय अभिकल्पों की संरचना होती है। इसके आधार पर जो प्रदत्त प्राप्त होंगे उनके आधार पर तीन कारकों के अलग-अलग प्रभावों, तीन द्विविध

अंतः क्रिया तथा एक त्रिविध अंतक्रिया प्रभावों की जानकारी प्राप्त होगी।

कारकीय अभिकल्पों में किए गए अध्ययनों से जो प्रदत्त प्राप्त होते हैं उनसे परिशुद्ध परिणाम ज्ञत करने के लिए प्रसरण विश्लेषण किया जाता हैं । कारकीय अभिकल्पों में जितने कारक होते हैं प्रसरण विश्लेषण की उतनी दिशाएँ होती हैं। द्विकारकीय अभिकल्पों में प्राप्त प्रदत्तों का प्रसरण विश्लेषण द्विदिश, त्रिकारकीय अभिकल्पों में त्रिदिश तथा चतुर्कारकीय अभिकल्प में चतुर्दिश प्रसरण विश्लेषण किया जाता है।

13.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. शोध अभिकल्प के प्रकारों में ..... और ..... प्रमुख हैं। (समूहअन्तर्गत, समूहान्तर **या** प्रायोगिक, अप्रायोगिक)
2. यादृच्छिक द्विसमूह अभिकल्प में प्रतिदर्श का चयन ..... ढंग से किया जाता है। (यादृच्छिक **या** निश्चित)
3. जब प्रयोज्यों की संख्या कम होती है तो ..... सांख्यिकीय परीक्षण का प्रयोग किया जाता है। (टी-टेस्ट **या** चिह्न परीक्षण)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. शोध अभिकल्पों का वर्गीकरण केवल प्रायोगिक और अप्रायोगिक में किया जाता है।
2. समेलित द्विसमूह अभिकल्प में प्रयोज्यों का वर्गीकरण यादृच्छिक ढंग से नहीं किया जाता।

13.8 सारांश (Summary)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात यह जान चुके हैं कि शोध अभिकल्प के प्रमुख प्रकार कौन-कौन से हैं और कब और किन दशाओं में किस अभिकल्प का उपयोग अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधानों में करता है। विशेषकर इस इकाई में समूह अंतर्गत अभिकल्प, समूहान्तर अभिकल्प एवं कारकीय अभिकल्प का विस्तृत वर्णन किया गया है। समूह अंतर्गत या प्रयोज्यान्तर्गत अभिकल्प में सभी प्रकार के प्रायोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है। इस अभिकल्प के अंतर्गत व्यापक स्तर पर दो प्रारूपों का अध्ययन हेतु उपयोग होता है - एक समूहः दो दशाएं अभिकल्प तथा एक समूहः बहु दशाएँ अभिकल्प। समूहान्तर अभिकल्प यादृच्छिक समूह अभिकल्प का ही रूप होता है। इस अभिकल्प को द्विसमूह या दो स्वतंत्र समूह अभिकल्प भी कहते हैं । इसमें प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए अलग-अलग प्रयोज्य समूह का उपयोग होता है। कारकीय अभिकल्प में एक से अधिक स्वतंत्र **चरों** के प्रभावों तथा अंतः क्रियाओं का एक ही प्रयोग में अध्ययन किया जाता है।

13.9 शब्दावली (Glossary)

- **समूह अंतर्गत अभिकल्प (Within-group design):** इस प्रकार के अभिकल्प में सभी प्रकार के प्रयोगिक उपचारों में एक ही प्रयोज्य समूह का उपयोग किया जाता है।
- **समूह अंतर अभिकल्प (Inter-group design):** इस अभिकल्प को यादृच्छिकीकृत अभिकल्प भी कहा जाता है। इनके अंतर्गत प्रत्येक प्रायोगिक उपचार के लिए यादृच्छिक ढंग से गठित पृथक प्रयोज्य समूह का मापन किया जाता है।
- **कारकीय अभिकल्प (Factoral design):** जब यादृच्छिकीकृत समूहों में किसी आश्रित चर का मापन दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का प्रहस्तन कर किया जाता है और उनका स्वतंत्र **चरों** के भिन्नताकारी तथा संयुक्त प्रभावों का निर्धारण किया जाता है तो उसको कारकीय अभिकल्प कहा जाता है। दूसरे शब्दों में- जब एक

ही अध्ययन में एक साथ दो या दो से अधिक स्वतंत्र चरों का प्रहस्तन करनेकी व्यवस्था हो तो उसे कारकीय अभिकल्प कहा जाता है।

13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. समूहअन्तर्गत, समूहान्तर 2. यादृच्छिक 3. चिह्न परीक्षण

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. **सत्य 2. असत्य**

13.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- कपिल, डा0 एच0 के0 (810): अनुसंधान विधियाँ- व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच० पी० भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा ।
- त्रिपाठी, प्रो0 लाल बचन एवं अन्य (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच0 पी0 भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा ।
- सिंह, अरूण कुमार (809), मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसी दास पटना एवं वाराणसी ।
- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Social Research Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences.

13.12उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

• Kerlinger, F. N. (786) Foundations of Behavioural Research

• Mc Guin, F.J. (790): Experimental Psychology

13.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. मैग्यूगन द्वारा प्रस्तुत प्रायोगिक अभिकल्पों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. समूह अंतर्गत अभिकल्प का विस्तृत वर्णन करते हुए उसका मूल्यांकन कीजिए।
3. समूह अंतर अभिकल्प का विस्तृत वर्णन करते हुए उसका मूल्यांकन कीजिए।
4. कारकीय अभिकल्प क्या है, इसके विभिन्न प्रारूपों का वर्णन कीजिए ।

इकाई 14 तुलनात्मक विश्लेषण अनुसंधान
Comparative Analysis Research

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

14.2 उद्देश्य (Objectives)

14.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Comparative Method or Analysis)

14.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग (Use of Comparative Method or Analysis)

14.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि (Method of Using Comparative Method or Analysis)

14.6 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकतायें (Requirements before Using Comparative Method or Analysis)

14.7 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व (Importance of Comparative Method or Analysis)

14.8 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयाँ (Difficulties in Using Comparative Method or Analysis)

14.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

14.10 सारांश (Summary)

14.11 शब्दावली (Glossary)

14.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

14.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

14.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

14.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत इकाई आप लोगों को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में समाज में घटित होने वाली घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करना व विश्लेषण करना बहुत ही आवश्यक होता है, जिसके आधार पर ठोस निष्कर्ष निकालना आसान हो जाता है। यह इकाई भी तुलनात्मक पद्धति के आधार पर सामाजिक घटनाओं का विश्लेषण करने के महत्वपूर्ण तरीके के बारे में आपको ज्ञान प्रदान करेगी। वास्तव में सामाजिक घटनाओं के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए आज जिन पद्धतियों या विश्लेषणों को अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, उनमें तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का एक प्रमुख स्थान है। यह पद्धति इस आधारभूत मान्यता पर आधारित है कि कोई भी सामाजिक घटना स्वयं में पूर्ण या निरपेक्ष नहीं होती बल्कि प्रत्येक सामाजिक घटना अपनी प्रकृति से तुलनात्मक होती है। इसका अर्थ यह है कि दो विभिन्न इकाइयों या घटनाओं की परस्पर तुलना करके ही उनकी वास्तविक प्रकृति को ज्ञात किया जा सकता है। यही कारण है कि आज कोई भी सामाजिक विज्ञान ऐसा नहीं है जिसमें किसी न किसी सीमा तक तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के द्वारा सामाजिक घटनाओं का अध्ययन न किया जाता हो। वास्तविकता यह है कि हम रोजमर्रा के जीवन में भी विभिन्न सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके ही एक सामान्य निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करते हैं। जब हम कहते हैं कि वर्तमान युग में हमारे सामाजिक मूल्य बदल रहे हैं, अपराधों की संख्या में वृद्धि हो रही है, तो ऐसा कहते समय हमारा ध्यान वर्तमान सामाजिक दशाओं की अतीत से तुलना करके एक सामान्य निष्कर्ष प्रदान करने का होता है। इसके अलावा दैनिक जीवन में की जाने वाली तुलना एक सामान्य दृष्टिकोण पर आधारित होती है जबकि वैज्ञानिक अध्ययन के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की प्रकृति अत्यधिक व्यवस्थित है।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेगें।
- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के प्रयोग के बारे में प्रकाश डाल सकेगें।
- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि के बारे में लिख सकेगें।
- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं का वर्णन कर सकेगें।
- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के महत्व की व्याख्या कर सकेगें।
- ✓ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में आने वाली कठिनाइओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

14.3 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Comparative Method or Analysis)

जब हम विभिन्न सामाजिक घटनाओं के बीच पायी जाने वाली समानताओं या असमानताओं की तुलना करके क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप से कोई सामान्य निष्कर्ष प्रदान करते हैं तो अध्ययन की इस पद्धति को तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण कहते हैं। इसके बाद भी यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कुछ सामाजिक घटनाओं को तुलनात्मक रूप से प्रस्तुत कर देना ही तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण नहीं है। यह ऐसी पद्धति है जो विभिन्न सामाजिक तथ्यों की तुलना करने के साथ ही उनकी व्याख्या और विश्लेषण भी करती है। इसी आधार पर ने लिखा है, "तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का तात्पर्य केवल कुछ सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करना ही नहीं होता बल्कि तुलना के माध्यम से उसकी व्याख्या करनी होती है।" इसका अर्थ यह है कि यह पद्धति आधारभूत रूप से तुलनात्मक विधि के द्वारा घटनाओं की व्याख्या में रूचि लेती है। ने आगे लिखा है कि "शुरूआती दौर में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का उपयोग विकासवादी समाजशास्त्रियों द्वारा करने के कारण यह समझाा जाता था कि यह पद्धति विकासवादी उपागम से ही जुड़ी हुई है लेकिन वास्तव में इसकी कार्यविधि विकासवाद से काफी भिन्न है।"

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक

सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान विशेषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषणअध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विश्लेषण और व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने समय-समय पर प्रस्तुत की है जिनक उल्लेख अग्रलिखित किया जा रहा है जिससे इस पद्धति को समझने में आसानी होगी-

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण वह है जिसके द्वारा हम विशिष्ट से सामान्य तक पहुचते हैं व जिसमें हम उन विशेषताओं को जान पाये जो सब मानव संस्थानों में विभिन्न रूपों में पाये जाते हैं। इसके अन्तर्गत हम निम्नलिखित का अध्ययन करते हैं-

1. विभिन्न वर्गों में पाये जाने वाले रीति-रीवाजों का तुलनात्मक अध्ययन।
2. समाज के अन्तर्गत होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन।
3. विशिष्ट सामाजिक घटनाओं का अध्ययन।

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण उस विधि को कहते है जिसमें भिन्न समाजों या एक ही समाज के भिन्न-भिन्न समूहों की तुलना करके यह पता लगाया जा सके कि इनमें समानता है या नहीं, तथा यदि है तो क्यों है?

"तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत व्यक्तियों के बीच पाये जाने वाले स्वरूपों की तुलना मानवीय संस्थाओं तथा विश्वासों के विकासपूर्ण क्रम को स्थापित किया जाता है।"

14.4 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग (Use of Comparative Method or Analysis)

तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग समाजशास्त्र और मानवशास्त्र के अनेक विद्वानों ने किया है। सामाजिक और सांस्कृतिक मानवशास्त्रों ने सामाजिक और सांस्कृतिक उद्विकास को जानने के लिये इसका प्रयोग किया है। प्रारम्भिक मानवशास्त्री, जिन्होंने इसका प्रयोग किया है वे हैं, मोर्गन, वैकोफिन, टेगार्ट, हेनरीमेन, टाइलर, फ्रैजर, लेवी आदी के नाम उल्लेखनीय है। विकासवादी समाज वैज्ञानिकों ने ऐतिहासिक और तुलनात्मक पद्धति का साथ-साथ प्रयोग किया है। कुछ समाज वैज्ञानिकों के कार्य अग्रलिखित हैं-

इन्होंने समाज व सावयव की तुलना की और दोनों के बीच कई समानताओं का उल्लेख किया। इसी आधार पर आपने समाज को एक सावयव कहा। उन्होंने विभिन्न समाजों की परस्पर तुलना की। दुर्खीम ने अपनी पुस्तक **"द रूल्स ऑफ सोशियोलाजिकल मेथड"** में इस पद्धति का प्रयोग किया तथा उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों में आत्महत्या की दर व कारणों का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा आत्महत्या का सामाजिक सिद्धान्त प्रस्तुत किया।

आपने पूँजीवाद और प्रोटेस्टेट धर्म के सह-सम्बन्धों को दर्शाने के लिये दुनिया के छः महान धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया और बताया कि केवल प्रोटेस्टेट धर्म में ही कुछ ऐसे आर्थिक विचार है जिन्होंने आधुनिक पूँजीवाद को जन्म दिया।

-ब्राउन ने तुलनात्मक पद्धति को अपनाकर समाज व सावयव (organic) की तुलना की है, वे इस निष्कर्ष पर पहुचते हैं कि, समाज सावयतव की भ्रांति है, दोनों का विकास कुछ निश्चित स्तरों से सरलता से जटिलता की ओर हुआ है। समाज व सावयव के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही इन्होंने कुछ आधारभूत विशेषताओं का

अध्ययन किया है। ब्राउन कहते हैं कि तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक विकास की प्रक्रिया को समझा जाता है। समाज गत्यात्मकता के नियमों को तुलनात्मक विधि द्वारा ही स्पष्ट रूप से ज्ञात किया जा सकता है व समाज में होने वाले परिवर्तनों का भी पता इस विधि के द्वारा चल सकता है। तुलनात्मक विधि द्वारा व्यक्ति, तथ्यों को स्पष्ट ही नहीं करते अपितु उस तथ्य की परिस्थितियों को भी स्पष्ट कर सकते हैं। इनका मानना है कि जो सामान्य प्रस्तावना है उसी के आधार पर हम मानव समाज की सामान्य विशेषताओं के तुलनात्मक स्वरूप को स्पष्ट कर सकते हैं, सामान्य से विशेष तथा विशेष से सामान्य की ओर ले जाने वाली इस प्रक्रिया को इस पद्धति में प्रयोग नहीं किया जाता। इस पद्धति द्वारा सामाजिक अनुसंधानकर्ता तुलना करके अपने अनवेषण की परख कर अवधारणाओं की पुष्टि कर सकता है। परिवर्तनशील समाज में विभिन्न प्रक्रियाओं का अध्ययन करने में यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।ब्राउन का मानना है कि सामाजिक विज्ञानों में तुलनात्मक पद्धति के माध्यम से हम किसी आदि-मानवीय समाज के विषय मेे कोई जानकारी चाहते हैं तो असफलता ही हाथ लगेगी क्योंकि तुलना इस आधुनिक समाज से मानव समाज की, की जायेगी। इसके लिये हमें ऐतिहासिक पद्धति को काम में लेना पड़ेगा।

14.5 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि (Method of Using Comparative Method or Analysis)

तुलनात्मक पद्धति के द्वारा जब सामाजिक घटनाओं का अध्ययन किया जाता है तो एक विशेष कार्य-विधि को व्यवहार में लाना पड़ता है, इसक अन्तर्गत-

1. सर्वप्रथम, अध्ययन से सम्बंधित विषय अथवा इकाइयों का अवलोकन करक यह जानने का प्रयास किया जाता है कि अध्ययन के अन्तर्गत आने वाली अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाइयाँ कौन-कौन सी हैं।
2. दूसरे स्तर पर, उनसे सम्बंधित सामाजिक तथ्यों का संग्रह करना आरम्भ किया जाता है। ये तथ्य प्राथमिक रूप से एकत्रित किए जा सकते हैं और द्वैतीयक स्रोतों के माध्यम से भी।
3. तथ्यों के संकलन के बाद समान सामाजिक तथ्यों को एक-एक वर्ग में रखकर उनका इस प्रकार वर्गीकरण कर लिया जाता है जिससे प्रत्येक वर्ग में एक-दूसरे से भिन्न प्रकृति वाले सामाजिक तथ्य संकलित हो जाएं।
4. चौथे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक वर्गों की समानताओं और असमानताओं की तुलना करके उनके सह-सम्बंध या पृथक्कता का मूल्यांकन करने का प्रयत्न किया जाता है। यह तुलना जितनी अधिक सावधानीपूर्वक की जाती है, तुलनात्मक पद्धति द्वारा उतने ही अधिक वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना संभव हो जाता है।
5. पांचवे स्तर पर, विभिन्न सामाजिक इकाइयों की समानताओं या असमानताओं के संबंधित उन कारकों को ज्ञात करने का प्रयत्न किया जाता है जो एक विशेष स्थिति में किसी घटना को एक विशेष ढंग से प्रभावित करते हैं। इस स्थिति के समुचित विश्लेषण से ही तुलनात्मक विवेचना को अधिक वैज्ञानिक बनाया जा सकता है।
6. अन्य पद्धतियों के समान तुलनात्मक पद्धति का अन्तिम चरण भी सामाजिक तथ्यों का सामान्यीकरण करना है, यह सामान्यीकरण मूलरूप से तुलना के आधार पर ही किया जाता है।

तुलनात्मक पद्धति की इस कार्य-विधि का उपयोग सर्वप्रथम प्रारम्भिक मानवशास्त्रियों ने दो विभिन्न स्थानों की सांस्कृतिक विशेषताओं या एक ही संस्कृति की विभिन्न विशेषताओं का अध्ययन तुलनात्मक आधार पर करने के लिये किया था। इसके कुछ समय बाद ही हरबर्ट स्पेंसर ने सामाजिक जीवन का अध्ययन करने के लिये तुलनात्मक पद्धति को सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार के रूप में स्वीकार किया। स्पेन्सर ने समाज और जीवन रचना के बीच तुलना करके यह स्पष्ट किया कि इन दोनों के बीच अनेक समानतायें विद्यमान हैं कि यदि समाज को एक सावयव कहो जाए तो गलत नहीं होगा। इसी समय से सामाजिक घटनाओं के अध्ययन मे तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण समझा जाने लगा और बाद में अनेक समाज वैज्ञानिकों ने

व्यवस्थित आधार पर इस पद्धति के उपयोग से सम्बंधित नयीं प्रविधियों को विकसित किया। इस समय समाजशास्त्र के जनक ऑगस्त कॉम्ट ने विभिन्न युगों में मानव के बौद्धिक विकास की एक-दूसरे से तुलना करते हुए "तीन स्तरों का नियम" प्रतिपादित किया तथा यह स्पष्ट किया कि सामाजिक तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन केवल अवलोकन, प्रयोग और तुलना के द्वारा ही किया जा सकता है। तुलनात्मक पद्धति के उपयोग का सर्वप्रथम उदाहरण दुर्खीम द्वारा किया गया "आत्महत्या का सिद्धान्त" है। दुर्खीम ने विभिन्न सामाजिक समूहों में आत्महत्या की दर का तुलनात्मक अध्ययन करके यह स्पष्ट किया कि सामाजिक दशाएं ही आत्महत्या का प्रमुख कारण होती है। मैक्स वेबर ने आर्थिक संस्थाओं के विकास पर धार्मिक आचारों के प्रभाव को स्पष्ट करने के लिये न केवल तुलनात्मक प्रद्धति का वृहद रूप् से उपयोग किया बल्कि इस पद्धति की सफलता के लिये एक निश्चित कार्य विधि को भी स्पष्ट किया। मैक्स वेबर ने यह भी बताया कि सामाजिक घटनाओं के बीच पाये जाने वाले कार्य कारण सम्बन्ध को तब तक स्पष्ट नहीं किया जा सकता जब तक विभिन्न सामाजिक घटनाओं को समानता के आधार पर कुछ सैधांतिक श्रेंणियों में विभाजित न कर लिया जाए। इस प्रकार जब हम तर्कसंगत आधार पर कुछ वास्तविक सामाजिक घटनाओं, व्यक्तियों या इकाइयों को इस प्रकार चुन लेते हैं जो अपने-अपने सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हों तो इनके द्वारा एक ऐसे प्रारूप का निर्माण होता है जिसे हम आदर्श प्रारूप कह सकते हैं। इन विभिन्न आदर्श प्रारूपों के बीच तुलना करने से हमें वह आधार प्राप्त हो जाता है जिसकी सहायता से एक सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।

इस प्रकार आदर्श प्रारूपों का चयन करना तुलनात्मक पद्धति के सफल उपयोग के लिए सबसे अधिक आवश्यक है। वर्तमान समय में सामाजिक घटनाओं के अध्ययन के लिए तुलनात्मक पद्धति का उपयोग इतना अधिक होने लगा है कि प्रत्येक शोध में किसी न किसी स्तर पर इसका उपयोग अवश्य देखने को मिलता है। छोटे स्तर पर की गई तुलनाओं के द्वारा परिकल्पना की सत्यता की जांच करने के लिये भी तुलनात्मक पद्धति को विशेष रूप से उपयोगी समझा जाता है। उदाहरण के तौर पर यदि हम देखे तो नगरीय जीवन तथा विवाह-विच्छेद की प्रकृति, परिवार का आकार तथा सामाजिक गतिशीलता, शैक्षणिक उपलब्धियॉं तथा विभिन्न सामाजिक वर्ग आदि तुलना के वे प्रमुख विषय हैं जिनसे सम्बन्धित अनुभव सिद्ध निष्कर्ष देना इस पद्धति के द्वारा सम्भव हो गया है। इसी आधार पर वैज्ञानिक फ्रीमैन ने यह दावा किया है कि "अध्ययन के लिये तुलनात्मक पद्धति की अभिकल्पना हमारे युग की महानतम बौद्धिक उपलब्धि है।"

14.6 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकतायें (Requirements before Using Comparative Method or Analysis)

तुलनात्मक पद्धति का वैज्ञानिक तरीके से उपयोग तभी किया जा सकता है कि जब शोधकर्ता इसके उपयोग से सम्बंधित कुछ पूर्व-आवश्यकताओं को पूरा करता हो। इन पूर्व आवश्यकताओं को संक्षेप में अग्रलिखित रूप से समझा जा सकता है-

तुलनात्मक पद्धति के आधार पर वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिये यह आवश्यक है कि शोधकर्ता को अपने अध्ययन-विषय का पर्याप्त ज्ञान हो। विषय का पर्याप्त ज्ञान होने से ही शोधकर्ता विभिन्न पक्षों से सम्बंधित तथ्यों का समुचित रूप से संकलन करके उनकी तुलनात्मक व्याख्या करने में सफल हो सकता है।

सूक्ष्म अवलोकन के बिना न तो शोध से संबंधित विभिन्न सामाजिक घटनाओं और तथ्यों का गहराई में जाकर अध्ययन किया जा सकता है और न ही उन सामाजिक वर्गाें का निर्माण किया जा सकता है जिनकी तुलना में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त हो सकते हैं।

विश्लेषण की क्षमता से ही विभिन्न सामाजिक तथ्यों के निहित अर्थों को स्पष्ट करना सम्भव होता है। यह अर्थ जितना अधिक स्पष्ट और संगत या सापेक्ष होता है, सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करना भी उतना ही अधिक सरल हो जाता है। विश्लेषण की क्षमता ही वह आधार है जिसकी सहायता से प्रत्येक सामाजिक घटना की पृष्टभूमि या परिस्थितियों को समुचित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है।

सामाजिक तथ्यों तथा घटनाओं की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि उन सभी का प्रत्यक्ष अवलोकन करना संभव नहीं होता। अने तथ्यों की व्याख्या के लिये शोधकर्ता मे तार्किक कुशलता का होना आवश्यक है। तार्किक कुशलता की सहायता से ही यह ज्ञात किया जा सकता है कि कौन से सामाजिक तथ्य आवश्यक हैं और कौन से अनावश्यक। इसके साथ ही साथ विभिन्न तथ्याके के सह सम्बन्ध को ढूंढकर उनकी अर्थपूर्ण व्याख्या करना भी तार्किक कुशलता पर निर्भर करता है।

तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग का उद्देश्य सामाजिक तथ्यों को तुलनात्मक आधार पर विश्लेषण करना ही नहीं होता बल्कि तुलना करके एक वस्तुनिष्ठ प्रतिवेदन भी प्रस्तुत करना होता है। तथ्यों तुलना तब तक अर्थहीन है जब तक उसके आधार पर निकाले गये निष्कर्षों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत न कर दिया जाये।

14.7 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का महत्व (Importance of Comparative Method or Analysis)

उन्नीसवीं शताब्दी तक तुलनात्मक पद्धति का प्रयोगा विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच तुलना करने तक ही सीमित था लेकिन आज इस पद्धति की व्यापक व्यावहारिक उपयोग को ध्यान में रखा जाय तो इसका आज कल बहुत उपयोग हो रहा है। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति के महत्व या इसकी उपयोगिता को अग्रलिखित बिनदुओं के माध्यम से समझा जा सकता है-

किसी भी सामाजिक शोध की वैज्ञानिकता प्रमाणित करने के लिए आवश्यक है कि अध्ययन विषय से संबंधित परिकल्पना की पूरी जाँच कर ली जाये। समाजशास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने परिकल्पना की परीक्षा के एक साधन के रूप में तुलनात्मक पद्धति को सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना है। इसका कारण यह है कि विभिन्न समाजों, संस्थाओं, समूहों या अन्य तथ्यों का तुलनात्मक विवेचन करके अध्ययन से सम्बंधित परिकल्पना की परीक्षा सरलता के की जा सकती है।

सामाजिक घटनाओं की प्रकृति इतनी जटिल है कि उनके बीच कार्य-कारण के सम्बंध को ज्ञात करना अक्सर बहुत कठिन हो जाता है। भौतिक विज्ञानों में कार्य-कारण के सम्बन्ध को जानना इसलिए सरल है क्योंकि प्रयोगात्मक विधि द्वारा किसी भी तथ्य के आन्तरिक रूप को समझा जा सकता है। इसके विपरीत सामाजिक अध्ययनों में प्रत्यक्ष प्रयोग की कोई सम्भावना नहीं होती। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक दुर्खीम का कथन है कि हम केवल 'अप्रत्यक्ष प्रयोग की विधि' के रूप में तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्ध को समझ सकते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि तुलनात्मक पद्धति पूर्णतया प्रयोगात्मक पद्धति के समान है लेकिन विभिन्न घटनाओं के बीच व्यवस्थित तुलना करने से यह अवश्य जाना जा सकता है कि कौन-कौन से सामाजिक तथ्य किन दूसरे तत्वों से अधिक सम्बंधित हैं और उनकी पुनरावृत्ति का क्रम क्या है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति के महत्व की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

तुलनात्मक पद्धति एक ऐसी पद्धति है जिसकी सहायता से सामाजिक घटनाओं का सांख्यिकीय विश्लेषण करना भी सम्भव हो सकता है। इसके अन्तर्गत जब हम विभिन्न गुणात्मक तथ्यों की आवृति को समझने में सफल हो जाते हैं तो सरलता से उन तथ्यों की प्रकृति को प्रतिशत या अनुपात के रूप में स्पष्ट किया जा सकता है। इस आधार पर अनेक विद्वान परिमाणात्मक अध्ययनों के लिए तुलनात्मक पद्धति को अत्यधिक महत्वपूर्ण मानते हैं।

श् वर्तमान परिवर्तनशील समाजों में तुलनात्मक पद्धति की सहायता से यह सरलतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न सामाजिक घटनायें किस रूप में परिवर्तित हो रही हैं तथा तुलनात्मक रूप से विभिन्न तथ्यों के बीच परिवर्तन की दर या सीमा क्या है? वर्तमान में, परिवर्तन स्वयं में एक तुलनात्मक अवधारणा है। हम एक तथ्य में उम्पन्न होने वाले परिवर्तन को दूसरे तथ्य की तुलना में ही समझ सकते हैं। इसी के बारे मे समाज वैज्ञानिक राउन्ट्री और बाउले ने काफी समय के अन्तर से एक ही समुदाय की विशेषताओं का तुलनात्मक आधार पर अध्ययन करके यह स्पष्ट कर दिया कि केवल तुलनात्मक पद्धति के द्वारा ही सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति और

दिशा का सही ज्ञान किया जा सकता है।
आज शोध की नयी प्रविधियों के विकास होने के साथ ही यह अनुभव किया जाने लगा है कि कुछ विशेष समाजों में छोटे स्तर पर किये जाने वाले अध्ययनों में इस पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग किया जा सकता है। वास्तव में छोटे
क्षेत्र या छोटे स्तर पर जो अध्ययन किये जाते हैं उनमें अध्ययन विषय से संबंधित विभिन्न इकाइयों का तुलनात्मक विश्लेषण किये बिना कोई भी उपयोगी निष्कर्ष नहीं दिये जा सकते। यही कारण है कि विभिन्न उद्योगों, व्यावसायिक प्रतिष्ठानो,ं सरल समाजों तथा शिक्षा व्यवस्था आदि पर समाजशास्त्रीय शोध करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का विशेष उपयोग है।

14.8 तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइयाँ (Difficulties in Using Comparative Method or Analysis)

सामाजिक अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति महत्वपूर्ण अवश्य है लेकिन इस पद्धति के उपयोग मे अनेक कठिनाइयाँ हैं जिनका निवारण करके ही इसे एक उपयोगी पद्धति बनाया जा सकता है। इस पद्धति की सीमा को स्पष्ट करके समाजशास्त्री रेडक्लिफ ब्राउन ने लिखा है "तुलनात्मक पद्धति अकेले ही आपको कुछ नहीं दे सकती। भूमि से तब तक कुछ पैदा नहीं हो सकता जब तक आप पहले उसमें बीज नहीं बोयेंगे। इस प्रकार तुलनात्मक पद्धति भी परिकल्पना के परिक्षण का एक तरीका मात्र है।" इसका अर्थ यह है कि एक ओर तुलनात्मक पद्धति स्वयं कुछ सीमाओं से युक्त है और दूसरी ओर इसके उपयोग में भी अनेक कठिनाइयाँ हैं। इन कठिनाइयों को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है-

1. **वैज्ञानिक बोटोमोर (Scientist Bottomore)** का कथन है कि "तुलनात्मक पद्धति के उपयोग मे आने वाली एक प्रमुख कठिनाई यह है कि इसके अन्तर्गत या तो परिकल्पनाओं का अभाव होता है या किसी परिकल्पना का निर्माण करना आवश्यक नहीं समझा जाता है।" किसी भी वैज्ञानिक शोध के लिए परिकल्पना का निर्माण करना अत्यधिक आवश्यक होता है। क्योंकि परिकल्पना ही शोध को वास्तविक दिशा प्रदान करती है। यदि अध्ययन में परिकल्पना का अभाव होता है तो अक्सर महत्वपर्ण अध्ययन भी दार्शनिक बनकर रह जाते हैं। उदाहरण स्वरूप ऑगस्त काम्ट ने अपने 'तीन स्तरों के नियम' को स्पष्ट करने के लिये तुलनात्मक पद्धति का उपयोग अवश्य किया लेकिन इसमें एक वैज्ञानिक परिकल्पना का अभाव होने के कारण यह सम्पूर्ण व्याख्या 'मानवता के विकास का दर्शन' बनकर रह गई।

2. तुलनात्मक पद्धति के उपयोग के लिये अध्ययन के संबंधित कुछ ऐसी इकाइयों का चयन करना आवश्यक होता है जिनके बीच तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष दिये जा सकें। इस कार्य के लिये एक ओर ऐसी इकाइयों का चयन करना पड़ता है जो एक दूसरे से पूर्णतया असमान न हों तथा साथ ही उनकी समुचित विवेचना भी की जा सके। इस कार्य में सबसे बड़ी कठिनाई यह आती है कि शोध के अनतर्गत जिन बहुत-सी इकाइयों अथवा तथ्यों का समावेश होता है उनमें से तुलना के लिये उपयुक्त इकाइयों का चयन करना बहुत कठिन हो जाता है। सामाजिक तथ्य इतने विविध एवं परिवर्तनशील होते हैं कि कभी-कभी जो इकाइयाँ शुरू में बहुत महत्वपूर्ण दिखाई देती हैं, कुछ समय बाद तुलना के दृष्टिकोण से उनका कोई महत्व प्रतीत नहीं होता। इस प्रकार तुलना के लिये चुनी गई इकाइयों का चयन दोषपूर्ण हो जाने की सम्भावना हमेशा बनी रहती है।

3. **समाजशास्त्री मैलिनोवास्की (Sociologist Malinowski)** ने कहा है कि "विभिन्न इकाइयों की तुलना करना और उन्हें समुचित रूप से परिभाषित करना भी एक कठिन कार्य है। एक ओर यह अत्यधिक कठिन है कि दो समाजों के सभी पक्षों की एक दूसरे से तुलना की जा सके और दूसरी ओर विभिन्न समाजों से सम्बंधित किन्हीं दो संस्थाओं या इकाइयों के बीच तुलना करना भी एक कठिन कार्य होता है। सभी इकाइयों का स्वरूप एक दूसरे से काफी भिन्न होता है तथा उनके बाह्य और आन्तरिक स्वरूप में भी एक स्पष्ट भिन्नता

विद्यमान होती है। जो संस्थायें ऊपर से विल्कुल समान प्रतीत होती हैं, विभिन्न समाजों में उनका आन्तरिक रूप एक दूसरे के बिल्कुल भिन्न हो सकता है। यदि हम किसी संस्था या इकाई को उसकी सामाजिक पृष्ठभूमि से अलग करके देखने लगंे तो ऐसी व्याख्या पूर्णतया भ्रामक हो जाती है।"

4. तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत जिन सामाजिक संस्थाओं, तथ्यों या इकाइयों को लेकर तुलना की जाती है उन्हें साधारणतया उस सम्पूर्ण समाज से अलग करके देखा जाता है जिसमें कि उस संस्था या इकाई की एक निश्चित भूमिका होती है। इसके फलस्वरूप उनके वास्तविक स्वरूप को समझ सकना बहुत कठिन हो जाता है। तुलनात्मक पद्धति के अन्तर्गत किसी संस्था या इकाई की सामाजिक पृष्ठभूमि को समुचित महत्व न मिलने के कारण अक्सर सम्पूर्ण विश्लेषण के दोषपूर्ण और अवैज्ञानिक बन जाने की सम्भावना हो जाती है।

उपर्युक्त कठिनाइयों के बाद यह सत्य है कि प्रयोगात्मक पद्धति के एक विकल्प के रूप में तुलनात्मक पद्धति अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हुई है। यदि एक सीमित क्षेत्र में इस पद्धति का प्रयोग किया जाए तो इसकी सहायता से अनेक उपयोगी निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

14.9 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. तुलनात्मक पद्धति में विभिन्न इकाइयों की ..... (समानताएं, भिन्नताएं) का मूल्यांकन किया जाता है।
2. तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग ..... (सभी समाजों में, कुछ समाजों में) किया जाता है।
3. तुलनात्मक पद्धति का उपयोग करने से पहले शोधकर्ता को ..... (संगत अवलोकन, पर्याप्त ज्ञान) होना चाहिए।

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. तुलनात्मक पद्धति से सामाजिक घटनाओं के कार्य-कारण संबंध को आसानी से स्पष्ट किया जा सकता है।
2. तुलनात्मक पद्धति केवल परिकल्पनाओं की पुष्टि करने के लिए उपयोगी है, इसका उद्देश्य निष्कर्ष निकालना नहीं होता।

14.10 सारांश (Summary)

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग तुलनात्मक पद्धति के बारे में वृहद जानकारी प्राप्त कर चुके होगें। अब आप तुलनात्मक पद्धति के अर्थ एवं परिभाषाओं के बारे में ज्ञान अर्जित कर लिया होगा। वास्तव में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन की वह पद्धति है जिसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक सामाजिक तथ्यों, इकाइयों या समुदायों को अध्ययन का आधार मानते हुए उनकी एक दूसरे से तुलना की जाती है एवं तुलना के दौरान पायी गयी समान अथवा असमान विशेषताओं के आधार पर सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं। यदि इस दृष्टिकोण से देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि सामाजिक अध्ययनों में तुलनात्मक पद्धति प्रयोगात्मक पद्धति का ही विकल्प है। सामाजिक घटनाओं को किसी प्रयोग या परीक्षण के लिए पूरी तरह नियंत्रित नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में हमारे सामने केवल यही विकल्प रह जाता है कि हम दो सामाजिक तथ्यों के बीच तुलना करके एक सामान्य प्रवृति को ज्ञात करने का प्रयत्न करें। इस आधार पर यह स्पष्ट होता है कि तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन का वह तरीका है जिसमें एक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विश्लेषण और व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।

इस इकाई के आधार पर आप लोग तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण का प्रयोग भलि भांति कर सकेगें एवं तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि की प्रक्रिया पर प्रकाश डाल सकेगें। यह इकाई आपको इस योग्य बनाती है जिससे आप तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं को जान सकेगें। आशा ही नहीं वरन् पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत इकाई आप के ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि करायेगी जिससे आप लोग तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग आसानी से कर सकेगें।

14.11 शब्दावली (Glossary)

दृ तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण अध्ययन का वह तरीका है जिसमेंएक से अधिक सामाजिक घटनाओं के बीच तुलना करके उनका इस प्रकार विश्लेषण और व्याख्या है जिसमें एक सामान्य प्रवृति का ज्ञात किया जा सकें।
दृ यह वह विधि है जिसक द्वारा वर्तमान काल में घटित होने वाली घटनाओं को अतीत में घटित घटनाओं के क्रमिक विकास की एक कड़ी के रूप में देखकर उनका अध्ययन किया जाता है।

14.12 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. समानताएं 2. सभी समाजों में 3. पर्याप्त ज्ञान

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2.असत्य

14.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- गिन्सबर्ग, द प्रोब्लेम्स एण्ड मेथड्स ऑफ सोशियोलाजी इन रीजन्स एण्ड अनरिजन्स इन सोसाइटी।
- कोटेड इन बाटमोरे सोशियोलाजी, पेज नं0 55। 3. फ्री मैन, इ0 ए0, कम्परेटिव पालिटिक्स।
- रेडक्लिफ ब्राउन, ए नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी।
- मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज।
- गोयल, डॉ0 सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर0 बी0 एस0 ए0 पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54-61।

14.14 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

1. सोशियोलाजी रिटेन बाई बाटमोरे।
2. कम्परेटिव पालिटिक्स रिटेन बाई फ्री मैन।
3. नेचुरल साइंस ऑफ सोसाइटी रिटेन बाई रेडक्लिफ ब्राउन।

14.15 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के अर्थ एवं परिभाषा के बारे में प्रकाश डालिये।
2. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के प्रयोग के बारे में लिखिये।
3. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग की विधि की व्याख्या कीजिएं
4. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण की उपयोग से पूर्व आवश्यकताओं की विवेचना कीजिये।
5. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के महत्व पर प्रकाश डालिये।
6. तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के उपयोग में कठिनाइओं के बारे में लिखिये।

इकाई 18- अनुसंधान में विश्लेषण- शाब्दिक, मीडिया और अन्तर्वस्तु विश्लेषण (Textual Analysis, Media & Content Analysis)

18.1 प्रस्तावना (Introduction)

18.2 उद्देश्य (Objectives)

18.3 शाब्दिक विश्लेषण (Textual Analysis)

18.4 मीडिया विश्लेषण (Media Analysis)

18.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा (Definition of Content Analysis)

18.5.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ (Characteristics of Content Analysis)

18.5.2 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्देश्य (Objectives of Content Analysis)

18.5.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग (Uses of Content Analysis)

18.5.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम (Various approaches of using content analysis done by Berelson)

18.5.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार (Types of Content Analysis)

18.5.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार (Bases of Classification of Content Analysis)

18.5.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान (Major steps in creating a content analysis framework)

18.5.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण (Creating a content analysis framework)

18.5.9 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ (Major problems of content analysis)

18.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

18.6 सारांश (Summary)

18.7 शब्दावली (Glossary)

18.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

18.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

18.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

18.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

18.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रिय विद्यार्थियों आपने पूर्व की इकाई में तुलनात्मक पद्धति या विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त की तथा जाना की किस प्रकार से तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसी क्रम में प्रस्तुत इकाई आपके सामने प्रस्तुत है जिसके माध्यम से आप लोग शाब्दिक विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। वास्तव में सामाजिक घटनाओं की प्रकृति भौतिक घटनाओं की प्रकृति से सर्वथा भिन्न होती है। भौतिक घटनाएं प्राय: स्वभावतः मात्रात्मक तथा मूर्त होती है। इसके प्रतिकूल सामाजिक घटनाएं स्वभावतः गुणात्मक तथा अमूर्त होती है। गुणात्मक घटनाएं अपेक्षाकृत अस्पष्ट तथा जटिल होती है। कुछ समय पहले यह मान लिया गया था कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति गुणात्मक होने के कारण उन्हें मात्रात्मक रूप में व्यक्त करना अथवा परिमापन सम्भव नहीं है। अतः सामाजिक अनुसंधान में उपलब्ध सामग्री का मात्रात्मक प्रदर्शन नहीं किया जा सकता। परन्तु आधुनिक काल में यह स्वीकार कर लिया गया है कि सामाजिक गुणात्मक सामग्री का प्रस्तुतीकरण मात्रात्मक रूप में किया जा सकता है।

जब सामाजिक अनुसंधानकर्ता प्राकृतिक सामाजिक घटनाओं के अभिलेखों अथवा एक अनुसंधान परियोजना से गुणात्मक सामग्री के समूह को प्राप्त करता है, वह अन्तर्वस्तु को उपयुक्त श्रेणियों में वर्गीकृत करना चाहेगा ताकि वह इसका एक व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप में वर्णन कर सके। श्रेणियों में वर्गीकरण की इस प्रक्रिया को सामान्यत: "अन्तर्वस्तु विश्लेषण" अथवा "सांकेतीकरण" के नाम से सम्बोधित किया जाता है। पहला पारिभाषिक शब्द अन्तर्वस्तु विश्लेषण का प्रयोग प्रायः स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के सन्दर्भ में किया जाता है। पिछला (सांकेतीकरण) सामान्यत: अनुसंधान द्वारा उत्पन्न सामग्री के विश्लेषण के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है। सांकेतीकरण का प्रयोग विशेष रूप से उस प्रक्रिया को सम्बोधित करने के लिए किया जाता है जिसके द्वारा साक्षात्कारों के उत्तरों को श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके प्रतिकूल "सुव्यवस्थित अन्तर्वस्तु विश्लेषण, अन्तर्वस्तु के कारणात्मक वर्णनों का अधिक परिष्कार करने का प्रयास करता है, जिससे कि पाठकों अथवा श्रोताओं से सम्बन्धित उत्तेजनाओं की प्रकृत्ति तथा सापेक्षिक शक्ति को वैषयिक रूप में प्रदर्शित किया जा सके।"

प्रस्तुत इकाई में मात्रात्मक एवं गुणात्मक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शाब्दिक विश्लेषण, मीडिया विश्लेषण एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण के बारे में जानकारी प्रदान की गयी है जिसके बारे में ज्ञान प्राप्त कर इनका सही उपयोग आप लोग अनुसंधान विश्लेषण में कर सकेगें।

18.2 उद्देश्य (Objectives)

- ✓ शाब्दिक विश्लेषण को जान सकेगें।
- ✓ मीडिया विश्लेषण को जान सकेगें।
- ✓ अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताओं एवं उद्देश्य से अवगत हो सकेगें।
- ✓ अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विषय में जान पाएंगे।
- ✓ बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम को जान सकेगें।
- ✓ अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकारों को जान सकेगें।
- ✓ अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार को समझा सकेगें।
- ✓ अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ को जान सकेगें।

18.3 शाब्दिक विश्लेषण (Textual Analysis)

आज के युग में जहाँ एक तरफ विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों में विभिन्न प्रकार के एकत्रित तथ्यों के विश्लेषण हेतु विभिन्न प्रकार के विश्लेषण प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है वहीं पर शाब्दिक विश्लेषण का भी प्रयोग बहुतायत मात्रा में देखने को मिल रहा है। वास्तव में शाब्दिक विश्लेषण वह प्रविधि है जिसके माध्यम से किसी भी

लेखक द्वारा लिखे गये टेक्स्ट का वास्तविक अर्थ निरूपण उसके द्वारा लिखे गये भाषा में ही करने का प्रयास किया जाता है।

बहुत से अनुसंधानकर्ता समाज विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान का कार्य कर रहे हैं जो वास्तव में विभिन्न प्रकार के भाषा एवं भाषायी सामग्री पर एक मत नहीं हैं। वे अपने-अपने विषयों के आधार पर टेक्स्ट, संवाद एवं शोध साक्षात्कार का विश्लेषण करते हैं। अतः इन सभी प्रकार के सामाजिक विज्ञानों के तथ्यों के विश्लेषण में कोई विरोधाभाष न हो, इसके लिये यदि हम शाब्दिक विश्लेषण का प्रयोग करें तो विश्लेषण आसान व तथ्यानुकूल होगा। वास्तव में शाब्दिक विश्लेषण के आधार पर हम यह पता लगा सकते हैं कि उत्तरदाता अपनी भाषा में क्या कहना चाहता है या किस समस्या के बारे में बताना चाहता है। देखा जाय तो शाब्दिक विश्लेषण किसी व्यक्ति के द्वारा लिखे या दिये गये वक्तव्यों का वास्तविक अर्थ निरूपण है। यदि किसी व्यक्ति के द्वारा कहे या लिखे गये भाषा का वास्तविक अर्थ प्राप्त हो जाये व उसका विश्लेषण सही शब्दों में हो जाये तो अनुसंधान का अनुमान किया जा सकता है। शाब्दिक विश्लेषण को हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विश्लेषण भाषा, हाव-भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्रश्न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी-कभी हम कोई दृश्य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृश्य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं।

उदाहरण स्वरूप मान लिया जाय कि किसी बार में कोई नौजवान पुरूष प्रवेश करना चाहता है और वह गेट पर खड़े दरवान से अन्दर जाने के लिये कहता है और दरवान नौजवान से उसकी उम्र के बारे में पूछता है जिसके उत्तर में नौजवान कहता है कि उसकी उम्र 22 साल है। जब दरवान नौजवान की उम्र के बारे मे। आस्वस्त हो जाता है जाता है तो नौजवान को बार में जाने की अनुमति दे देता है। वास्तव में इस उदाहरण से स्पष्ट है कि बार में जाने के लिये दरवान ने नौजवान से उम्र क्यों पुछा? तो हम यहाँ पर शाब्दिक विश्लेषण के आधार पर देखते हैं कि दरवान ने नौजवान से उम्र इसलिये पूछा क्योंकि बार में वही लोग प्रवेश कर सकते हैं जो वयस्क हो और जिनकी आयु 22 वर्ष से उपर की हो। अत: शाब्दिक विश्लेषण हमें वास्तविक परिस्थितियों के बारे में जानने के लिये बाध्य करती है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शाब्दिक विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियाँ प्रतीकों, भाव-भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों।

18.4 मीडिया विश्लेषण (Media Analysis)

गैर वित्तिय सहायता प्राप्त संगठन एवं अन्य संस्थानों को अपनी स्थिति को समाज में परखने के लिये मीडिया विश्लेषण की आवश्यकता होती है। चूँकि ये संस्थायें समाज से सीधे संपर्क में रहती हैं तो समाज से संबंधित विभिन्न प्रकार के मुद्दों पर इनको राय देनी पड़ती है। अतः किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो के लिये ये संस्थायें मीडिया विश्लेषण के माध्यम का सहारा लेती हैं। वास्तव में मीडिया विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से कोई भी अनुसंधानकर्ता यह पता लगाने में पारंगत हो सकता है कि किस प्रकार के प्रश्नों से मीडिया कवरेज ज्यादा प्राप्त होगी तथा किस प्रकार के संदेश का समाज से जुड़े मुद्दों पर अधिक प्रसंग प्राप्त होगी। मीडिया विश्लेषण के द्वारा यह भी पता लगाया जा सकता है कि वर्तमान में जो मीडिया कवरेज प्राप्त हो रही है वह कितनी है तथा इसको किस प्रकार और बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार की मीडिया विश्लेषण को किसी एक प्रकार के समाचार बुलेटिन या समाचार पत्रों में प्रकाशित खबर के पृष्टांकन एवं खबर की विशेषता से पता लगाया जा सकता है जो एक यह समय सीमा के भीतर होना चाहिए। इस प्रकार का विश्लेषण किसी मुद्दे से संबंधित मीडिया कवरेज को विभिन्न भागों में बांटकर उसकी स्थिति का अध्ययन करता है तथा विभिन्न प्रकार के संचार व्यवहार के अवसरों की खोज करता है जिसके आधार पर विभिन्न प्रकार के संस्थान अपनी कमियों को दूर कर पुन: नयी रणनीतियों का निर्माण करते हैं

जिसके आधार पर मुद्दों को हल करने में आसानी हो सके तथा संगठनों के संदेश को जनमानस तक पहुचाने में आसानी हो सके।

जब कोई संचार करने वाली संस्था या मीडिया विश्लेषक किसी भी मुद्दे पर वृहद् विश्लेषण करना चाहता है तो उसे चाहिए कि वह अग्रलिखित बिन्दुओं को अपने ध्यान में रखे। अगर वह इन बिन्दुओं को ध्यान में रखेगा तो निश्चित ही एक अच्छा मीडिया विश्लेषण कर सकेगा।

एक मीडिया विश्लेषण अग्रलिखित प्रश्नों का उत्तर दे सकती है-

1. सार्वजनिक मुद्दे को मीडिया में प्रस्तुत किस प्रकार किया जाय? (विभिन्न प्रकार के कहानी के तत्वों को बार-बार दोहराकर, विभिन्न प्रकार के सामान्य विश्लेषण का प्रयोग करके, एक समान लोगों का बार-बार नाम लेकर इत्यादि)।
2. नाम से उसको
3. एक विषय शीर्षक पर कौन सा व्यक्ति प्रमुख वक्ता होगा और किस पद सम्बोधित किया जायेगा।
4. क्या वे नीति निर्माता, ऐकेडेमिक विशेषज्ञ होंगें इत्यादि ?
5. प्रायः विभिन्न प्रकार के वक्ता किस प्रकार सम्बोधित करेंगे तथा किन संदर्भों में।
6. किन शीर्षकों को बहस का मुद्दा बनाया जायेगा तथा किन मुद्दों को छोडा जायेगा ?
7. किन क्षेत्रों को लिया जायेगा तथा किन क्षेत्रों को छोडा जायेगा? तथा कौन-कौन से मुद्दों कौन-कौन सी संस्थाये देखेगी?
8. क्या उन मुद्दों हेतु कोई समय सीमा निर्धारित की जायेगी ?
9. क्या जो शीर्षक बहस के लिये चुने गये हैं? वे समाचार के प्रथम पृष्ट पर प्रकाशित होंगे या किसी और पृष्ट पर?
10. कौन से संवाददाता या संस्था इन मुद्दों पर लिखेंगे ?
11. किस प्रकार के संदेश का प्रयोग किया जायेगा ?

एक समसामयिक मीडिया विश्लेषण का त्वरित उदाहरण अमेरिका में कार्य करने वाले श्रमिकों पर किया गया। जिसका उद्देश्य श्रमिकों की कम आय का विश्लेषण करना था। इस उदाहरण का अग्रलिखित लिंक पर खोजा जा सकता है। (Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media.)

18.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा (Definition of Content Analysis)

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं-

बरनाई बेरेलसन (Barnai Berelson) के अनुसार ***"अंतर्वस्तु विश्लेषण सम्प्रेषण के प्रकट अंतर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रविधि है।"***

ए. कपलान (A. Kaplan) के शब्दों में, ***"अन्तर्वस्तु विश्लेषण एक दी हुई बातों के अर्थो की व्यवस्थित तथा मात्रात्मक रूप में व्याख्या करने का प्रयास करता है।"***

एल. एल. जेनिस (L. L. Janis) के अनुसार ***"अन्तर्वस्तु विश्लेषण को संकेत वाहकों के वर्गीकरण हेतु प्रविधि के रूप में उल्लिखित करके परिभाषित किया जा सकता है जो मात्र निर्णय पर निर्भर करता है।"***

विलियम जे. गुडे तथा पाल के. हाट (William J. Goode and Paul K. Hatt) के अनुसार ***"जब गुणात्मक सांकेतीकरण की विभिन्न सम्प्रेषण साधनों, जैसे पत्रिका, समाचार-पत्र, रेडियो प्रोग्राम अथवा इसी तरह की सामग्रियों की अन्तर्वस्तु के सन्दर्भ में प्रयुक्त किया जाता है, यह अन्तर्वस्तु विश्लेषण कहलाता है।"***

पी. वी. यंग (P. V. Young) के अनुसार ***"अन्तर्वस्तु विश्लेषण साक्षात्कारों, प्रश्नावलियों, अनुसूचियों तथा अन्य भाषा विषयक अभिव्यक्तियों, लिखित अथवा मौखिक द्वारा प्राप्त अनुसंधान दत्त की अन्तर्वस्तु के व्यवस्थित, वैषयिक तथा मात्रात्मक वर्णन हेतु अनुसंधान की एक प्रविधि है।"***

उपर्युक्त परिभाषाओं में **बेरेलसन (Berelson)** द्वारा प्रस्तुत की गई परिभाषा सामाजिक अनुसंधान के लेखकों द्वारा सर्वोत्कुष्ट एवं प्रामाणिक मानी जाती है। **डार्विन पी. कार्टराइट (Darwin P. Cartwright)** के अनुसार ***"यदि उदारतापूर्वक इसकी व्याख्या की जाय तो यह एक सन्तोषजनक परिभाषा है।"***

18.5.1 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ (Characteristics of Content Analysis)

उपर्युक्त विवरणों एवं परिभाषाओं के आधार पर अन्तर्वस्तु विश्लेषण की निम्नलिखित विशेषताएँ उल्लेखित की जा सकती है -

1. अन्तर्वस्तु विश्लेषण अनुसंधान की एक प्रविधि है।
2. इसके अन्तर्गत अनुसंधान की गुणात्मक सामग्री को विभिन्न उचित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है।
3. इसके आधार पर गुणात्मक सामग्री का वैषयिक अध्ययन सम्भव होता है।
4. इसके अन्तर्गत सामग्री का व्यवस्थित अध्ययन किया जाता है।
5. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिणित करके परिमापन योग्य बनाया जाता है।
6. इसके अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण गणतथा निर्वचन किया जाता है।

18.5.2 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्देश्य (Objectives of Content Analysis

अन्तर्वस्तु विश्लेषण का प्रधान उद्देश्य गुणात्मक सामग्री को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना है। **डार्विन पी. कार्टराइट (Darwin P. Cartwright)** के अनुसार ***"अन्तर्वस्तु का उद्देश्य अपरिष्कृत घटना को ऐसे डेटा में परिवर्तित करना है जो वैज्ञानिक ढंग में आवश्यक रूप से प्रस्तुत की जा सके ताकि ज्ञान के निकाय की रचना की जा सके।"***

डार्विन पी. कार्टराइट (Darwin P. Cartwright) के ही अनुसार ***"अधिकांशत: अन्तर्वस्तु विश्लेषण का संचालन इस प्रकार करना चाहिए ताकि पहला पुनरोत्पादन योग्य अथवा वैषयिक दत्तों की उत्पत्ति सम्भव हो सके जो दूसरा परिमापन तथा मात्रात्मक क्रिया के प्रति संवेदनशील हों, तीसरा कुछ व्यवस्थित सिद्धांत के लिए महत्वपूर्ण हों तथा चौथा जो विश्लेषण सामग्री के विष्ट समूह के परे सामान्यकृत की जा सके।"*** तथापि विवेचनागत अध्ययन की सुमगता हेतु अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रमुख उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं में प्रस्तुत करके प्रदर्शित किया जा सकता है।

1. **गुणात्मक अध्ययनों को मात्रात्मक रूप में परिवर्तित करना** - सामाजिक घटनाओं की प्रकृति मूलतः गुणात्मक होती है परन्तु गुणात्मक तथ्यों को जब तक मात्रात्मक रूप में प्रदर्शित नहीं किया जाता तब तक न तो उसका वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सकता है और न ही सांख्यिकीय पद्धतियों के द्वारा निर्वचन किया जा सकता है, अतः अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के द्वारा गुणात्मक सामग्री को ऐसी सामग्री में परिवर्तित किया जाता है जिससे उसको वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध करके सारणियों में रखकर प्रस्तुत करने योग्य हो जाता है तथा उनका वैज्ञानिक व सांख्यिकीय विश्लेषण आसानी से हो जाता है।
2. **गुणात्मक अध्ययनों को वैशयिक बनाना-** अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक अध्ययनों को वैषयिक बनाना है। कहना न होगा कि वैषयिकता के अभाव में अनुसंधान की विश्वसनीयता तथा प्रामाणिकता लुप्त हो जाती है।
3. **गुणात्मक तथ्यों को परिमापन के योग्य बनाना** - अन्तर्वस्तु विश्लेषण का तृतीय महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों को इस योग्य बनाना है, जिससे कि उनका परिमापन सरलता से किया जा सके।
4. **सम्प्रेषण के साधनों के अध्ययन को सुगम बनाना -** आजकल सम्प्रेषण के साधन पर्याप्त विकसित हो गये

हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के द्वारा सम्प्रेषण के साधनों के प्रभावों का अध्ययन किया जा सकता है। साथ ही इस प्रविधि के द्वारा सम्प्रेषण के विभिन्न साधनों के प्रभाव का भी तुलनात्मक अध्ययन सम्भव है।

5. **प्रचार के साधनों का विस्तार करना -** वास्तव में इस प्रविधि की सहायता से प्रचार के अच्छे साधनों का विकास किया जा सकता है। प्रचार के साधनों के प्रभाव को जानने के लिए भी अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि अत्यन्त सहायक होती है।
6. **वैज्ञानिक विश्लेषण तथा निर्वचन को सरल बनाना -** अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य गुणात्मक तथ्यों का वैज्ञानिक विश्लेषण तथा निर्वचन सरलता से करना है।
7. **व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना -** अन्तर्वस्तु विश्लेषण का सप्तम महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यवस्थित सिद्धांत का निर्माण करना है।
8. **तथ्यों का सामान्यकरण करना-** अन्तर्वस्तु विश्लेषण का एक मुख्य उद्देश्य तथ्यों का सामान्यकरण करना भी है। इस प्रविधि के द्वारा तथ्यों को इस रूप में प्रस्तुत किया जाता है कि उन्हें सामान्यकरण के कार्य में लाया जा सके तथा उनके आधार पर अध्ययन के क्षेत्र से परे अन्य समूहों के विषय में भी सामान्यकरण किया जा सके।

18.5.3 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग (Uses of Content Analysis)

अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अनेकानेक उपयोगों का एक विस्तृत विवरण स्वयं बेरेलसन ने प्रस्तुत किया है। बेरेलसन ने शाब्दिक सामग्री के अन्तर्वस्तु विश्लेषण के 16 उपयोगों की एक सूची प्रस्तुत की है। यद्यपि इसके विभिन्न वैकल्पिक तरीके हैं, जिसमें क्षेत्रीय कार्य को वर्गीकृत किया जा सकता है। परन्तु बेरेलसन द्वारा प्रस्तुत की गई सूची पूर्णतया सन्तोषजनक है। हम यहाँ प्रयोगों व उपयोगों का वर्णन पारिभाषित शब्दावली के मानकीकरण के हित में प्रस्तुत कर रहे हैं। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के सन्दर्भ ग्रन्थों के प्रकाशनों के सम्बन्ध में विस्तृत अध्ययन के लिए वाचक बेरेलसन की पुस्तक का अनुशीलन करने के लिए प्रोत्साहित किये जा सकते हैं।

बेरेलसन द्वारा प्रतीकात्मक सामग्री के विश्लेषण के तीन विस्तृत उपागमों के नामों का उल्लेख किया गया है। **प्रथम** अनुसंधानकर्ता प्राथमिक रूप से स्वयं अन्तर्वस्तु में अभिरूचि लेता है। **द्वितीय** अन्तर्वस्तु के उत्पादकों अथवा इसके कारणों की विशेषताओं में अभिरूचि का अन्तर्वस्तु की प्रकृति से वैध अनुमानों को बनाने का प्रयत्न करता है। **तृतीय** वह अन्तर्वस्तु की व्याख्या इस प्रकार करता है ताकि इसके श्रोतागण इसके परिणामों की प्रकृति के बारे में कुछ उद्घाटित कर सकें। कोई एकल अध्ययन के अन्तर्गत इन उपागमों में से एक से अधिक उपागमों का वरण किया जा सकता है, अथवा नहीं भी किया जा सकता है। बेरेलसन ने तीन विस्तृत उपागमों के अन्तर्गत अनेक उप-उपागमों का भी उल्लेख किया है। विवेचनागत अध्ययन की सुगमता हेतु इसको निम्नांकित चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है।

यद्यपि अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि का उपयोग प्राथमिक रूप से जनसंचार साधनों के सम्बन्ध में ही किया गया है। यह अन्य सामग्री के सन्दर्भ में भी समान रूप से प्रयोज्य है। उदाहरणार्थ, वैषयिक, प्रलेखों, असंरचित साक्षात्कारों, प्रक्षेपण परीक्षणों, रोगी चिकित्सक अन्तर्क्रियाओं के अभिलेखों इत्यादि के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण का प्रयोग किया जाता है।

18.5.4 बेरेलसन द्वारा किये गये अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उपयोग के विभिन्न उपागम (Various Approaches of using Content Analysis done by Berelson)

क) अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएँ-

1. सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु में पाई जाने वाली प्रवृत्तियों का वर्णन करना।
2. विद्वता के विकास का पता लगाना।
3. सम्प्रेषण अन्तर्वस्तु के अन्तर्गत अन्तर्राष्ट्रीय भिन्नताओं को स्पष्ट करना।
4. सम्प्रेषण के माध्यमों अथवा स्तरों की तुलना करना।
5. सम्प्रेषण मानदण्डों का निर्माण करना तथा प्रयोग में लाना।

6. प्रविधिक अनुसंधान क्रियाओं में सहायता प्रदान करना।
7. प्रचार की प्रविधियों को स्पष्ट करना।
8. सम्प्रेषण सामग्री की पठनीयता का परिमापन करना।
9. शैली सम्बन्धी विशेषताओं का अन्वेषण करना।

ख) अन्तर्वस्तु के उत्पादक अथवा कारण

1. सम्प्रेषकों के अभिप्रायों तथा अन्य विशेषताओं का ज्ञान करना।
2. व्यक्तियों तथा समूहों की मनोवैज्ञानिक स्थिति का निर्धारण करना।
3. प्रचार के अस्तित्व का (प्राथमिक रूप से वैधानिक उद्देश्यों के लिए) पता लगाना।
4. राजनीतिक तथा सैनिक समाचार प्राप्त करना।

ग) अन्तर्वस्तु के श्रोतागण अथवा परिणाम

1. जनसंख्या समूहों की अभिवृत्तियों, अभिरूचियों तथा मूल्यों (सांस्कृतिक प्रतिमानों) को परिवर्तित करना।
2. ध्यान के केन्द्र बिन्दु को स्पष्ट करना।
3. सम्प्रेषण के अभिवृत्यात्मक तथा व्यवहारात्मक प्रत्युत्तरों का वर्णन करना।

18.5.5 अन्तर्वस्तु विश्लेषण के प्रकार (Types of Content Analysis)

प्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता **डी. सी. मैकक्लेलैण्ड (D. C. McClelland)** ने अन्तर्वस्तु विश्लेषण के विभिन्न रूपों का उल्लेख किया है, जो निम्नलिखित हैं

1. **अन्तर्क्रिया (Interaction)**-प्रक्रिया विश्लेषण अन्तर्वस्तु विश्लेषण के इस प्रकार के अन्तर्गत सामाजिक अन्तर्क्रिया के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु को वर्गीकृत एवं श्रेणीबद्ध किया जाता है। इसके अन्तर्गत लघु-समूहों के अनुसंधानों का विश्लेषण किया जाता है।
2. **मूल्य विश्लेषण (Value Analysis) -** इसके अन्तर्गत अन्तर्वस्तु का वर्गीकरण तथा सम्प्रत्ययीकरण, व्यवहार इकाइयों में उल्लेखित विभिन्न मूल्यों के अनुसार करने का प्रयास किया जाता है।
3. **प्रयोजन अनुक्रम विश्लेषण (Purpose Sequence Analysis) -** इसके अन्तर्गत जब विषय अभिप्रेरित स्थितियों के प्रभाव के आधीन होते हैं, तो दत्त में जो परिवर्तन घटित होते हैं, को प्राप्तांक प्रदान करने का प्रयास किया जाता है।
4. **प्रतीकात्मक विश्लेषण (Symbolic Analysis) -** इस तकनीक का प्रयोग विशेष रूप से मनोवैज्ञानिक सामग्री ***"प्रकट सामग्री के पीछे छिपे अर्थ"*** का विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार के अतिरिक्त कुछ अन्य समाज वैज्ञानिक अन्य प्रकार के सामाजिक विश्लेषण की चर्चा प्रस्तुत करते हैं।

18.5.6 अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के आधार (Bases of Classification of Content Analysis)

अन्तर्वस्तु विश्लेषण वर्गीकरण के निम्नलिखित आधार होते हैं -

पहला दो वर्गीय विभाजन इसके अन्तर्गत किसी परिवर्त्य की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति।

दूसरा स्तरीय विभाजन यह वर्गीकरण किसी कम की श्रेणी अथवा उसके स्तर को बताता है, जैसे उच्च, मध्यम तथा निम्न स्तर। इसके अन्तर्गत तीन अथवा तीन से अधिक स्तर भी हो सकते हैं।

18.5.7 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में प्रमुख सोपान (Major Steps in

Creating a Content Analysis Framework)

एक दी गई परियोजना के लिए सन्तोषजनक अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में डार्विन पी. कार्टराइट ने छः प्रमुख सोपानों का उल्लेख किया है जो निम्नलिखित हैं-

1. आवश्यक डेटा का विस्तृत विश्लेषण की रूपरेखा की रचना करने के संदर्भ में यह आवश्यक है कि जो दत्त अनुसंधानकर्ता के सम्पूर्ण अनुसंधान अभिकल्प के लिए अपेक्षित है उसको विशेष रूप से अपने मस्तिष्क में धारण किये रहना चाहिये तथा उसका विष्टि विवरण प्रस्तुत करना चाहिये।
2. सम्पूर्ण अनुसंधान के लिए आवश्यक दत्तों का विष्टि रूप से विवरण दिया जाना चाहिए। ऐसे पूर्ण निर्धारित दत्त विश्लेषण को एक निचित दिशा प्रदान करते हैं तथा आवश्यक तथ्यों के संकलन में सहायता प्रदान करते हैं। सारणीकरण हेतु योजनाओं का निर्माण करना विश्लेषण रूपरेखा की रचना करने के पूर्व सांकेतिक दत्तों के सारणीकरण के लिए स्पष्ट आयोजन कर लेने से बाद में आने वाली कठिनाइयों को परिहार किया जा सकता है। यह निश्चित कर लेने से कि सांकेतिक दत्तों का यांत्रिक प्रक्रियाकरण के लिए कार्डो पर छिद्रित किया जाना है, विश्लेषण प्रक्रिया में सहायता प्राप्त होती है। सारणीकरण हेतु ऐसी योजनाओं के निर्माण से सारणीकरण की क्रिया अत्यन्त सरल हो जाती है। साथ ही साथ वर्गीकरण में भी सहायता प्राप्त होती है।
3. इस सोपान स्तर पर परिवर्त्यो की सूची तैयार करना आधार पर अन्तर्वस्तु का सांकेतीकरण किया जाता है। यदि रूपरेखा का ढाँचा तैयार करना अत्यन्त उपयोगी होगा जिसके अनुसंधान में साक्षात्कारों का विश्लेषण करना है तो इन परिवत्यों का प्रयोग न केवल उत्तरदाताओं के मनोवैज्ञानिक संगठन के बारे में प्रश्नों के उत्तरों की विभिन्न विशेषताओं को वर्गीकृत करने में किया जाएगा, प्रत्युत ऐसे तथ्यों, जैसे उसकी आयु, वैवाहिक परिस्थिति तथा जन- सांख्यिकीय अथवा व्यवहारात्मक विशेषताओं के वर्गीकरण में भी किया जा सकता है।
4. परिवर्त्य की श्रेणियों को भरतना श्रेणियों की अनेक व्यवस्थाएं हैं, जिनका प्रयोग किसी दिए गए परिवर्त्य के संदर्भ में किया जा सकता है। इनका चयन अध्ययन के उद्देश्य तथा किये जाने वाले परिमापों के प्रकार पर निर्भर करता है।
5. सामग्री को इकाईबद्ध करने के लिए कार्य प्रणाली की स्थापना करना अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत तीन प्रकार की इकाइयों ***पहली*** अभिलेख इकाई, ***दूसरी*** संदर्भ इकाई तथा ***तीसरी*** परिगणन इकाई को सम्मिलित किया जाता है तथा अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के निर्माण में इस सोपान के अन्तर्गत अध्ययन में प्रयोग की जाने वाली इकाइयों की कार्यकारी परिभाषा प्रस्तुत करनी चाहिए ताकि विविध सांकेतिक समान सामग्री का प्रयोग समान ढंग से करने में सक्षम तथा समर्थ हो सकें।
6. विश्लेषण रूपरेखा की परीक्षा लेना तथा कार्य - प्रणाली को इकाईबद्ध करना विश्लेषण रूपरेखा तथा इकाईबद्ध कार्यप्रणाली को विकसित कर लेने के उपरान्त, उन्हें प्रारम्भिक रूप में अन्तर्वस्तु के संदर्भ में प्रयुक्त करना चाहिए ताकि यह स्पष्ट रूप से ज्ञात किया जा सके कि किस प्रकार के संसाधनों की आवश्यकता है। ऐसा करने से विश्लेषण कार्य व्यवस्थित हो जाता है।

18.5.8 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण (Creating a Content Analysis Framework)

बेरेल्सन के अनुसार अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित करना चाहिए

1. क्या कहा गया है ?
2. मानदण्ड : वह आधार या पृष्ठभूमि क्या है जिस पर निर्देशन का वर्गीकरण किया गया है ?
3. **विषय-वस्तु (Subject Matter)** - सम्प्रेषण किस विषय में है ?
4. निर्देशन : विषय के प्रति किया गया बर्ताव अनुकूल अथवा प्रतिकूल है ?
5. मूल्य : कौन से उद्देश्य स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से सामने आए है ?

6. ढंग : उद्देश्ययों की प्राप्ति के लिए किन ढंगों अथवा कार्यो का प्रयोग किया गया है ?

7. लक्षण : व्यक्तियों की कौन सी विशेषताएँ स्पष्ट की गई हैं ?

8. कर्त्ता : क्रिया को कौन आरम्भ करता है ?

9. अधिकार : किसके नाम में कथन जारी किये जाते हैं ?

10. उत्पत्ति : सम्प्रेषण की उत्पत्ति का क्या स्थान है ?

11. लक्ष्य : सम्प्रेषण किसक प्रति विष्ट रूप से निर्देषित है ?

12. इसे किस प्रकार कहा गया है ?

13. सम्प्रेषण का स्वरूप : यह कथा, समाचार, टेलीविजन इत्यादि क्या है ?

14. कथन का स्वरूप : विश्लेषण की इकाई का व्याकरणात्मक अथवा वाक्यीय स्वरूप क्या है ?

15. तीव्रता : सम्प्रेषण में कितनी शक्ति अथवा उत्तेजनात्मक मूल्य पाया जाता है ?

16. युक्ति: सम्प्रेषण की सैद्धान्तिक अथवा प्रचारात्मक प्रकृति क्या है ?

17. प्रत्येक परिवर्त्य की श्रेणियों को भरा जाना चाहिए।

18. सामग्री को इकाईबद्ध करने की कार्य रीति की स्थापना की जानी चाहिए।

19. विश्लेषण : रूपरेखा एवं इकाईबद्ध करने की कार्यरीति को प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

18.5.9 अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुख समस्याएँ (Major Problems of Content Analysis)

अन्तर्वस्तु विश्लेषण प्रविधि के अन्तर्गत यद्यपि सामाजिक घटना के गुणात्मक तथ्यों को वैज्ञानिक तथ्यों में रूपान्तरित करने का अथक प्रयास किया जाता है, तथापि इस कार्य को सम्पादित करने में कुछ व्यावहारिक समस्याएँ अवरोध उत्पन्न करती है जो निम्नलिखित है -

1. वैषयिकता की समस्या (The Problem of Subjectivity) - अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत गुणात्मक दत्त सामग्री को वैषयिक दत्तों (Subjective Data) में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु समस्या यह है कि यह दत्त वैषयिक हैं अथवा नहीं, इसकी जाँच किस आधार पर की जाय। वास्तव में सामग्री के परिवर्तन करने के कुछ मौलिक सिद्धांत होने चाहिए। जिसके आधार पर अन्य व्यक्ति भी इसकी जाँच कर सके। उदाहरणस्वरूप, माना कि एक अनुसंधानकर्ता ने एक राजनीतिक नेता द्वारा दिये गये व्याख्यान को दत्त सामग्री के रूप में संकलित किया है जो किसी प्रतिष्ठित समाचार - पत्र में प्रकात हो चुका है अथवा निदर्शन साक्षात्कार में उत्तरदाताओं द्वारा दिये गये प्रत्युत्तरों को संकलित किया गया है। इस विवरणात्मक सामग्री को किस प्रकार विश्लेषित किया जाय कि अन्य अनुसंधानकर्ता भी इसको स्वतन्त्रता से सत्यापित कर सकें। इस समस्या के चार पहलू स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं-

(क) विश्लेषण की रूपरेखा के अन्तर्गत प्रयोग किए जाने वाले परिवर्त्य वैषयिकता के लिए यह आवश्यक है कि स्पष्ट रूप से उन परिवर्त्य का विष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाय जिनके सम्बन्ध में उपलब्ध सामग्री का वर्णन किया जाना है। लेकिन कभी - कभी किसी संक्षिप्त विवरण के बारे में परिवत्यों का विष्टि विवरण जो अनुसंधानकर्ता प्रस्तुत करते हैं उनमें अनुरूपता नहीं रहती है, अथवा किसी विष्ट विवरण के बारे में परिवत्यों का विवरण प्रस्तुत करना कठिन हो जाता है।

(ख) प्रत्येक परिवर्त्य के लिए श्रेणियों परिवर्त्य के अनुरूप श्रेणियों का निर्माण करना आवश्यक होता है, परन्तु कभी - कभी इस सम्बन्ध में कठिनाई आ जाती है। अतः ऐसी स्थिति में प्रत्येक परिवर्त्यो की प्रथम श्रेणी में रखने में असुविधा प्रतीत होती है, परन्तु पुनरोत्पादन योग्य अन्तर्वस्तु विश्लेषण के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक परिवर्त्य के लिए प्रयोग की जाने वाली श्रेणियों का विष्टि विवरण प्रस्तुत किया जाय।

(ग) प्रत्येक श्रेणी हेतु परिचालनात्मक परिभाषा विश्लेषण में सहमति प्राप्त करने के लिए उन नियमों का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए जो यह निर्देश देते हैं कि सामग्री में किन लक्षणों के पाये जाने पर इसे एक विष्टि श्रेणी में स्थान प्रदान किया जाय। इन नियमों से सम्बन्धित वक्तव्यों को ही श्रेणी की परिचालनात्मक परिभाषा के नाम से सम्बोधित करते हैं। परिचालनात्मक परिभाषाओं का निर्माण करते समय सर्वप्रथम प्रयोग में लायी जाने वाली विश्लेषण की इकाइयों का नामांकन आवश्यक होता है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं हो पाता है।

(घ) अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विश्लेषण रूपरेखा का अनुकूलन अत्यधिक तार्किक रूप से निर्मित तथा सैद्धांतिक रूप से सौन्दर्यात्मक विश्लेषण की योजना भी वैषयिक परिणाम प्रदान नहीं कर सकती जब तक कि वह विश्लेषित की जाने वाली सामग्री के लिए उपयुक्त न हो। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत अनुभवात्मक अन्तर्वस्तु से विश्लेषण रूपरेखा का अनुकूलन होना एक महत्वपूर्ण समस्या है।

2. **परिमापन की समस्या (Problem of Measurement) -** अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करने का प्रयास किया जाता है। परन्तु परिमाणन करते समय कई प्रकार की कठिनाइयाँ आती है जिनमें मुख्य ये हैं-

(क) परिगणन की इकाइयाँ प्रथम महत्वपूर्ण समस्या इकाइयों के निर्धारण की है। वास्तव में परिमाणन के लिए इकाई का निर्धारण सम्पूर्ण अन्तर्वस्तु विश्लेषण के उद्देश्यों के आधार पर किया जाना चाहिए परन्तु ऐसा करना एक कठिन कार्य होता है।

(ख) श्रेणीकरण की व्यवस्था परिमाणन के सन्दर्भ में द्वितीय समस्या श्रेणीकरण की व्यवस्था है। वास्तव में परिमाणन न केवल परिगणन की इकाइयों पर ही निर्भर करता है प्रत्युत श्रेणियों के अन्तर्गत क्रमबद्ध सम्बन्धों की उपस्थिति पर भी निर्भर करता है। परन्तु श्रेणीकरण की व्यवस्था करना सहज नहीं है, जैसा कि साधारणतः सोचा जाता है।

(ग) मात्रात्मक सम्बन्धों को निर्धारित करने के लिए प्रमुख कारण परिमाणन के सन्दर्भ में अनुसंधानकर्ता को प्रतीकात्मक गुणात्मक सामग्री को मात्रात्मक सामग्री में परिवर्तित करते समय विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक प्रस्तावों का अनुगमन करना पड़ता है, जैसे उसका मुख्य उद्देश्य कार्यकारण सम्बन्धों को ज्ञात करना होता है। परन्तु गुणात्मक सामग्री का कार्य कारण सम्बन्ध ज्ञात करने में अनेक कठिनाइयाँ आती है।

3. **सार्थकता की समस्य (The Problem of Meaningfulness) -** अनुसंधान में अन्तर्वस्तु विश्लेषण की प्रमुखता के सन्दर्भ में एक गंभीर आलोचना यह की जा सकती है कि इसके द्वारा प्राप्त "उपलब्धियों" के सिद्धान्त अथवा प्रयोग हेतु कोई स्पष्ट सार्थकता नहीं है। इस क्षेत्र में हुए कार्यो का सिंहावलोकन करने पर एक व्यक्ति इस तथ्य से प्रभावित हो सकता है कि अधिकांश अध्ययन परिशुद्ध गणन आकर्षण द्वारा निर्देति किये गये हैं। **डार्विन पी. कार्टराइट (Darwin P. Cartwright)** ने उचित ही लिखा है ***"दुर्भाग्यवश अन्तर्वस्तु प्रयोग विश्लेषण के लिए सिद्धान्त अथवा प्रयोग के सन्दर्भ में बिना किसी सराहनीय योगदान के उपर्यक्त परिगणन की वैषयिकता तथा परिमापन की आवश्यकताओं की पूर्ति करना सम्भव है।"*** सामान्वीकरण की समस्या सिद्धान्ततः अन्तर्वस्तु विश्लेषण अपने परिणामों अथवा उपलब्धियों को वास्तविक रूप में विश्लेषित सामग्री तक ही सीमित करने में रूचि नहीं लेता है। वह अपने विश्लेषण परिणाम को दत्तों के सामान्य समग्र पर सामान्यीकृत करता है। परन्तु एक दत्तों के सीमित समूह के अध्ययन परिणामों तथा उपलब्धियों को अधिक समग्र पर लागू व सामान्यीकृत करना तर्कसंगत तब तक नहीं होगा जब तक निचित स्थितियों की पूर्ति न की जाय तथा निचित कार्य प्रणालियों का अनुगमन न किया जाय। परन्तु सार्वभौमिक प्रस्तावों की स्थापना तभी वैध मानी जायेगी जबकि ये प्रस्ताव समग्र के वास्तविक प्रतिनिधित्वपूर्ण निदन पर अवलम्बित हों। यदि ये प्रस्ताव प्रतिनिधित्वपूर्ण निदन के आधार पर स्थापित नहीं किए गए तो ये सार्वभौमिक रूप से

सामान्यीकृत नहीं किए जायेंगे। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन का चयन करना एक मुख्य समस्या है।

4. **विश्वसनीयता की समस्या (Reliability Problems)** - अन्तर्वस्तु विश्लेषणात्मक अध्ययन के सम्बन्ध में एक मुख्य समस्या विश्वसनीयता की भी है। अन्तर्वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत चूँकि गुणात्मक दत्त सामग्री को मात्रात्मक दत्त सामग्री में परिवर्तित किया जाता है परन्तु यह दत्त सामग्री विश्वसनीय है अथवा नहीं ? इसकी जाँच का आधार क्या है ? इसका समुचित एवं तर्कसंगत उत्तर अन्तर्वस्तु विश्लेषक नहीं पाता है।

अन्तर्वस्तु विश्लेषण की उपर्युक्त समस्याओं के बावजूद भी यह कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि गुणात्मक सामग्री के विश्लेषण के सन्दर्भ में अन्तर्वस्तु विश्लेषण अत्यन्त उपयोगी है। इसके माध्यम से हमें किसी श्रेणी विशेष को प्रदान किए गए विष्टि अर्थ का ज्ञान हो सकता है तथा विभिन्न प्रकार की नई अन्तर्दृष्टियाँ प्राप्त हो सकती है। नई अन्तर्दृष्टियों के सन्दर्भ में **मर्टन (Merton)** ने लिखा है- ***"साक्षात्कार का विश्लेषण सुराग प्रदान करता है"*** तथा बेटेलहिम तथा जैनोविच ने यह उद्गार व्यक्त किया है कि साक्षात्कार अभिलेखों की परीक्षा अभिरूचिपूर्ण प्राकल्पनाओं को सुझाती है जो आंशिक रूप से यह स्पष्ट कर सकती है कि कुछ व्यक्ति सामान्य प्रचलित प्रतिमानों से क्यों विचलित होते हैं।

18.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. सामाजिक घटनाएँ भौतिक घटनाओं की तुलना में ..... होती हैं। (गुणात्मक **या** मात्रात्मक)
2. अन्तर्वस्तु विश्लेषण को ..... सामग्री के व्यवस्थित वर्गीकरण में प्रयुक्त किया जाता है। (गुणात्मक **या** मात्रात्मक)
3. शाब्दिक विश्लेषण के द्वारा हम ..... अर्थ का निरूपण करते हैं। (वास्तविक **या** काल्पनिक)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. शाब्दिक विश्लेषण में शब्दों और उनके अर्थ का गहराई से अध्ययन किया जाता है।
2. मीडिया विश्लेषण में केवल मौखिक सामग्री का अध्ययन किया जाता है।

18.6 सारांश (Summary)

इस इकाई में प्रस्तुत किये तथ्यों के आधार पर आप लोग शाब्दिक, मीडिया एवं अन्तर्वस्तु विश्लेषण के बारे में जानकारी प्राप्त कर लिये होगें। वास्तव में शाब्दिक विश्लेषण को हम आज के समय के परिप्रेक्ष्य में देखे तो हमें ज्ञात होगा कि यह विश्लेषण भाषा, हाव-भाव, प्रतीकों एवं परिस्थितियों का वास्तविक निरूपण करने पर जोर देता है। ऐसा इसलिये क्योंकि व्यक्ति जब किसी प्रश्न का उत्तर देता है तो उस समय उसके चेहरे की प्रतिक्रिया उसके द्वारा दिये गये उत्तर की प्रतिपुष्टि कर देती है। कभी - कभी हम कोई दृश्य देखते हैं तो उसके साथ किसी प्रकार की भाषा नहीं लिखी रहती है फिर भी हम उस दृश्य का वास्तविक अर्थ निकालने का प्रयास करते हैं एवं उसका अपने भाषा में वर्णन भी करने में समर्थ होते हैं। उसी प्रकार आज के समय में मीडिया विश्लेषण ज्वलंत मुद्दों के बारे में हमें ज्ञान प्रदान करता है।

प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु विश्लेषण के बारे में विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया गया जिसमें अन्तर्वस्तु विश्लेषण की परिभाषा प्रस्तुत की गई है। वास्तव में अन्तर्वस्तु विश्लेषण सम्प्रेषण के प्रकट अन्तर्वस्तु के वैषयिक, व्यवस्थित तथा गुणात्मक वर्णन के लिए अनुसंधान की प्रवृधि है। प्रस्तुत इकाई में अन्तर्वस्तु की विशेषताएं, उद्देश्य, उपयोग, प्रकार तथा समस्याओं के बारे में बृहद चर्चा की गई है।

18.7 शब्दावली (Glossary)

- **शाब्दिक विश्लेषण (Textual Analysis)-** शाब्दिक विश्लेषण वह विश्लेषण है जिसके माध्यम से हम वास्तविक परिस्थियों के बारे ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। वह परिस्थितियाँ प्रतीकों, भाव-भंगिमाओं, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हों

- **मीडिया विश्लेषण (Media Analysis)-** किसी भी मुद्दे को किस प्रकार से रखना है? तथा उसको समाज के सामने किस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे ज्यादा से ज्यादा मीडिया कवरेज प्राप्त हो, मीडिया विश्लेषण कहलाता है।
- **अन्तर्वस्तु विश्लेषण (Content Analysis) -** अन्तर्वस्तु विश्लेषण का वास्तव में स्वाभाविक रूप से अभिलेखित की गई गुणात्मक सामग्री के रूप के किया जाता है। यह सामग्री के मात्रात्मिककरण या परिमाणन हेतु विस्तृत प्रविधियों का विकास करता है।

18.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. गुणात्मक 2. गुणात्मक 3. वास्तविक

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2. असत्य

18.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- सिंह, डॉ. एस.डी., वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रकाशन, इन्दौर, पेज 471-482, वर्ष 1995.
- मुखर्जी, आर.एन., सामाजिक अनुसंधान तथा सांख्यिकी।
- मैलिनोवस्की, कल्चर, इन दी इनसाइक्लोपीडिया ऑफ सो" ल साइंसेज।
- गोयल, डॉ० सुनील एवं गोयल, संगीता, 'प्रारम्भिक सामाजिक अनुसंधान, आर. बी. एस. ए. पब्लिशर्स, जयपुर, वर्ष 2005, पेज सं0 54-611

18.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Between A Rock and a Hard Place: An Analysis of Low-Wages Workers in the Media.
- www.google.co.in
- Learning material of Master of Social Work of Indira Gandhi National Open University.

18.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शाब्दिक विश्लेषण पर प्रकाश डालिये एवं इसकी उपयोगिताओं की चर्चा किजिये?
2. मीडिया विश्लेषण किस प्रकार अनुसंधान में सहायक है? बताइए।
3. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की अवधारणा के बारे में लिखिए। तथा अन्तर्वस्तु विश्लेषण की विशेषताएं कौन-कौन सी है? विस्तार से चर्चा किजिये।
4. अन्तर्वस्तु विश्लेषण की रूपरेखा का निर्माण प्रक्रिया का वर्णन किजिये।

इकाई 20- शोध प्रतिवेदन लेखन

(Research Report Writing)

20.1 प्रस्तावना (Introduction)
20.2 उद्देश्य (Objectives)
20.3 शोध प्रतिवेदन लिखना (Writing a Research Report)
20.4 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
20.5 सारांश (Summary)
20.6 शब्दावली (Glossary)
20.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)
20.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
20.9 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
20.10 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

20.1 प्रस्तावना (Introduction)

किसी भी समस्या पर अनुसंधान या शोध करके उसका निष्कर्ष निकाल लेना ही महत्वपूर्ण नहीं होता है बल्कि उसे एक वैज्ञानिक तरीके से प्रतिवेदित करना भी उसका मुख्य उद्देश्य होता है।प्रतिवेदन तैयार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि उसके प्रस्तुतीकरण का स्वरूप इतना विस्तृत न हो कि उसमें अनावश्यक सूचनाएँ भर जाँच और यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इतना संक्षिप्त भी न हो कि उसमें आवश्यक सूचनाएँ आने से रह जाँच।इसलिए यह आवश्यक है कि प्रतिवेदन इस प्रकार का हो कि उसमें संगठित रूप से शोध से सम्बन्धित सभी आवश्यक सूचनाएँ अवश्य आ जाय। किसी शोध के प्रतिवेदन में अन्य बातों के अलावा स्पष्टता, यथार्थता तथा संक्षिप्तता तीन प्रमुख गुण होते हैं। किसी भी मनोवैज्ञानिक शोध को वैज्ञानिक ढंग से प्रतिवेदित करने के लिए अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने जो प्रारूप तैयार किया है वह ठीक है। भारतीय मनोवैज्ञानिक भी इसी प्रारूप का उपयोग शोध प्रतिवेदन लिखने में कर रहे हैं।

20.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे-

- ✓ शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है।
- ✓ शोध प्रतिवेदन से नई दिशा का बोध होगा।
- ✓ विज्ञान के वृहद क्षेत्र से शोध को जोड़ना।
- ✓ शोध की परख होगी।

20.3 शोध प्रतिवेदन लिखना (Writing a Research Report)

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक संघ ने शोध प्रतिवेदन लिखने हेतु एक प्रारूप दिया है जिसका अनुपालन भारतीय मनोवैज्ञानिक भी अपने शोध को उसी ढंग से प्रकाशित **कर** रहे हैं। इस प्रारूप को ध्यान में रखते हुए मनोवैज्ञानिक शोध कों हम निम्नलिखित भागों में बाँटकर प्रस्तुत कर सकते हैं -

1. **शीर्षक पृष्ठ (Title Page) -** मनोवैज्ञानिक शोध का शीर्षक एक पृष्ठ पर अलग से लिखा जाना चाहिए। शीर्षक के नीचे शोधकर्त्ता का नाम तथा उनके संस्था जिससे वे सम्बन्धित है का उल्लेख होना चाहिए।
2. **सारांश (Summary) -** किए गए शोध को समान्यतः 3-8 पंक्तियों में सारांश के रूप में लिखना चाहिए। इसमें शोध के उद्देश्य, कार्यविधि, परिणाम एवं निष्कर्ष को अवश्य लिखना चाहिए। सारांश सुस्पष्ट एवं संक्षिप्त होना चाहिए।
3. **प्रस्तावना या आमुख (Introduction or Preface) -** प्रस्तावना को एक अलग पृष्ठ पर लिखना चाहिए इसका कोई अलग से शीर्षक नहीं होता है। इसमें मुख्य रूप से शोधकर्त्ता शोध समस्या क्या है तथा उसका उद्देश्य क्या है का विशेष रूप से वर्णन करता है। इसमें शोध समस्या की पृष्ठ भूमि तैयार करने के दृष्टि से शोधकर्त्ता सम्बन्धित अध्ययनों का समीक्षात्मक रूप में वर्णन करता है। शोध के उद्देश्य को प्राक्कल्पना के रूप में उल्लेख किया जाता है। शोध में एक या एक से अधिक प्राक्कल्पना हो सकती है।
4. **विधि (Method) -** यह प्रतिवेदन का मुख्य भाग होता है। इस भाग में शोधकर्त्ता विस्तार से शोध या प्रयोग के तरीकों का वर्णन करता है।इस भाग को तीन उपभागों में बाँटकर रिपोर्ट तैयार किया जाता है।

   (क) प्रयोज्य (Usable) - इसमें यह उल्लेख किया जाता है कि अध्ययन में प्रयोज्यों की संख्या क्या है। इनकी पूरी पृष्ठभूमि का उल्लेख करना आवश्यक होता है। प्रयोज्यों का चयन करने का ढ़ंग क्या था।

   (ख) उपकरण (Tools) - जिन उपकरणों या परीक्षणों का उपयोग शोध में हुआ रहता है उनका उल्लेख इसके अर्न्तगत किया जाता है।

   (ग) कार्यविधि प्रयोग या परीक्षण (Procedure Experiment or Test) - कार्यविधि प्रयोग या परीक्षण कैसे

किया गया, प्रयोज्यों को क्या निर्देश दिए, किस प्रकार के शोध अभिकल्प का उपयोग शोध में किया गया इस सबका उल्लेख करना शोध प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय आवश्यक होता है।

5. **परिणाम (Results) -**इस भाग में शोधकर्त्ता यह लिखता है कि प्रयोग या शोध में किस प्रकार के प्रदत्त (तथ्य) प्राप्त हुए। आँकड़ों के विश्लेषण में किस प्रकार की सांख्यिकीय विधियों का उपयोग किया गया। परिणाम के आँकड़ों को ग्राफ, चित्र तथा सारिणी के रूप में भी व्यक्त किया जाता है।परिणाम लिखते समय यह ध्यान देना आवश्यक होता है कि प्राप्त आँकड़ों के आधार पर कसी भी प्रकार के अनुमान तथा निष्कर्ष का उल्लेख नहीं होना चाहिए।
6. **विवेचना (Discussion) -** इस भाग में शोधकर्त्ता समस्या, परिणाम तथा प्राप्त निष्कर्षों का उल्लेख करता है।इसमें शोधकर्त्ता शोध से प्राप्त आँकड़ों की व्याख्या करता है। वर्तमान शोध के परिणाम पहले के शोधों के परिणामों से मेल खाते हैं कि नहीं या उनसे भिन्न हैं। शोध प्राक्कल्पनाओं की पुष्टि हो रही है या नहीं। यदि शोध प्राक्कल्पना की पुष्टि नहीं हो रही है तो उन कारणों पर भी प्रकाश डाला जाता है कि जिससे ऐसा हुआ। विवेचना वाले इस भाग में प्राप्त परिणामों का सामान्यीकरण किन-किन के ऊपर किया जा सकता है, इसमें जो परिसीमाएँ होती हैं उनका भी वर्णन किया जाता है। उन चरों का भी उल्लेख किया जाता है जिनका नियंत्रण नहीं किया जा सका। यदि शोध प्रारूप या कार्य विधि में कोई परिवर्तन किया गया है तो उसका भी उल्लेख इस भाग में किया जाता है। इस भाग में शोध किस विषय से सम्बन्धित है तथा उसके प्राप्त परिणाम या निष्कर्ष क्या है का भी वर्णन किया जाता है।
7. **संदर्भ (References) -** इस भाग में उन सभी अध्ययनों या लेखकों को आकारादि क्रम से लिखा जाता है जिन्हें अध्ययन में शामिल किया गया था। संदर्भ को विशेषकर इस प्रकार लिखते हैं।

Anderson, R.L. and Baneroft, T.A. (752). Statistical Theory in Research. New york:Mc Graw Hill.

Cohen, L. **(755).** Statistical Methods for Social Scientists. An Introduction, N.J.Prentice Hall Inc.

D' Amato, M.R. (770). Experimental Psychology, New York: Mc Graw Hill

8- **परिशिष्ट (Appendix) -** परिशिष्ट इसमें शोधकर्त्ता शोध में प्रयुक्त परीक्षणों, विस्तृत सांख्यिकीय गणना तथा कम्प्यूटर कार्यक्रम आदि को रखता है।

20.4 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. शोध प्रतिवेदन में सबसे पहला भाग .....होता है। (शीर्षक पृष्ठ **या** परिणाम)
2. शोध प्रतिवेदन का सारांश ..... रूप में लिखा जाता है। (संक्षिप्त **या** विस्तृत)
3. शोध प्रतिवेदन में ..... में प्रयोग या परीक्षण के परिणामों की व्याख्या की जाती है। (संदर्भ **या** विवेचना)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. शोध प्रतिवेदन में 'संदर्भ' भाग में उस अध्ययन से संबंधित सभी लेखकों और स्रोतों का उल्लेख किया जाता है।
2. शोध प्रतिवेदन का 'परिणाम' भाग सबसे महत्वपूर्ण होता है और इसमें शोधकर्ता अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करता है।

20.5 सारांश (Summary)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान चुके हैं कि शोध प्रतिवेदन को कैसे और किन चरणों में लिखा जाता है। संक्षेप में उन चरणों का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है।

1- शीर्षक पृष्ठ (Title Page)

अ- शीर्षक (Title)

ब- लेखक या शोधकर्त्ता का नाम एवं संबंधन (Name and Affiliation of The Author or Researcher)

स- सतत् शीर्षक (Continuing Title)

द- आभारोक्ति (Gratitude)

2- सारांश (Summary)

3- आमुख या प्रस्तावना (Introduction or Introduction)

अ- समस्या का उल्लेख (Mention of The Problem)

ब- साख्यिकी समीक्षा (Statistical Review)

स- उद्देश्य एवं प्राक्कल्पना (Objective and Hypothesis)

4- विधि (Method)

अ- प्रयोज्य (Applicability)

ब- परीक्षण या उपकरण (Test or instrument)

स- शोध अभिकल्प (Research Design)

द- कार्यविधि या प्रक्रिया (Methodology or Process)

5- परिणाम (Results)

अ- सारिणी एवं चित्र (Tables and Diagrams)

ब- सांख्यिकी प्रस्तुतीकरण (Statistical Presentation)

6- विवेचना (Discussion)

अ- प्राक्कल्पना की पुष्टि या अपुष्टि (Confirmation or Disconfirmation of The Hypothesis)

ब- व्यावहारिक आशय (Practical Implications)

स- निष्कर्ष (Conclusion)

7- संदर्भ (References)

8- परिशिष्ट (Appendix)

20.6 शब्दावली (Glossary)

- **शोध प्रतिवेदन (Research Report):** किसी समस्या का शोध करके उसके निष्कर्ष क्रियाविधि, उद्देश्य आदि का वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करना ही शोध प्रतिवेदन कहलाता है।
- **सारांश (Research Report):** शोध के उद्देश्य, निष्कर्ष, कार्यविधि, परिणाम आदि को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना।

20.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. शीर्षक पृष्ठ 2. संक्षिप्त 3. विवेचना

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य 2. असत्य

20.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- कपिल, डा. एच. के. (810): अनुसंधान विधियाँ - व्यवहारपरक विज्ञानों में, हर प्रसाद भार्गव, पुस्तक प्रकाशक, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, जयगोपाल (807): मनोविज्ञान एवं शिक्षा में शोध पद्धतियाँ, एच. पी. भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- त्रिपाठी, प्रो. लाल बचन एवं अन्य (808): मनोवैज्ञानिक अनुसंधान पद्धतियाँ, एच. पी. भार्गव बुक हाउस, 4/230, कचहरी घाट, आगरा।
- सिंह, अरूण कुमार (809) : मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल- बनारसी दास, पटना एवं वाराणसी।

20.9 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Goode, W.J. & Hatt, P. K. (781): Methods in Social Research Festinger and Katz: Research method in Behavioural Sciences.
- Kerlinger, F.N. (786): Foundations of Behavioural Research
- Mc Guin, F.J. (790): Experimental Psychology

20.10 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. शोध प्रतिवेदन कैसे लिखा जाता है? उल्लेख कीजिए।
2. शोध प्रतिवेदन लिखने के अनुच्छेदों का सारांश लिखिए।